RAJIV GANDHI UNIVERSITY

सामान्य हिन्दी-दो

बी. ए. (हिन्दी)

(द्वितीय वर्ष)

(पत्र-II)

INSTITUTE OF DISTANCE EDUCATION
Rajiv Gandhi University

www.ide.rgu.ac.in

सामान्य हिन्दी-दो

बी.ए. (हिन्दी)

द्वितीय वर्ष

(पत्र - II)

RAJIV GANDHI UNIVERSITY

Arunachal Pradesh, INDIA - 791 112

BOARD OF STUDIES

Dr. Vinod Kr. Mishra Head Department of Hindi Tripura University, Suryamaninagar Tripura (W)	**Chairman**
Prof. Oken Lego Professor Department of Hindi Rajiv Gandhi University	**Member**
Dr. Amarendra Tripathi Assistant Professor Department of Hindi Hari Singh Gaur University Sagar, Madhya Pradesh	**Member**
Dr. Abhishek Yadav Assistant Professor Department of Hindi Rajiv Gandhi University	**Member**
Prof. H.K. Sharma Head Department of Hindi Rajiv Gandhi University	**Member Secretary**

Authors

Dr Urvija Sharma, Unit (1.0-1.3) © Dr Urvija Sharma, 2019
Dr Seema Sharma, Unit (4.0-4.3) © Reserved, 2019
Dr Ashutosh Kumar Mishra & Dr Amrendra Tripathi, Units (2, 3, 5) © Reserved, 2019
Vikas Publishing House, Units (1.4-1.8, 4.4-4.8) © Reserved, 2019

All rights reserved. No part of this publication which is material protected by this copyright notice may be reproduced or transmitted or utilized or stored in any form or by any means now known or hereinafter invented, electronic, digital or mechanical, including photocopying, scanning, recording or by any information storage or retrieval system, without prior written permission from the Publisher.

"Information contained in this book has been published by Vikas Publishing House Pvt. Ltd. and has been obtained by its Authors from sources believed to be reliable and are correct to the best of their knowledge. However, IDE—Rajiv Gandhi University, the publishers and its Authors shall be in no event be liable for any errors, omissions or damages arising out of use of this information and specifically disclaim any implied warranties or merchantability or fitness for any particular use"

VIKAS®

Vikas® is the registered trademark of Vikas® Publishing House Pvt. Ltd.

VIKAS® PUBLISHING HOUSE PVT LTD
E-28, Sector-8, Noida - 201301 (UP)
Phone: 0120-4078900 • Fax: 0120-4078999
Regd. Office: 7361, Ravindra Mansion, Ram Nagar, New Delhi - 110 055
Website: www.vikaspublishing.com • Email: helpline@vikaspublishing.com

विश्वविद्यालय : एक परिचय

राजीव गांधी विश्वविद्यालय (पूर्व में अरुणाचल विश्वविद्यालय) अरुणाचल प्रदेश के प्रमुख उच्च शिक्षा संस्थानों में से एक है। स्वर्गीय श्रीमती इंदिरा गांधी ने, जो तत्कालीन प्रधानमंत्री थीं, 4 फरवरी, 1984 को रोनो हिल्स पर विश्वविद्यालय की नींव रखी थी। यहीं विश्वविद्यालय का वर्तमान कैंपस विद्यमान है।

आरंभ से ही राजीव गांधी विश्वविद्यालय श्रेष्ठता हासिल करने और उन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रयासरत है जो विश्वविद्यालय अधिनियम में निहित हैं। 28 मार्च, 1985 में विश्वविद्यालय को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सेक्शन 2 (F) के अंतर्गत अकादमिक मान्यता प्रदान की गई।

26 मार्च, 1994 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सेक्शन 12-V के अंतर्गत इसे वित्तीय मान्यता मिली। तब से, राजीव गांधी विश्वविद्यालय (तत्कालीन अरुणाचल विश्वविद्यालय) ने देश के शैक्षिक परिदृश्य में अपना विशिष्ट स्थान बनाया है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा गठित विशेषज्ञों की एक उच्च स्तरीय समिति द्वारा देश के उन विश्वविद्यालयों में राजीव गांधी विश्वविद्यालय को भी चुना गया जिनमें श्रेष्ठता हासिल करने की संभावनाएं व सामर्थ्य है।

9 अप्रैल, 2007 से, विश्वविद्यालय को मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार की एक अधिसूचना के माध्यम से केंद्रीय विश्वविद्यालय का दर्जा दिया गया।

यह विश्वविद्यालय रोनो हिल्स की चोटी पर 302 एकड़ के विहंगम प्राकृतिक अंचल में स्थित है जहां से दिक्रोंग नदी का अद्भुत दृश्य देखने को मिलता है। यह राष्ट्रीय राजमार्ग 52-A से 6.5 कि. मी. और राज्य की राजधानी ईटानगर से 25 कि. मी. की दूरी पर स्थित है। दिक्रोंग पुल के द्वारा कैंपस राष्ट्रीय राजमार्ग से जुड़ा हुआ है।

विश्वविद्यालय के शैक्षिक व शोध कार्यक्रम इस प्रकार तैयार किए गए हैं कि वे राज्य के सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक विकास में सकारात्मक भूमिका निभा सकें। विश्वविद्यालय स्नातक, स्नातकोत्तर, एम. फिल व पी. एच. डी. कार्यक्रम भी संचालित करता है। शिक्षा विभाग बी. एड. का कोर्स भी चलाता है।

इस विश्वविद्यालय से 15 महाविद्यालय संबद्ध हैं। विश्वविद्यालय पड़ोसी राज्यों, विशेषकर असम के छात्रों को भी शैक्षिक सुविधाएं प्रदान कर रहा है। इसके विभिन्न विभागों व इससे जुड़े महाविद्यालयों में छात्रों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है।

यूजीसी व अन्य फंडिंग एजेंसियों की वित्तीय सहायता से संकाय सदस्य भी शोध गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग ले रहे हैं। आरंभ से ही, विभिन्न फंडिंग एजेंसियों द्वारा विश्वविद्यालय के विभिन्न शोध प्रस्तावों को स्वीकृत किया गया है। विभिन्न विभागों ने अनेक कार्यशालाओं, संगोष्ठियों व सम्मेलनों का आयोजन भी किया है। अनेक संकाय सदस्यों ने देश व विदेश में आयोजित सम्मेलनों व संगोष्ठियों में भाग लिया है। देश–विदेश के प्रमुख विद्वानों व विशिष्ट व्यक्तियों ने विश्वविद्यालयों का दौरा किया है और अनेक विषयों पर अपने वक्तव्य भी प्रस्तुत किए हैं।

2000–2001 का अकादमिक वर्ष विश्वविद्यालय के लिए सुदृढ़ीकरण का वर्ष रहा। वार्षिक परीक्षाओं से सेमेस्टर प्रणाली में परिवर्तन व्यवधानविहीन रहा और परिणामतः छात्रों के प्रदर्शन में भी विशेष सुधार देखा गया। बोर्ड ऑफ पोस्ट ग्रेजुएट स्टडीज़ द्वारा बनाए गए विभिन्न पाठ्यक्रमों को लागू किया गया। यूजीसी इंफोनेट कार्यक्रम के तहत ERNET इंडिया द्वारा VSAT सुविधा प्रदान की गई ताकि इंटरनेट एक्सेस प्रदान की जा सके।

मूलभूत संरचनागत सीमाओं के बावजूद विश्वविद्यालय अकादमिक श्रेष्ठता बनाए रखने में सफल रहा है। विश्वविद्यालय अकादमिक कैलेंडर का अनुशासित रूप से पालन करता है। परीक्षाएं समय पर संचालित की जाती हैं और परिणाम भी समय पर घोषित होते हैं। विश्वविद्यालय के छात्रों को न केवल राज्य व केंद्रीय सरकार में नौकरी के अवसर प्राप्त हुए हैं बल्कि वे विभिन्न प्रतिष्ठित संस्थाओं, उद्योगों व संस्थानों में नौकरी के अवसर प्राप्त करने में सफल रहे हैं। अनेक छात्र NET परीक्षाओं में भी सफल हुए हैं।

आरंभ से अब तक विश्वविद्यालय ने शिक्षण, पाठ्यक्रम में नवीन परिवर्तन लाने व संरचनागत विकास में महत्वपूर्ण प्रगति की है।

आईडीई : एक परिचय

हमारे देश में उच्च शिक्षा प्रणाली को सीमित सीटों, सुविधाओं और बुनियादी संसाधनों की कमी के कारण अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। विभिन्न विषयों से जुड़े शिक्षाविद मानते हैं कि शिक्षा की प्रणाली से अधिक महत्वपूर्ण सीखना और जानना है। दूरस्थ शिक्षा प्रणाली इन सभी बुनियादी समस्याओं और समाजिक–आर्थिक बाधाओं को दूर करने का वैकल्पिक माध्यम है। यह प्रणाली ऐसे लाखों लोगों की गुणवत्ता युक्त शिक्षा पाने की मांग की पूर्ति कर रही है, जो अपनी शिक्षा जारी रखना चाहते हैं मगर नियमित रूप महाविद्यालयों में प्रवेश नहीं ले पाते। यह प्रणाली उच्च शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा रखने वाले बेरोजगार व कार्यरत पुरुष और महिलाओं के लिए भी मददगार सिद्ध होती है। दूरस्थ शिक्षा प्रणाली उन लोगों के लिए भी उपयुक्त माध्यम है जो सामाजिक, आर्थिक अथवा अन्य कारणों से शिक्षा और शिक्षण संस्थानों से दूर हो गए या समय नहीं निकाल पाये। हमारा मुख्य उद्देश्य उन लोगों को उच्च शिक्षा की सुविधाएं प्रदान करना है जो मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालयों के नियमित तथा व्यावसायिक शैक्षिक पाठ्यक्रमों में प्रवेश नहीं ले पाते, विशेषकर अरुणाचल प्रदेश के ग्रामीण व भौगोलिक रूप से दूरदराज स्थित क्षेत्रों में व सामान्यतया उत्तर–पूर्वी भारत के दूरस्थ स्थित क्षेत्रों में। सन् 2008 में दूरस्थ शिक्षा केंद्र का नाम परिवर्तित कर 'दूरस्थ शिक्षा संस्थान' (आईडीई) रखा गया।

दूरस्थ शिक्षार्थियों के लिए शिक्षा के अवसरों का विस्तार करने के प्रयास जारी रखते हुए आईडीई ने 2013–14 के शैक्षणिक सत्र में पांच स्नातकोत्तर विषयों (शिक्षा, अंग्रेजी, हिंदी, इतिहास और राजनीति विज्ञान) को शामिल किया है।

दूरस्थ शिक्षा संस्थान में विश्वविद्यालय के पुस्तकालय के पास ही शारीरिक विज्ञान संकाय भवन (पहली मंजिल) का निर्माण किया गया है। विश्वविद्यालय परिसर राष्ट्रीय राजमार्ग 52 ए के एनईआरआईएसटी बिंदु से 6 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। विश्वविद्यालय की बसें एनईआरआईएसटी के लिए नियमित रूप से चलती रहती हैं।

दूरस्थ शिक्षा संस्थान की अन्य विशेषताएं

1. **नियमित माध्यम के समकक्ष**–पात्रता, अर्हताएं, पाठ्यचर्या सामग्री, परीक्षाओं का माध्यम और डिग्री राजीव गांधी विश्वविद्यालय और विश्वविद्यालय के विभागों के समकक्ष हैं।
2. **स्वयं शिक्षण अध्ययन सामग्री (एसआईएसएम)**– छात्रों को संस्थान द्वारा तैयार और दूरस्थ शिक्षा परिषद (डीईसी), नई दिल्ली द्वारा अनुमोदित स्वयं शिक्षण अध्ययन सामग्री प्रदान की जाती है। यह सामग्री प्रवेश के समय आईडीई और अध्ययन केंद्रों में उपलब्ध कराई जाती है। यह सामग्री हिंदी विषय के अलावा सभी विषयों में अंग्रेजी में ही उपलब्ध कराई जाती है।
3. **संपर्क और परामर्श कार्यक्रम (सीसीपी)**– शैक्षिक कार्यक्रम के प्रत्येक पाठ्यक्रम में व्यक्तिगत संपर्क द्वारा लगभग 7–15 दिनों की अवधि का परामर्श शामिल है। बी.ए. पाठ्यक्रमों के लिए सीसीपी अनिवार्य नहीं है। हालांकि व्यावसायिक पाठ्यक्रमों और एम.ए. के लिए सीसीपी में उपस्थिति अनिवार्य होगी।
4. **फील्ड प्रशिक्षण और प्रोजेक्ट**– व्यावसायिक पाठ्क्रमों में फील्ड प्रशिक्षण और संबंधित विषय में प्रोजेक्ट लेखन का आवश्यक प्रावधान होगा।
5. **परीक्षा एवं निर्देश का माध्यम**–परीक्षा और शिक्षा का माध्यम उन विषयों को छोड़कर जिनमें संबंधित भाषा में लिखने की जरूरत हो, अंग्रेजी होगा।
6. **विषय परामर्श संयोजक**– पाठ्य सामग्री को तैयार करने के लिए आईडीई विश्वविद्यालय के अंदर और बाहर विषय समन्वयकों की नियुक्ति करती है। विश्वविद्यालय द्वारा नियुक्त परामर्श समन्वयक पीसीसीपी के अनुदेशों को प्रभावी रूप से लागू करने के लिए विश्वविद्यालय के विभिन्न विभागों से जुड़े रहते हैं। ये परामर्श समन्वयक परामर्श कार्यक्रम के सुचारु रूप से संचालन तथा विद्यार्थियों के असाइन्मेन्ट का मूल्यांकन करने के लिए संबंधित व्यक्तियों से संपर्क कर आवश्यक समन्वय करते हैं। विद्यार्थी भी इन परामर्श समन्वयकों से संपर्क कर अपने विषय से संबंधित परेशानियों और शंकाओं का समाधान प्राप्त कर सकते हैं।

SYLLABI-BOOK MAPPING TABLE

सामान्य हिन्दी-दो

Syllabi	Mapping in Book
इकाई 1 : हिन्दी साहित्य का इतिहास आधुनिककालीन काव्य– भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद तथा स्वातन्त्रयोत्तर कविता : परिचय तथा प्रवृत्तियां	इकाई 1 : हिन्दी साहित्य का इतिहास **(पृष्ठ : 3–44)**
इकाई 2 : कविता (छायावादी कवि) • जयशंकर प्रसाद : पाठ्य कविताएं– अरुण यह मधुमय देश हमारा; हिमाद्रि तुंग श्रृंग से आलोचना– काव्यगत विशेषताएं; प्रसाद–काव्य में जागरण के स्वर • सुमित्रानन्दन पन्त : पाठ्य कविताएं– पर्वत प्रदेश में पावस; अनित्य जग आलोचना– पन्त–काव्य में प्रकृति; छायवादी काव्य भाषा और पन्त • सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला : पाठ्यांश– तोड़ती पत्थर, भारति! जय विजय करे! आलोचना– छायावाद और निराला; निराला काव्य में प्रगति और विद्रोह के स्वर • महादेवी वर्मा : पाठ्यांश– विरह का जलजात जीवन, रूपसि तेरा घन केशपाश आलोचना– विरह वेदना, छायावादी तत्व।	इकाई 2 : छायावादी कवि **(पृष्ठ : 45–102)**
इकाई 3 : कविता (आधुनिक कवि) • नागार्जुन : पाठ्यांश– उनको प्रणाम, अकाल और उसके बाद आलोचना– जनकवि नागार्जुन, काव्यगत चेतना • अज्ञेय : पाठ्य कविताएं– सांप; बावरा अहेरी; छब्बीस जनवरी आलोचना– प्रयोगवाद और अज्ञेय • मुक्तिबोध : मुझे कदम कदम पर आलोचना– मुक्तिबोध की काव्यगत विशेषताएं • सर्वेश्वरदयाल सक्सेना : पाठ्य कविताएं– सुहागिन का गीत; सौन्दर्य बोध आलोचना– सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का काव्य–सौष्ठव	इकाई 3 : आधुनिक कवि **(पृष्ठ : 103–164)**
इकाई 4 : व्यावहारिक हिन्दी पत्र लेखन : प्रभावी पत्र लेखन की विशेषताएं, पत्र लेखन के प्रकार– सरकारी पत्र, अर्द्धसरकारी पत्र, व्यावहारिक पत्र, व्यापारिक पत्र संक्षेपण, पल्लवन एवं टिप्पण	इकाई 4 : व्यावहारिक हिन्दी **(पृष्ठ : 165–213)**
इकाई 5 : अनुवाद अनुवाद : अर्थ एवं स्वरूप, प्रकार, अनुवाद के गुण, अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद पारिभाषिक शब्दावली : अर्थ एवं परिभाषा; पारिभाषिक शब्दावली की विशेषताएं; चुने हुए 150 पारिभाषिक शब्द	इकांई 5 : अनुवाद **(पृष्ठ : 215–238)**

विषय–सूची

परिचय 1

इकाई 1 हिन्दी साहित्य का इतिहास 3–44

1.0 परिचय
1.1 इकाई के उद्देश्य
1.2 हिन्दी साहित्येतिहास के अध्ययन की पूर्वपीठिका
  1.2.1 हिन्दी साहित्येतिहास लेखन परंपरा
  1.2.2 हिन्दी साहित्येतिहास का काल–विभाजन, सीमा निर्धारण एवं नामकरण
1.3 आधुनिककालीन काव्य
  1.3.1 भारतेंदु युग : परिचय तथा प्रवृत्तियां
  1.3.2 द्विवेदी युग : परिचय तथा प्रवृत्तियां
  1.3.3 छायावाद : परिचय तथा प्रवृत्तियां
  1.3.4 प्रगतिवाद : परिचय तथा प्रवृत्तियां
  1.3.5 प्रयोगवाद : परिचय तथा प्रवृत्तियां
  1.3.6 स्वातंत्र्योत्तर कविता : परिचय तथा प्रवृत्तियां
1.4 सारांश
1.5 मुख्य शब्दावली
1.6 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर
1.7 अभ्यास हेतु प्रश्न
1.8 आप ये भी पढ़ सकते हैं

इकाई 2 छायावादी कवि 45–102

2.0 परिचय
2.1 इकाई के उद्देश्य
2.2 जयशंकर प्रसाद : सामान्य परिचय
  2.2.1 जयशंकर प्रसाद : पाठ्यांश – अरुण यह मधुमय देश हमारा, हिमाद्रि तुंग शृंग से
  2.2.2 काव्यगत विशेषताएं
  2.2.3 प्रसाद काव्य में जागरण के स्वर
2.3 सुमित्रानन्दन पन्त : सामान्य परिचय
  2.3.1 सुमित्रानन्दन पन्त : पाठ्यांश – पर्वत प्रदेश में पावस, अनित्य जग
  2.3.2 पन्त काव्य में प्रकृति
  2.3.3 छायावादी काव्य भाषा और पन्त
2.4 सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' : सामान्य परिचय
  2.4.1 सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' : पाठ्यांश – तोड़ती पत्थर, भारति! जय विजय करे!
  2.4.2 छायावाद और निराला
  2.4.3 निराला के काव्य में प्रगति और विद्रोह के स्वर
2.5 महादेवी वर्मा : सामान्य परिचय
  2.5.1 महादेवी वर्मा : पाठ्यांश – विरह का जलजात जीवन, रूपसि तेरा घन केशपाश
  2.5.2 विरह वेदना
  2.5.3 महादेवी वर्मा की कविता में छायावादी तत्त्व
2.6 सारांश
2.7 मुख्य शब्दावली

2.8 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर
2.9 अभ्यास हेतु प्रश्न
2.10 आप ये भी पढ़ सकते हैं

इकाई 3 आधुनिक कवि 103–164

3.0 परिचय
3.1 इकाई के उद्देश्य
3.2 नागार्जुन : सामान्य परिचय
3.2.1 नागार्जुन : पाठ्यांश – उनको प्रणाम, अकाल और उसके बाद
3.2.2 जनकवि नागार्जुन की जनपक्षधरता
3.2.3 काव्यगत चेतना
3.3 अज्ञेय : सामान्य परिचय
3.3.1 अज्ञेय : पाठ्यांश – सांप, बावरा अहेरी, जनवरी छब्बीस
3.3.2 प्रयोगवाद और अज्ञेय
3.4 मुक्तिबोध : सामान्य परिचय
3.4.1 मुक्तिबोध : पाठ्यांश – मुझे कदम-कदम पर
2.4.2 मुक्तिबोध की काव्यगत विशेषताएं
3.5 सर्वेश्वरदयाल सक्सेना : सामान्य परिचय
3.5.1 सर्वेश्वरदयाल सक्सेना : पाठ्यांश – सुहागिन का गीत, सौन्दर्य बोध
3.5.2 सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की काव्यगत विशेषताएं
3.6 सारांश
3.7 मुख्य शब्दावली
3.8 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर
3.9 अभ्यास हेतु प्रश्न
3.10 आप ये भी पढ़ सकते हैं

इकाई 4 व्यावहारिक हिन्दी 165–213

4.0 परिचय
4.1 इकाई के उद्देश्य
4.2 पत्र लेखन
4.2.1 प्रभावी पत्र लेखन की विशेषताएं
4.2.2 पत्र-लेखन के प्रकार
4.3 संक्षेपण, पल्लवन एवं टिप्पण
4.3.1 संक्षेपण
4.3.2 पल्लवन
4.3.3 टिप्पण
4.4 सारांश
4.5 मुख्य शब्दावली
4.6 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर
4.7 अभ्यास हेतु प्रश्न
4.8 आप ये भी पढ़ सकते हैं

इकाई 5 अनुवाद 215–238

5.0 परिचय
5.1 इकाई के उद्देश्य
5.2 अनुवाद : सामान्य परिचय
5.2.1 अनुवाद – अर्थ एवं स्वरूप
5.2.2 अनुवाद के क्षेत्र
5.2.3 अनुवाद के स्वरूप
5.2.4 अनुवाद के प्रकार
5.2.5 अनुवाद के गुण
5.2.6 अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद
5.3 पारिभाषिक शब्दावली : सामान्य परिचय
5.3.1 पारिभाषिक शब्दावली : अर्थ एवं परिभाषा
5.3.2 पारिभाषिक शब्दावली की विशेषताएं
5.3.3 पारिभाषिक शब्दों के प्रकार
5.3.4 चुने हुए 150 पारिभाषिक शब्द
5.4 सारांश
5.5 मुख्य शब्दावली
5.6 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर
5.7 अभ्यास हेतु प्रश्न
5.8 आप ये भी पढ़ सकते हैं

परिचय

टिप्पणी

प्रस्तुत पुस्तक 'सामान्य हिन्दी' विश्वविद्यालय द्वारा निर्धारित बी.ए. हिन्दी (द्वितीय वर्ष) के पाठ्यक्रम के अनुसार लिखी गई है। हिन्दी भाषा समस्त भारत को एकतासूत्र में बांधकर, संपर्क भाषा के रूप में स्थापित होकर सर्वाधिक जनसमुदाय की भाषा का स्थान ग्रहण कर चुकी है। उत्तर भारत के अधिकांश भूभाग की भाषा तो यह है ही भारत के अन्य भागों में भी इसका प्रयोग किया जाता है। हिन्दी साहित्य के इतिहास के अध्ययन से हम हिन्दी के क्रमबद्ध सोपानों से अवगत हो सकते हैं। व्याकरण की दृष्टि से सर्वथा उचित भाषा होने का गौरव भी हिन्दी को प्राप्त है। हिन्दी लेखन की एक प्रमुख विधा काव्य लेखन है।

इस पुस्तक में हिन्दी साहित्य के आरंभ से लेकर आधुनिक युग के कवियों की कविताओं का अध्ययन किया गया है। साथ ही व्यावहारिक हिन्दी व अनुवाद विधा का वर्णन भी इस पुस्तक का प्रमुख बिंदु है। अध्ययन की सुविधा के लिए संपूर्ण पुस्तक को पांच इकाइयों में विभाजित किया गया है। प्रत्येक इकाई के आरंभ में विषय का विश्लेषण करने से पूर्व उसके निहित उद्देश्यों को स्पष्ट किया गया है। इकाई के बीच–बीच में 'अपनी प्रगति जांचिए' के माध्यम से विद्यार्थियों की योग्यता परखने हेतु प्रश्न दिए गए हैं। इन इकाइयों का विवरण इस प्रकार है–

पहली इकाई 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में हिन्दी साहित्य का काल विभाजन, नामकरण एवं भारतेन्दु व द्विवेदी युग, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद तथा स्वातंत्र्योत्तर कविता का परिचय एवं प्रवृत्तियों के संदर्भ में अध्ययन किया गया है।

दूसरी इकाई 'छायावादी कवि' में छायावाद के प्रमुख स्तंभ जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' व महादेवी वर्मा की कविताओं के प्रमुख पाठ्यांशों व काव्यगत विशेषताओं का विशद विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

तीसरी इकाई 'आधुनिक कवि' में नागार्जुन, अज्ञेय, मुक्तिबोध एवं सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की कविताओं का पाठ्यांश और उनकी काव्यगत विशेषताओं का वर्णन किया गया है।

चौथी इकाई 'व्यावहारिक हिन्दी' में पत्र लेखन की विशेषताओं एवं पत्र लेखन के प्रकार, संक्षेपण, पल्लवन एवं टिप्पण के बारे में विस्तार से समझाया गया है।

पांचवीं इकाई 'अनुवाद' में अनुवाद का अर्थ एवं स्वरूप, प्रकार, अनुवाद के गुण तथा पारिभाषिक शब्दावली की विशेषताओं का विशद् वर्णन किया गया है।

प्रस्तुत पुस्तक में हिन्दी साहित्य का इतिहास, कविता, अनुवाद, पारिभाषिक शब्दावली आदि सभी विषयों का सांगोपांग अध्ययन किया गया है। उपरोक्त इकाइयों के अध्ययन से छात्र विषय के सभी पहलुओं से अवगत हो पाएंगे। हमें पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक छात्र–छात्राओं की जिज्ञासा को शांत कर उनका ज्ञानवर्द्धन करेगी।

इकाई 1 हिन्दी साहित्य का इतिहास

इकाई की रूपरेखा

1.0 परिचय
1.1 इकाई के उद्देश्य
1.2 हिन्दी साहित्येतिहास के अध्ययन की पूर्वपीठिका
  1.2.1 हिन्दी साहित्येतिहास लेखन परंपरा
  1.2.2 हिन्दी साहित्येतिहास का काल–विभाजन, सीमा निर्धारण एवं नामकरण
1.3 आधुनिककालीन काव्य
  1.3.1 भारतेंदु युग : परिचय तथा प्रवृत्तियां
  1.3.2 द्विवेदी युग : परिचय तथा प्रवृत्तियां
  1.3.3 छायावाद : परिचय तथा प्रवृत्तियां
  1.3.4 प्रगतिवाद : परिचय तथा प्रवृत्तियां
  1.3.5 प्रयोगवाद : परिचय तथा प्रवृत्तियां
  1.3.6 स्वातंत्र्योत्तर कविता : परिचय तथा प्रवृत्तियां
1.4 सारांश
1.5 मुख्य शब्दावली
1.6 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर
1.7 अभ्यास हेतु प्रश्न
1.8 आप ये भी पढ़ सकते हैं

1.0 परिचय

किसी भी साहित्य का अपना एक 'इतिहास' होता है। अतीत के यथार्थ स्वरूप का अनुशीलन ही इतिहास है। भारत यथार्थ की अपेक्षा आदर्श को अधिक महत्व देता रहा है। अतः इस देश में इतिहास लिखने की प्रवृत्ति कम रही। किंतु किसी भी देश के साहित्य के सम्यक मूल्यांकन में इतिहास की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। दूसरे शब्दों में, इतिहास की जानकारी के बिना साहित्य के क्रमिक विकास को समझा नहीं जा सकता। यह इतिहास ही है जो साहित्य की विभिन्न रचनाओं, परंपराओं और प्रवृत्तियों का विश्लेषण करता है, साथ ही आगे की दिशा निर्देशित करता है। किसी भी साहित्य की प्रेरक शक्ति और बदलती हुई प्रवृत्तियों को समझने में इतिहास की सहायता लेनी पड़ती है।

यह प्रश्न स्वाभाविक है कि 'इतिहास' एवं 'साहित्य के इतिहास' में क्या अंतर है। सामान्य अवधारणा के अनुसार, ''इतिहास वह होता है जिसमें देश की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक स्थिति का वर्णन होता है। यह वर्णन अतीत में घटित घटनाओं से संबद्ध होता है।'' यहां हमारा अभिप्राय 'साहित्य के इतिहास' से है जिसके अंतर्गत साहित्य विशेष का इतिहास प्रस्तुत करते समय भी तत्कालीन समाज की मदद ली जाती है, क्योंकि साहित्य भी समाज का ही प्रतिबिंब है। समाज साहित्य रूपी दर्पण में स्वयं को पहचानता है। इतिहास न केवल अतीत से हमें परिचित कराता है, बल्कि वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में अतीत का मूल्यांकन भी करता है। साहित्य का इतिहास लिखते समय इतिहासकार न केवल

टिप्पणी

सामग्री का संकलन करता है वरन् उसे कालखंडों में विभक्त करके उनका नामकरण भी करता है। विभिन्न पद्धतियों पर विमर्श भी साहित्य के इतिहास लेखन का केंद्रबिंदु होता है। इस क्रम में लेखक को अनेक कठिनाइयों का सामना करना होता है; यथा – साहित्य का आरंभ कब से माना जाए, साहित्य एवं साहित्यकार की प्रवृत्तियों को एक कालखंड में विभक्त करना भी उसका विषय होता है।

हम हिन्दी साहित्य के इतिहास में 'काल–विभाजन व नामकरण' की समस्या पर विचार करेंगे। किसी भी विषयवस्तु का बौद्धिक एवं वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिए उसे किन्हीं काल्पनिक पक्षों, खंडों, वर्गों या तत्वों में विभक्त कर लिया जाता है जिससे कि उसके विभिन्न अवयवों को सम्यक रूप में ग्रहण किया जा सके। ऐसा न केवल सैद्धांतिक क्षेत्र में, अपितु व्यावहारिक क्षेत्र में भी किया जाता है।

जब हम हिन्दी साहित्य को देखते हैं तो पाते हैं कि भारत की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों का हिन्दी साहित्य पर गहरा प्रभाव पड़ा। हिन्दी साहित्य को नई–नई दिशाएं, नए–नए रूप और आयाम प्राप्त हुए। हिन्दी साहित्य में ही नहीं, समूचे भारत की प्रमुख भाषाओं के साहित्य में परिवर्तन और नवीनता के लक्षण 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ही दिखाई देते हैं। आचार्य शुक्ल ने 1900 ई. (1843) से हिन्दी साहित्य का आरंभ माना है।

वास्तव में 'आधुनिक' शब्द सापेक्षिक है। जहां 'आधुनिक' शब्द काल सापेक्षता को व्यक्त करता है वहीं यह नवीनता, वैज्ञानिक दृष्टि, बौद्धिकता और तर्क–वितर्क की प्रवृत्ति का भी सूचक है। आज जीवन और साहित्य में 'आधुनिक' से यही तात्पर्य है। साहित्य के इतिहास– लेखकों ने हिन्दी साहित्य के इतिहास के उस काल को 'आधुनिक' कहा है, जिसमें हमारे देश का संपर्क पश्चिमी सभ्यता, संस्कृति, भाषा, जीवन–पद्धति, राजनीति, शासन–व्यवस्था, विज्ञान से हुआ।

लगभग दो सौ वर्षों के ब्रिटिश शासन ने भारत में परिवर्तन के ऐसे दृश्य उपस्थित कर दिए, जिनकी कल्पना भी नहीं की गई थी। हिन्दी जगत ने पश्चिमी जगत के जीवन मूल्यों वाली सभ्यता–संस्कृति, भाषा और भौतिक विज्ञान की शक्ति को चुनौती के रूप में खड़ा पाया। हिन्दी जगत ने इन नई परिस्थितियों को देखा, समझा, संघर्ष भी किया और उनसे समझौते का मार्ग भी अपनाया। भारतीय चिंतकों एवं साहित्यकारों ने अनेक सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आंदोलनों द्वारा आधुनिक भारत एवं आधुनिक हिन्दी साहित्य के निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

प्रस्तुत इकाई में हिन्दी साहित्य के इतिहास की पूर्वपीठिका, हिन्दी साहित्येतिहास लेखन की परंपरा, हिन्दी साहित्य के इतिहास का काल–विभाजन, सीमा निर्धारण एवं नामकरण तथा आधुनिककालीन काव्य जैसे भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, स्वातंत्र्योत्तर कविता आदि का परिचय एवं प्रवृत्तियों का उल्लेख किया गया है।

टिप्पणी

1.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- हिन्दी साहित्य के इतिहास की पूर्वपीठिका को जान पाएंगे;
- हिन्दी साहित्येतिहास लेखन की परंपरा को समझ पाएंगे;
- हिन्दी साहित्य के काल–विभाजन, सीमा निर्धारण एवं नामकरण की व्याख्या कर पाएंगे;
- आधुनिककालीन काव्य की विशेषताओं से परिचित हो पाएंगे;
- भारतेन्दु युग व द्विवेदी युग का परिचय एवं प्रवृत्तियों को जान पाएंगे;
- छायावाद, प्रगतिवाद एवं प्रयोगवाद का तुलनात्मक अध्ययन कर पाएंगे;
- स्वातंत्र्योत्तर कविता के परिचय एवं प्रवृत्तियों की समीक्षा कर पाएंगे।

1.2 हिन्दी साहित्येतिहास के अध्ययन की पूर्वपीठिका

'इतिहास' संस्कृत भाषा के तीन शब्दों से मिलकर बना है–इति + ह + आस। 'इति' का अर्थ होता है 'ऐसा ही', 'ह' का अर्थ है 'निश्चित रूप से' और 'आस' का अर्थ होता है 'था'। इस प्रकार, इतिहास का शाब्दिक अर्थ हुआ – निश्चित रूप से ऐसा ही हुआ था, अर्थात जो घटनाएं भूतकाल में घटित हुई हैं, उन्हीं के क्रमबद्ध तथा विवेचनात्मक वर्णन को 'इतिहास' कहा जाता है।

व्यापक अर्थ में, इतिहास वह सामाजिक शास्त्र है जो हमें भूतकाल के लोगों के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक जीवन का परिचय कराता है। यह वर्णन क्रमबद्ध वैज्ञानिक विवेचन होता है। वैज्ञानिक दृष्टि से इतिहास में घटनाओं, परिस्थितियों या क्रियाकलापों और रचनाओं की व्याख्या कालक्रमानुसार होती है, किंतु इसका अर्थ यह भी नहीं है कि यदि हम किसी भी विषय की घटनाओं या रचनाओं का विवरण कालक्रमानुसार कर दें तो वह 'इतिहास' की संज्ञा का अधिकारी हो जाएगा। वस्तुतः इतिहास का लक्ष्य घटनाओं या रचनाओं का विवरण प्रस्तुत करना मात्र नहीं होता, अपितु वह उनमें घटित या रचित होने के कारणों एवं आधारभूत तथ्यों की खोज करता है। दूसरे शब्दों में, वह ऐतिहासिक घटनाओं या रचनाओं के उद्गम स्रोतों या प्रेरणास्रोतों की व्याख्या तर्कसम्मत ढंग से करता है। इतिहास का संबंध अतीत की घटनाओं से है, मूलरूप से उन घटनाओं से जो वास्तविक एवं यथार्थ हों। इसमें किसी भी तथ्य, तत्व और प्रवृत्ति का वर्णन, विवेचन और विश्लेषण कालक्रम की दृष्टि से किया जाता है। इतिहास में घटनाएं होती हैं, तथ्य होते हैं, पर यह अपने–आप में इतिहास नहीं है। यह इतिहास का साधन मात्र है। इतिहास में तथ्यों के आधार पर युगविशेष का मूल्यांकन होता है। वस्तुतः इतिहास तथ्य और दृष्टिकोण, अनुसंधान और व्याख्या का सामंजस्य प्रस्तुत करता है। इतिहासकार तथ्यों का संकलन करके अपने तथा युग के दृष्टिकोण के अनुरूप व्याख्या करता है। इस प्रकार, शोध और व्याख्या में क्रिया–प्रतिक्रिया का संबंध रहता है।

टिप्पणी

इतिहास केवल अतीत ही नहीं है, वरन वर्तमान का पुनर्मूल्यांकन भी है। यह भविष्य की कल्पना भी है। इस प्रकार, यह वर्तमान और भविष्य का सेतु भी है। दूसरे शब्दों में, यदि यह कहें कि इतिहास मात्र बीते दिनों का लेखा–जोखा नहीं, अपितु वर्तमान का संवाद भी होता है, इस प्रकार सदैव प्रासंगिकता सिद्ध करता है।

साहित्य का इतिहास

साहित्य के इतिहास में साहित्य की विकासमान परंपरा, उसके उद्भव से आज तक की स्थिति का क्रमबद्ध अध्ययन किया जाता है। इस संदर्भ में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का कथन उल्लेखनीय है – "जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहां की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है, तब यह निश्चय है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ–साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है। आदि से अंत तक इन्हीं चित्तवृत्तियों की परंपरा को परखते हुए साहित्य परंपरा के साथ उनका सामंजस्य दिखाना 'साहित्य का इतिहास' कहलाता है।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ. 10.)

जिस प्रकार इतिहास साहित्य से प्रभावित होता है, ठीक उसी प्रकार साहित्य भी इतिहास से प्रभावित होता है। श्रेष्ठ साहित्य का इतिहास वही है, जिसमें साहित्य के इतिहास को देश के इतिहास का एक अंग–रूप समझकर साहित्य की प्रवृत्तियों तथा अन्य प्रवृत्तियों के साथ संगति बिठाई जाए और बाह्य प्रभावों तथा अन्य प्रेरक शक्तियों के साथ आंतरिक भावों और जीवन–रस का दिग्दर्शन कराया जाए। उसमें कवियों के काल संबंधी विवेचन के साथ–साथ उनके काव्य–सौंदर्य का विश्लेषण भी होना चाहिए।

साहित्य का इतिहास अतीत में लिखे गए साहित्य या साहित्यकार का ब्यौरा मात्र नहीं है। जिस प्रकार इतिहास आज राजाओं के जीवन–चरित्र एवं राजनीतिक घटनाओं का संकलन मात्र नहीं है, उसी प्रकार साहित्य का इतिहास मात्र रचनाओं और रचयिताओं का परिचय–ग्रंथ नहीं है। किसी भी साहित्य के इतिहास को समझने के लिए उससे संबंधित जातीय परंपराओं, राष्ट्रीय और सामाजिक स्थिति एवं सामाजिक परिस्थितियों का विवेचन–विश्लेषण ज़रूरी है। इसका कारण यह है कि किसी भी देश का साहित्य उस देश के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक वातावरण को प्रतिबिंबित करता है। साहित्य की प्रवृत्तियां समाज की प्रवृत्तियों का प्रतिबिंब होती हैं। इस संदर्भ में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मत उल्लेखनीय है – "साहित्य का इतिहास ग्रंथों और ग्रंथकारों के उद्भव और विलय की कहानी नहीं, वह कालस्रोत में बहे बीते हुए जीवंत समाज की विकास कथा है। ग्रंथकार और ग्रंथ उस प्राणधारा की ओर इशारा करते हैं। वे ही मुख्य नहीं हैं, मुख्य है वह प्राणधारा, जो नाना परिस्थितियों से गुजरती हुई आज हमारे भीतर अपने–आप को प्रकाशित कर रही है। साहित्य के इतिहास में हम अपने–आप को पढ़ने का सूत्र पाते हैं।

वस्तुतः साहित्य की प्रगति, परंपरा, निरंतरता और विकास को व्याख्यायित करना ही साहित्य के इतिहास का लक्ष्य है। साहित्येतिहास साहित्य की विकासशील प्रक्रिया का उद्घाटन करता है और इस क्रम में नये और पुराने के संघर्ष को भी रेखांकित करता चलता है। साहित्य के इतिहास लेखन में अतीत को ठीक से परखने और समझने के लिए वर्तमान की सही समझ ज़रूरी है।

टिप्पणी

साहित्य के इतिहास में कृतियों का मूल्यांकन भी होता है। उसके विचार पक्ष और कला पक्ष पर विचार किया जाता है। साहित्य का इतिहास केवल रूप और वस्तु का इतिहास नहीं होता, वह रचना में व्यक्त रचनाकार की सृजनशील चेतना का भी इतिहास होता है। मगर साहित्य के इतिहास में एक ओर जनता की चित्तवृत्ति, परंपरा, नये–पुराने के संघर्ष का मूल्यांकन होता है तो दूसरी ओर, रचना और रचनाकार की सृजनात्मक क्षमता को भी वर्तमान पर कसा जाता है।

साहित्य का इतिहास मानव चिंतनधारा के विकासक्रम को निरूपित करने के साथ–साथ अभिव्यंजना–शिल्प के क्रमिक विकास को भी दर्शाता है। उसमें युगविशेष के व्यक्तित्व का उद्घाटन होता है। जहां एक ओर जातीय जीवन की प्रामाणिक झांकी देखने को मिलती है, वहीं दूसरी ओर साहित्यिक मूल्यों का मूल्यांकन भी होता है। यह एक ऐसी विधा है, जिसमें शोध, इतिहास, समीक्षा सबके तत्व सम्मिलित होते हैं।

साहित्येतिहास लेखन के विविध पक्ष

किसी भी साहित्य का इतिहास लिखते समय इतिहासकार को कई चरणों से गुजरना पड़ता है। इसमें स्रोत–सामगी का संकलन प्रमुख है। तत्पश्चात वह विशिष्ट रचनाकारों और रचनाओं की पहचान करता है। परंपरा के वैज्ञानिक अनुशीलन के उपरांत काल–विभाजन व नामकरण की समस्या पर विचार करता है। इस हेतु वह विभिन्न प्रवृत्तियों का अवलोकन व विश्लेषण करता है। तदुपरांत वह युगविशेष और प्रवृत्ति के अंतर्संबंध का विश्लेषण करते हुए वर्तमान संदर्भ में उनका मूल्यांकन करता है। इस प्रकार उसे निम्न चरणों से गुजरना होता है–

- **सामग्री–संकलन** – किसी भी साहित्य का इतिहास लिखने के लिए सामग्री–संकलन अति आवश्यक है। यह इतिहास लेखन की पूर्व पीठिका के रूप में काम करता है। तथ्य आधारभूत स्रोत के रूप में काम करते हैं। तथ्यों की खोज के क्रम में वह पुराने साहित्य और साहित्यकार संबंधी अनुसंधानों, कृतियों के प्रामाणिक और सुसंगठित संस्करणों, आकार, ग्रंथ सूची, शिष्ट और लोकसाहित्य की समुचित विवरणी और सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों के प्रामाणिक इतिहास–ग्रंथों से गुजरता है।
- **काल–विभाजन और नामकरण**– इतिहास लेखक पूरे इतिहास को विभिन्न कालों और युगों में विभक्त करके काल–विभाजन करता है। यद्यपि काल का प्रवाह अविच्छिन्न है तथा भूत, वर्तमान व भविष्य एक–दूसरे में अनुस्यूत रहते हैं, किंतु काल–विभाजन से तत्कालीन साहित्य व समाज की दशा व दिशा निर्धारित की जा सकती है। काल–विभाजन का लक्ष्य अंततः इतिहास की विभिन्न परिस्थितियों के संदर्भ में उसकी घटनाओं एवं प्रवृत्तियों के विकासक्रम को स्पष्ट करना होता है। साहित्य की अंतर्निहित चेतना के क्रमिक विकास, उसकी परंपराओं के उत्थान–पतन एवं उसकी विभिन्न प्रवृत्तियों के दिशा–परिवर्तन आदि के कालक्रम को स्पष्ट करना ही काल–विभाजन का लक्ष्य होता है।

टिप्पणी

साहित्य का काल–विभाजन करते समय साहित्यिक आधार पर किया काल–विभाजन सर्वश्रेष्ठ होता है। इस संदर्भ में आचार्य नलिन विलोचन शर्मा का कथन दृष्टव्य है– "यदि हम मानते हैं कि मनुष्य के राजनीतिक, सामाजिक, बौद्धिक या भाषा–वैज्ञानिक विकास से संयुक्त रहते हुए साहित्य का स्वतंत्र विकास होता है और दूसरा पहले का निष्क्रिय प्रतिबिंब नहीं है, तो हम अनिवार्यतः इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि साहित्यिक युग विशुद्ध साहित्यिक मानदंड के सहारे निर्धारित होने चाहिए।" (साहित्य का इतिहास दर्शन, आचार्य नलिन विलोचन शर्मा, पृ. 57)

इसी प्रकार डॉ. मैनेजर पांडेय ने कहा है– "साहित्य का इतिहास वर्तमान की चेतना के परिप्रेक्ष्य में ही अतीत की सार्थकता की व्याख्या करके वर्तमान के लिए उसे उपयोगी और प्रासंगिक बनाता है।" (साहित्य और इतिहास दृष्टि, मैनेजर पांडेय, पृ. 1–2)

अतः काल–विभाजन और नामकरण यथासाध्य साहित्यिक आधार पर किया जाना चाहिए, यद्यपि यह साहित्यिक आधार परिवेशगत परिस्थितियों से पूर्णतः असंयुक्त नहीं हो सकता।

1.2.1 हिन्दी साहित्येतिहास लेखन परंपरा

हिन्दी साहित्येतिहास लेखन के लिए रुझान उन्नीसवीं शती के आरंभ से हुआ। यद्यपि इससे पूर्व भी यदा–कदा रचनाकारों के जीवनवृत्त व कृतित्व का परिचय देने की परंपरा रही, किंतु इसे पूरी तरह इतिहास–लेखन की संज्ञा नहीं दी गई। चौरासी वैष्णवन की वार्ता, दो सौ वैष्णवन की वार्ता भक्तमाल, कविमाला, कालिदास–हजारा आदि ऐसे ही ग्रंथ हैं।

यदि हिन्दी साहित्य पर दृष्टि डालें तो हिन्दी साहित्य का सबसे पहला इतिहास एक फ्रांसीसी विद्वान गार्सा द तासी ने *'इस्त्वार द ला लितरेत्युर ऐंदुई ऐ ऐंदुस्तानी'* नामक ग्रंथ लिखा था। उसका पहला भाग सन् 1839 में और दूसरा भाग सन् 1847 में छपा था। इसमें अंग्रेज़ी वर्णक्रम में लगभग सत्तर कवियों और कवयित्रियों का विवरण है (संदर्भ : हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास, बाबू गुलाब राय, पृ.सं. 03)। किंतु इसमें काल–विभाजन, युगीन–प्रवृत्तियों और परंपरा के विवेचन का कोई प्रयास नहीं किया गया है। अतः इसे 'इतिहास' की अपेक्षा 'वृत्त संग्रह' कहना अधिक संगत रहेगा।

इसके पश्चात जो महत्वपूर्ण ग्रंथ निकला वह शिवसिंह सेंगर का 'शिवसिंह सरोज' है। इसका रचनाकाल 1883 है। इसमें कवियों की संख्या में वृद्धि हुई। इसमें लगभग एक हज़ार कवियों की कविताएं सम्मिलित हैं। मूलतः यह एक काव्य संग्रह है, किंतु इसमें अनेक कवि व कविताओं को इकट्ठा करने का महत्वपूर्ण कार्य किया। बाद के कवियों के लिए यह स्रोत का काम करता है। परंतु यह दोनों संग्रह जीवनी रूप में ही रहे। इनमें विभिन्न कालों का विवेचन नहीं था।

जार्ज ग्रियर्सन ने पहली बार *द मार्डन वर्नेक्युलर लिटरेचर ऑफ हिंदुस्तान* में कवियों व लेखकों का कालक्रमानुसार वर्गीकरण किया। साथ ही साथ उनकी प्रवृत्तियों को उद्घाटित करने का प्रयास किया। ग्रियर्सन ने तत्कालीन युग के सांस्कृतिक परिवेश और प्रेरणास्रोतों के उद्घाटन का भी प्रयास किया। वस्तुतः इसे हिन्दी साहित्य का पहला इतिहास ग्रंथ कहा जा सकता है। उन्होंने पथप्रदर्शक की भूमिका का निवर्हन किया।

टिप्पणी

क्रमबद्ध इतिहास के रूप में सबसे पहला ग्रंथ *मिश्रबंधु विनोद* (तीन–भाग) का प्रकाशन 1913 ई. में हुआ एवं चौथा भाग 1934 ई. में प्रकाशित हुआ। इसमें काल–विभाजन के साथ नागरी प्रचारिणी सभा की खोज के फलों का पूर्ण समावेश कर दिया गया। इसमें लगभग पांच हज़ार कवियों का उल्लेख है। यह ग्रंथ सूचनाओं का अपार भंडार है, जो आगामी साहित्यकारों के लिए बहुत उपयोगी रहा। हिन्दी का सर्वाधिक व्यवस्थित इतिहास आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा रचित "हिन्दी साहित्य का इतिहास" है। उन्होंने युगीन परिस्थितियों के संदर्भ में साहित्य के विकास–क्रम की व्याख्या करने का प्रयास किया है। शुक्ल जी ने जनता की चित्तवृत्ति के साथ–साथ साहित्य का संबंध जोड़ते हुए उसके क्रमिक विकास और परिवर्तन का आलेख प्रस्तुत किया है। इसके अतिरिक्त उसमें विशेष कवियों के काव्य–गुणों व उनके महत्व का भी सोदाहरण विवेचन किया है।

श्यामसुंदर दास का *हिन्दी भाषा और साहित्य* भी उल्लेखनीय है। इसमें उन्होंने कवियों के विकास का कलाओं के विकास के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन प्रस्तुत किया है, साथ ही ऐतिहासिक परिस्थितियों पर विशेष ध्यान दिया है। जहां आचार्य शुक्ल ने युगीन परिस्थितियों पर बल दिया, वहीं हजारी प्रसाद द्विवेदी ने परंपरा को इतिहास–लेखन का आधार बनाया। द्विवेदी जी ने परंपरापरक दृष्टिकोण को स्थापित करके हिन्दी साहित्य के अध्येताओं के लिए एक व्यापक और संतुलित इतिहास–दर्शन की भूमिका तैयार की।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के बाद अनेक इतिहास लेखकों का पदार्पण हुआ। इनमें रामकुमार वर्मा, धीरेंद्र वर्मा, डॉ. नगेंद्र, रमाशंकर शुक्ल, डॉ. भगीरथ मिश्र, डॉ. रामबहोरी शुक्ल का नाम उल्लेखनीय है। राम विलास शर्मा की इतिहास दृष्टि उक्त लेखकों से अलग रही है। वह मार्क्सवादी धारा के कवि रहे हैं। उन्होंने हिन्दी भाषा के गठन, निर्माण और विकास का प्रामाणिक विवेचन किया है। हिन्दी भाषा और साहित्य के जातीय स्वरूप की पहचान और विशेषताओं के विकास का प्रश्न उनके इतिहास लेखन में प्रमुख रूप से उभरकर सामने आया है। काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा हिन्दी साहित्य का एक वृहत इतिहास सघन भागों में प्रकाशित हुआ।

अस्तु इतिहास लेखन बहुत लोकप्रिय नहीं रहा, तथापि कई लेखकों ने इस दिशा में गंभीर प्रयास किए। जहां शुक्ल जी ने युगीन परिस्थितियों पर बल दिया, वहीं द्विवेदी जी ने परंपरा पर अपना मूल्यांकन किया। किंतु दोनों ही पूरक रहे। भविष्य के इतिहास लेखक इसका उपयोग कर संतुलित इतिहास लिख सकते हैं। साहित्य के इतिहास में नामों और तिथियों की अपेक्षा प्रवृत्तियों और परिस्थितियों का अध्ययन अधिक आवश्यक है, क्योंकि उनके द्वारा ही विकासक्रम के सोपानों और स्तरों को सुगमता से समझा जा सकता है।

1.2.2 हिन्दी साहित्येतिहास का काल–विभाजन, सीमा निर्धारण एवं नामकरण

इतिहास को स्पष्ट रूप से समझने के लिए काल–विभाजन और नामकरण आवश्यक है। साहित्येतिहास भी इसका अपवाद नहीं है। किसी भी चीज़ का व्यवस्थित अध्ययन करने के लिए यह आवश्यक है। इसके बिना दिशाहीनता की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। वस्तुतः काल–विभाजन से साहित्य के विकास की दिशा, विकास को प्रभावित करने वाले तत्वों,

विभिन्न परिवर्तनों और मोड़ों का पता चलता है। (हिन्दी साहित्य के इतिहास की भूमिका, प्रो. रामसिंह तोमर, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, पृ. 22)

टिप्पणी

काल–विभाजन एवं नामकरण करने की आवश्यकता इस कारण से भी है, क्योंकि साहित्य सतत प्रवाहमान है तथा प्रत्येक समय की परिस्थितियां बदलती रहती हैं, अतः उन परिस्थितियों के अनुसार नामकरण आवश्यक है। इसी क्रम में उस बदलाव को काल में विभक्त किया जाना आवश्यक होता है।

काल–विभाजन एवं नामकरण का आधार

उपर्युक्त पृष्ठों से स्पष्ट है कि साहित्य की अंतर्निहित चेतना के क्रमिक विकास, परंपराओं के उत्थान–पतन और विभिन्न प्रवृत्तियों के उदय को स्पष्ट करना ही काल–विभाजन और नामकरण का उद्देश्य है। साहित्य समाज का ही राष्ट्रांकन है। अतः समाज की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों का साहित्य में आना स्वाभाविक है। साहित्येतिहास का काल–विभाजन एवं नामकरण भी इससे अप्रभावित नहीं रहता है। किंतु यह कहना अत्युक्ति है कि केवल समाज ही साहित्य का आधार है, क्योंकि कवि की कल्पना और प्रतिभा भी कोई चीज़ है। साहित्य अथवा साहित्यकार किसी का अनुचर नहीं है, अतः साहित्य की मूल चेतना अपनी अक्षुण्णता बनाए रहती है। अस्तु साहित्य के इतिहास का युग विभाजन और नामकरण का आधार साहित्यिक प्रवृत्ति और चेतना ही होनी चाहिए।

काल–विभाजन एवं नामकरण हेतु एक निश्चित आधार नहीं है। कभी शासक और शासनकाल को आधार बनाया जाता है, तो कभी किसी साहित्यकार, राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक अथवा साहित्यिक प्रवृत्ति को काल–विभाजन और नामकरण का आधार बनाया जाता है। किंतु यदि हम साहित्य के काल–विभाजन की चर्चा करते हैं तो साहित्यिक प्रवृत्ति या मूल साहित्यिक चेतना ही इसका आधार होनी चाहिए। इसमें विवाद नहीं होता है। इसके लिए आवश्यक है कि किसी एक साहित्यिक प्रवृत्ति की प्रधानता हो, यथा– भक्तिकाल, जिसमें भक्ति की प्रधानता रही, अतः अन्य कोई नाम उपयुक्त ही नहीं रहा। कभी किसी राष्ट्रीय, सांस्कृतिक चेतना का प्रभाव पूरे कालखंड साहित्य पर पड़ता है; जैसे पुनर्जागरण, कभी किसी व्यक्ति विशेष (साहित्यिक या राजनीतिक) का प्रभाव रहता है; जैसे भारतेंदु, द्विवेदी युग आदि।

अतः काल–विभाजन और नामकरण करते समय कई आधार रहते हैं। इसमें एकरूपता का आग्रह ठीक नहीं है। यह विवेकसंगत एवं तर्कसंगत होना चाहिए। उपयुक्त काल–विभाजन वही है जो साहित्य की परंपरा को सही रूप में व्यक्त कर सके। युगों की सीमा का निर्धारण मूल प्रवृत्तियों के शुरू होने और अस्त होने पर आधारित होना चाहिए। जहां से साहित्य की मूल चेतना में परिवर्तन दिखाई दे, वहीं से नए काल का प्रारंभ माना जाएगा।

हिन्दी साहित्य में काल–विभाजन की समस्या

हिन्दी साहित्य में काल–विभाजन के समय अनेक समस्याएं उपस्थित होती हैं। इनमें सर्वप्रथम यह प्रश्न आता है कि हिन्दी साहित्य का आरंभ कब से माना जाए। इस संबंध में सबसे पहला प्रयास करने का श्रेय जार्ज ग्रियर्सन को है। पर जैसा कि उन्होंने स्वयं अपने

ग्रंथ की भूमिका में स्वीकार किया है, उनके सामने अनेक ऐसी कठिनाइयां थीं जिससे वे कालक्रम एवं काल–विभाजन के निर्वाह में पूर्णतः सफल नहीं हो सके। वे लिखते हैं, "सामग्री को यथासंभव कालक्रमानुसार प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। यह सर्वत्र सरल नहीं रहा है, और कतिपय स्थलों पर तो यह असंभव सिद्ध हुआ है। अतएव वे कवि जिनका समय में किसी भी प्रकार स्थिर नहीं कर सका अंतिम अध्याय में वर्णानुक्रम से एक साथ दे दिए गए हैं।"(हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास : किशोरीलाल गुप्त, पृ. 48.)

टिप्पणी

जॉर्ज ग्रियर्सन ने हिन्दी साहित्य का आरंभ सातवीं शती से माना है। परंतु दूसरे इतिहासकार इससे सहमत नहीं हैं। आचार्य शुक्ल का मत है कि पुरानी हिन्दी का जन्म तो सातवीं शती के आस–पास हो गया था तथा उसमें सिद्धों, जैनियों एवं नाथपंथियों ने काव्य भी लिखा था, पर उनके काव्य में अपने–अपने धर्म–संप्रदाय की शिक्षाएं दी गई हैं। उनमें काव्यगुणों का अभाव है। इसलिए आचार्य शुक्ल इन्हें मात्र 'सांप्रदायिक शिक्षा' मानकर इन्हें काव्य के रूप में स्वीकार नहीं करते हैं। इस प्रकार, वे दसवीं शताब्दी से ही काल–विभाजन स्वीकार करते हैं। इस मत के समर्थकों में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी है। डॉ. रामकुमार वर्मा तथा डॉ. नगेंद्र सातवीं शती के समर्थक हैं।

यह विवाद का विषय है कि हिन्दी भाषा और अपभ्रंश का पारस्परिक संबंध क्या है। भाषा वैज्ञानिकों का मत है कि प्राकृत भाषा से अपभ्रंश से आधुनिक भारतीय भाषाओं जिनमें हिन्दी प्रमुख है, का विकास हुआ। इस प्रकार हिन्दी का जन्म अपभ्रंश से हुआ। परंतु दूसरा मत है कि अपभ्रंश हिन्दी का ही एक रूप है। उदाहरण के लिए, आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपभ्रंश को 'प्राकृताभास हिन्दी' माना है, जबकि राहुल सांकृत्यायन ने अपभ्रंश को पुरानी हिन्दी की संज्ञा देते हुए अपभ्रंश के सारे कवियों को हिन्दी के कवियों के रूप में स्वीकार किया है। हिन्दी साहित्य का आरंभ सातवीं शती से मानने पर सरहपाद ही हिन्दी के पहले कवि सिद्ध होते हैं। इस प्रकार विद्वानों के दो वर्ग हैं–

1. एक वर्ग में वे विद्वान हैं जो हिन्दी साहित्य का आरंभ सातवीं शती से मानते हुए हिन्दी और अपभ्रंश को एक ही मानते हैं।
2. दूसरे वर्ग में वे विद्वान हैं जो अपभ्रंश को हिन्दी से अलग मानते हुए, हिन्दी का आरंभ दसवीं शती से मानते हैं।

ध्यातव्य है कि वर्तमान में हिन्दी और अपभ्रंश भाषा के विषय में निश्चित हो चुका है कि ये दोनों भाषाएं एक नहीं हैं। यद्यपि अपभ्रंश हिन्दी सहित उत्तर भारत की कई भाषाओं की जननी है, किंतु अधिकांश विद्वानों का मत है कि दोनों अलग–अलग भाषा हैं। दसवीं से चौदहवीं शताब्दी तक का साहित्य अपभ्रंश से भिन्न भाषा का साहित्य है। वस्तुतः इसमें हिन्दी की आधुनिक बोलियों के पूर्वरूप की झलक मिल जाती है। इसी कारण हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखक दसवीं शताब्दी से हिन्दी साहित्य का आरंभ स्वीकार करते हैं।

काल–विभाजन के प्रयास

इस दिशा में काल–विभाजन का प्रथम प्रयास जॉर्ज ग्रियर्सन को जाता है। तत्पश्चात मिश्रबंधुओं, रामचंद्र शुक्ल, हजारी प्रसाद द्विवेदी तथा गणपति चंद्र गुप्त ने प्रयास किया। सर्वप्रथम ग्रियर्सन द्वारा किए गए काल–विभाजन पर दृष्टि डालेंगे–

टिप्पणी

(1) चारण–काल (2) पंद्रहवीं शती का धार्मिक पुनर्जागरण (3) जायसी की प्रेम कविता (4) ब्रज का कृष्ण–संप्रदाय (5) मुगल दरबार (6) तुलसीदास (7) रीति–काव्य (8) तुलसीदास के अन्य परवर्ती (9) अट्ठारहवीं शताब्दी (10) कंपनी के शासन में हिंदुस्तान (11) महारानी विक्टोरिया के शासन में हिंदुस्तान।

इस प्रकार, उनका ग्रंथ इन ग्यारह कालखंडों में विभक्त है, जो वस्तुतः युग–विशेष के द्योतक कम हैं, अध्यायों के शीर्षक अधिक हैं। इसके अतिरिक्त कालक्रम का प्रवाह भी इसमें अविच्छिन्न रूप से नहीं चलता; यथा, चारण–काल के बाद एकाएक वे पंद्रहवीं शती में पहुंच जाते हैं, पूरी चौदहवीं शताब्दी को वे इतिहास से निकाल देते हैं। कालों का नामकरण भी किसी एक आधार पर नहीं है। कहीं किसी धार्मिक संप्रदाय को इसका आधार बताया गया है तो कहीं किसी शासक–विशेष को और कहीं शताब्दी का ही उल्लेख मात्र है। साथ ही तथ्यों की दृष्टि से इसमें सबसे बड़ी भ्रांति यह है कि सातवीं शती से लेकर तेरहवीं शती तक के समय को इसमें हिन्दी साहित्येतिहास का एक युग माना गया है। अस्तु, ग्रियर्सन का यह प्रयास प्रारंभिक प्रयास मात्र है, जिसमें विभिन्न न्यूनताओं, असंगतियों एवं त्रुटियों का होना स्वाभाविक है।

तत्पश्चात, मिश्रबंधुओं ने 1913 ई. में काल–विभाजन का नया प्रयास, जो प्रत्येक दृष्टि से ग्रियर्सन के प्रयास से अधिक प्रौढ़ और विकसित कहा जा सकता है, उनका विभाजन निम्नवत है–

1. आरंभिक काल	–	1. पूर्वारंभिक काल (600–1343 वि.)
		2. उत्तरांभिक काल (1344–1444 वि.)
2. माध्यमिक काल	–	1. पूर्व माध्यमिक काल (1445–1560 वि.)
		2. प्रौढ़ माध्यमिक काल (1561–1680 वि.)
3. अलंकृत काल	–	1. पूर्वालंकृत काल (1681–1790 वि.)
		2. उत्तरालंकृत काल (1791–1889 वि.)
4. परिवर्तन काल	–	(1890–1925 वि.)
5. वर्तमान काल	–	1926 वि. से अब तक।

मिश्रबंधुओं ने 'मिश्रबंधु विनोद' में काल–विभाजन को व्यवस्थित करने का प्रयत्न किया है। मिश्रबंधुओं ने व्यवस्था के नाम पर हिन्दी के कालखंडों को उपकालखंडों में विभक्त किया है। इससे भ्रम पैदा हो गया है। मध्यकाल को दो भागों में विभक्त करना उचित नहीं है। विभिन्न कालखंडों के नामकरण में भी एक जैसी पद्धति नहीं अपनाई गई है, जहां अन्य नामकरण विकासवादिता के सूचक हैं, वहां 'अलंकार–काल' आंतरिक प्रवृत्ति पर आधारित है। उक्त दोषों के होते हुए भी, मिश्रबंधुओं का प्रयास प्रौढ़ और महत्वपूर्ण है, इसमें कोई संदेह नहीं।

आचार्य शुक्ल ने काल–विभाजन किया, जो निम्न है–

1. आदिकाल (वीरगाथाकाल) संवत् 1050 से 1375
2. पूर्व मध्यकाल (भक्तिकाल) संवत् 1375 से 1800

3. उत्तर मध्यकाल (रीतिकाल) संवत् 1700 से 1900
4. आधुनिक काल (गद्यकाल) संवत् 1900 से 1984

टिप्पणी

आचार्य शुक्ल के काल–विभाजन और मिश्रबंधुओं के काल–विभाजन में कई विशेषताएं सामने आएंगी। इसमें इन्होंने पूर्वारंभिक काल 1050 वि. से माना है। इन्होंने भेदोपभेदों की संख्या को दस से घटाकर चार तक सीमित कर दिया। इससे इनके काल–विभाजन में अधिक सरलता, स्पष्टता एवं सुबोधता आ गई। अपनी इस विशेषता के कारण वह आज तक बहुमान्य एवं बहुप्रचलित हैं। शुक्लोत्तर इतिहासकारों में से अनेक ने आचार्य शुक्ल के काल–विभाजन की तीव्र आलोचना तो की तथा उनके दोषों को भी स्पष्ट किया, किंतु उसे संशोधित करके नवीनता लाने में किसी को भी सफलता नहीं मिल सकी। डॉ. रामकुमार वर्मा का काल–विभाजन उल्लेखनीय है–

1. संधिकाल (750 – 1000 दि.)
2. चारणकाल (1000 – 1375 वि.)
3. भक्तिकाल (1375 – 1700 वि.)
4. रीतिकाल (1700 – 1900 वि.)
5. आधुनिक काल (1900 से अब तक)

डॉ. वर्मा के काल–विभाजन में प्रारंभिक कालों के नामों में परिवर्तन है। यथा संधिकाल एवं चारणकाल, किंतु ये नाम दोषवृद्धि सूचक अधिक प्रतीत होते हैं। 'संधिकाल' उस भ्रांति का रूप है जिसमें हिन्दी साहित्य का आरंभ सातवीं शती से माना गया है, अतः इसे शुक्ल जी के काल–विभाजन का परिष्कृत रूप नहीं माना जा सकता। डॉ. श्यामसुंदर दास ने जो काल–विभाजन किया, वह भी शुक्लानुसार ही है, परंतु आधुनिक काल को 'नवीन विकास का युग' कहा है।

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने शुक्ल जी द्वारा दिए गए 'वीरगाथाकाल' को 'आदिकाल' ही कहा। डॉ. रामबहोरी शुक्ल एवं डॉ. भगीरथ प्रसाद मिश्र का 'हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास' ग्रंथ भी प्रकाश में आया है। आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने अपने 'हिन्दी–साहित्य के अतीत' में भी रीतिकाल के नामकरण एवं अंतर्विभाजन के क्षेत्र में नया प्रयास करते हुए भी शेष बातों में पूर्ववर्ती परंपरा का निर्वाह किया है। राहुल सांकृत्यायन ने आदिकाल को 'सिद्ध सामंत युग' की संज्ञा दी।

अतः स्पष्ट है काल–विभाजन के इन सभी प्रयत्नों में आचार्य शुक्ल और हजारीप्रसाद द्विवेदी का मत सर्वाधिक मान्य है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने प्रवृत्तियों को आधार बनाकर कालों का सुव्यवस्थित विभाजन किया है। डॉ. धीरेंद्र वर्मा तथा अन्य सहयोगियों द्वारा संपादित भारतीय हिन्दी परिषद के इतिहास में केवल तीन युगों की कल्पना की गई है– आदिकाल, मध्यकाल, आधुनिक काल। उनका मानना है कि मध्यकालीन चेतना एक ही रही है। संतकाव्य, प्रेमाख्यानक काव्य, रामकाव्य, कृष्णकाव्य, वीरकाव्य, रीतिकाव्य की धाराएं पूरे मध्यकाल में प्रवाहित होती रहीं। किंतु यह पूर्णतः उचित नहीं है, यह है कि सत्रहवीं शताब्दी के आते–आते मुख्य प्रवृत्ति बदल गई थी। भक्ति के स्थान पर अलंकरण और शृंगार विलास की प्रधानता हो गई। काव्य लिखने का ढंग बदल गया था। इससे काव्य की चेतना और

टिप्पणी

काव्य के रूप में भी स्पष्ट अंतर आ गया। अतः मध्यकाल की प्रवृत्तियों के आधार पर दो कालों में विभाजित करना ज़रूरी हो गया। इसी प्रकार आधुनिक काल का प्रारंभ उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से माना जाता है। सन् 1857 की क्रांति मध्य युग की समाप्ति, पश्चिमी ज्ञान–विज्ञान एवं जीवन–दर्शन का प्रभाव के फलस्वरूप आधुनिक युग का प्रारंभ हुआ। इसमें भी प्रवृत्तियों में परिवर्तन दिखाई दिया। कभी छायावाद, कभी प्रगतिवाद तो कभी प्रयोगवाद, निरंतर साहित्य की धारा बदलती रही। तदनुसार काल–विभाजन किया गया। हिन्दी साहित्य के काल–विभाजन को मुख्यतः निम्न शीर्षकों में विभक्त किया जा सकता है–

1. आदिकाल – 10वीं शती से 14वीं शती तक
2. पूर्वमध्यकाल – 14वीं शती से 17वीं शती तक
3. उत्तरमध्यकाल – 17वीं शती से 19वीं शती तक
4. आधुनिक काल – 19वीं शती से अब तक

यही काल–विभाजन हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों के बीच मान्य है।

1.3 आधुनिककालीन काव्य

आधुनिक काल को शुक्ल जी ने 'गद्यकाल' की संज्ञा दी है, किंतु इस काल में आधुनिक हिन्दी कविता बहुमुखी होकर विकसित हुई और इसी काल के द्वितीय चरण में आकर कविता में भाषाई क्रांति आई। अब कविता खड़ी बोली हिन्दी में रची जाने लगी। इस प्रकार हिन्दी में पहली बार आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास गद्यात्मक और पद्यात्मक दो प्रकार से हुआ।

यहां आधुनिक काल के 'आधुनिक' शब्द को लेकर प्रश्न उठना स्वाभाविक है। साहित्य के संदर्भ में तथा इतिहास के संदर्भ में इसे दो अर्थों में समझा जा सकता है। एक तो आदिकाल तथा मध्यकाल से भिन्न नवीन इहलौकिक दृष्टि की सूचना देने वाली सभी गतिविधियों के परिप्रेक्ष्य में और दूसरे लौकिक, सामाजिक एवं सांसारिक दृष्टिकोण के बदलते, संवरते परिप्रेक्ष्य में। रीतिकाल में श्रृंगारिकता, ऊहात्मकता, रूढ़िवादिता तथा शास्त्रीयता से समृद्ध एक विशेष प्रकार के साहित्य ने एकरसता और अरुचि पैदा कर दी थी। तत्पश्चात नवीन ऐतिहासिक प्रक्रिया प्रारंभ हुई और आधुनिक गत्यात्मकता का संचार होने लगा। यह आधुनिक तथा नवीन दृष्टिकोण कला और साहित्य में भी इसीलिए अभिव्यक्त हुआ क्योंकि इस युग में सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश में इसका प्रादुर्भाव हो रहा था।

अपनी प्रगति जांचिए

1. जॉर्ज ग्रियर्सन ने हिन्दी साहित्य का आरंभ कब से माना है?
2. राहुल सांकृत्यायन ने आदिकाल को किसकी संज्ञा दी है?
3. सही–गलत बताइए–
   (क) आधुनिक काल का प्रारंभ अट्ठारहवीं शताब्दी के मध्य से माना जाता है।
   (ख) श्यामसुंदर दास ने आधुनिक काल को 'नवीन विकास का युग' कहा है।

रीतिकाल के उत्कर्ष के बाद जिस नए युग का आगमन हो रहा था, उसके संकेत अंग्रेज़ों की नई आर्थिक नीति, औद्योगिक क्रांति, संचार व्यवस्था तथा मुद्रणालयों के प्रचार–प्रसार से मिलने लगते हैं। एकरसता और स्थिरता से निकलकर देश अब गत्यात्मकता का अनुभव करने लगा था। परंपराएं टूट रही थीं, रूढ़ियों और पाखंडों का विरोध हो रहा था। सामाजिक जीवन शैली में नवीनता दिखाई दे रही थी। इन बदलती परिस्थितियों ने ही पुनर्जागरण को जन्म दिया।

टिप्पणी

धार्मिक दृष्टि से भी परिवर्तन हो रहा था। अंग्रेज़ों के आक्रामक रुख की परिभाषा बदल रही थी, धर्म इहलौकिक आकांक्षाओं का वाहक बन गया था। लोगों का दृष्टिकोण वैज्ञानिक एवं तार्किक होने लगा। धर्मसुधारकों ने भी धर्मशास्त्रों की शरण ग्रहण की। दयानंद सरस्वती एवं राममोहन राय जैसे समाजसुधारकों ने तर्क और प्रमाण के आधार पर समाज सुधार कर कुरीतियों के निवारण का प्रयास किया। परिणामतः देशवासियों में आत्मसम्मान एवं आत्मविश्वास जागा। इसी चेतना ने पश्चिमी चुनौती का सामना करने और स्वतंत्रता हासिल करने की मांग को स्वर दिया। अतः धर्मसुधार और राष्ट्रीयता की दूरी कम होने लगी। पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली का भी प्रभाव पड़ा।

अतः नए अर्थतंत्र, बदलती शिक्षा–प्रणाली तथा प्रचार–प्रसार पाते संचार माध्यमों से आधुनिकीकरण का प्रादुर्भाव हुआ। आधुनिकीकरण की इस दृष्टि में वैज्ञानिकता थी, लोकसम्पृक्ति थी और तर्कसंगत व्यवहार था। परंतु आधुनिकता के इस प्रभाव–प्रसार का तात्पर्य यह नहीं कि भारतीयों ने पश्चिमीकरण की प्रक्रिया का अनुकरण किया। पौराणिक–ऐतिहासिक व्याख्यानों के साथ–साथ समसामयिक चिंतकों, विचारकों, दार्शनिकों एवं समाज–सुधारकों की वैचारिक पृष्ठभूमि के परिप्रेक्ष्य में भी साहित्य को समाज से जोड़ा। छूआछूत, जाति प्रथा तथा स्त्री–पुरुष में भेदभाव का विरोध, समानता, स्वतंत्रता, राष्ट्रीय चेतना, वैज्ञानिकता का ग्रहण तथा नवीन मानवतावाद के आविर्भाव का समर्थन आदि प्रसंगों से आधुनिक युग की इस पृष्ठभूमि को समझा जा सकता है। इस युग में बहुत से अंतर्विरोधों के बावजूद वैचारिक मान्यताओं के स्रोतों ने जनसामान्य को एक बौद्धिक एवं तार्किक आधार प्रदान किया।

हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग का प्रारंभ कब से माना जाए इस विषय में विद्वानों के भिन्न–भिन्न मत हैं। सामान्यतया इसका प्रारंभ संवत 1900 अर्थात 1843 ई. से माना जाता है। कुछ विद्वानों ने 1857 से नवीन सामाजिक–राजनीतिक चेतना के प्रादुर्भाव का संदर्भ जोड़ते हुए यहीं से आधुनिक काल का प्रारंभ माना। इस संदर्भ में डॉ. नगेन्द्र का मत विचारणीय है– "सामान्यतया रीतिकाल के अंत (1843) से आधुनिक काल का आरंभ मानने की परंपरा रही है, नवीन सामाजिक–राजनीतिक चेतना के संवहन के फलस्वरूप सन् 1857 को भी यह गौरव दिया जाता है, किंतु साहित्य–क्षेत्र में नई विचारधारा का प्रवेश वस्तुतः भारतेंदु के रचनाकाल से हुआ। इसके पूर्ववर्ती कालखंड की गणना आधुनिक काल के अंतर्गत तो होगी, किंतु उसे भारतेंदु युग की पूर्वपीठिका के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ. नगेंद्र, पृ. 437.)

1.3.1 भारतेंदु युग : परिचय तथा प्रवृत्तियां

रीतिकाल की श्रृंगारिक कविता के बाद हिन्दी साहित्य में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ। साहित्य में ब्रजभाषा का स्थान खड़ी बोली ने ले लिया। भारतेंदु युग की परिस्थितियां लगभग वही हैं, जो आधुनिक युग की रही हैं। हिन्दी कविता का वर्तमान युग भारतेंदु युग से ही प्रारंभ होता है। भारतेंदु हरिश्चंद्र के आगमन से हिन्दी भाषा और साहित्य को एक नई राह मिली। भाषा का शिष्ट और सामान्य रूप लाने का श्रेय भारतेंदु को ही है। अब तक भक्ति व श्रृंगार संबंधी रचनाएं हो रही थीं। भारतेंदु ने हिन्दी साहित्य को जन जीवन से जोड़ने के लिए

तत्कालीन परिस्थितियों के अनुकूल नए–नए विषयों को साहित्य में स्थान दिया। भारतेंदु ने भाषा की शक्ति को पहचाना और सबल शब्दों में घोषणा की– निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।

टिप्पणी

उस समय की राष्ट्रीयता में अंग्रेज़ी शासन की सुव्यवस्था पर साधुवाद की भावना थी, साथ ही उनकी शोषक नीति के विरुद्ध विद्रोह का भाव भी था। धीरे–धीरे राजनीति और समाज सुधार संबंधी भावों का प्रवेश साहित्य में हुआ तथा भारतेंदु की कविता में राष्ट्रीय भाव झंकृत हो उठे।

काव्य में परिवर्तन तो हुआ, किंतु काव्य की भाषा ब्रजभाषा ही बनी रही। जबकि गद्य खड़ी बोली में ही रचित हुआ। भारतेंदु युगीन पद्य का विकास भी भारतेंदु हरिश्चंद्र से प्रारंभ होता है।

पद्य साहित्य

भारतेंदु युग परिवर्तन का युग था। यह एक नई शुरुआत थी। इसमें नवीन विचारों का समावेश कविता में हुआ। इसके प्रणेता भारतेंदु हरिश्चंद्र थे। उनमें कविता करने की जन्मजात प्रतिभा थी। स्वाध्याय से उन्होंने अनेक भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। साथ ही इन भाषाओं का गहन अध्ययन भी किया। इन्होंने अनेक गद्य विधाओं को प्रश्रय दिया और काव्य ग्रंथों में 48 प्रबंध काव्य, 21 काव्य ग्रंथ तथा कुल 238 ग्रंथों की रचना की। उनकी प्रमुख कृतियां हैं– भक्त सर्वस्व, प्रेममालिका, फूलों का गुच्छा, प्रेम सरोवर, प्रेमाश्रुवर्णन, प्रेम फुलवारी, प्रेम प्रलाप, प्रेम माधुरी, कृष्ण चरित आदि। इसके अतिरिक्त प्रबंध काव्यों में– भारत भिक्षा, भारत वीरत्व, 'विजयनी विजय पताका', 'विजय वल्लरी' प्रमुख हैं। भक्ति काव्य में हास्य व्यंग्य में– बकरी विलाप, बंदर सभा, नए ज़माने की मुकरी, उर्दू का स्यापा, होली आदि प्रमुख हैं।

बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन– ये प्रकृति प्रेमी कवि थे। यही कारण है कि इन्होंने अपना नाम 'प्रेमघन' रखा। इन्होंने 'आनंद कादंबिनी' तथा 'नागरी नीरद' पत्रिकाओं का प्रकाशन किया। साथ ही 'संदर्भ सभा' व 'नागरी नीरद' की स्थापना कर समाज सुधार का कार्य किया। इनकी प्रमुख रचनाएं हैं– मंगलाशा, हार्दिक हर्षादर्श, पितर प्रलाप, कलिकाल तर्पण तथा सौभाग्य समागम आदि।

प्रतापनारायण मिश्र– ये भी भारतेंदु युग के प्रधान कवि थे। भारतेंदु हरिश्चंद्र की प्रशंसा से उत्साहित होकर ये साहित्य सेवा में जुट गए। इन्होंने 'ब्राह्मण' नामक मासिक पत्र निकाला। इनकी प्रमुख रचनाएं हैं– प्रेमपुष्पावली, मन की लहर, शृंगार विलास, दंगल खंड, लोकोक्ति शतः आदि। इन्होंने समाज में व्याप्त बुराइयों के विरुद्ध आवाज उठाई तथा प्राचीन गौरव का बखान कर देशभक्ति पूर्ण रचनाएं कीं।

राधाचरण गोस्वामी– भारतेंदु से प्रेरणा पाकर यह भी साहित्य–सेवा में जुट गए तथा 'भारतेंदु' नामक पत्र निकाला। इन्होंने राजभक्ति से संबंधित काव्य रचनाएं कीं। नवचेतना फैलाने के लिए अतीत का गौरवगान भी किया। इनकी रचनाओं में नवभक्तमाल, दामिनी इतिका, इश्क चमन, प्रेम बगीची, भारत संगीत, विधवा विलाप, यमलोक की यात्रा आदि प्रमुख हैं।

टिप्पणी

अम्बिकादत्त व्यास– काशी निवासी सुकवि अम्बिकादत्त व्यास ने बतौर 'पीयूष–प्रवाह' संपादक अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। पावस पचासा, सुकवि–सतसई, हो हो होरी और बिहारी–विहार अम्बिकादत्त व्यास की उल्लेखनीय कृतियां हैं। 'कंस–वध' नामक प्रबंध काव्य का सृजन आपने आरंभ किया, लेकिन यह पूर्ण न हो सका। तीन सर्ग ही लिखे जा सके। अपने 'भारत–सौभाग्य' और 'गोसंकट' नामक नाटकों में भी इन्होंने गेय पदों का समावेश किया है।

राधाकृष्ण दास– राधाकृष्ण दास ने भारतेंदु के काम को ही आगे बढ़ाया। इन्होंने हिन्दी को गौरवपूर्ण स्थान दिलाने का भरसक प्रयास किया। इनकी रचनाओं में उन्हीं विषयों को स्थान मिला जिनका प्रणयन भारतेंदु ने किया था। इनकी प्रमुख रचनाएं हैं– विजयिनी विलाप, पृथ्वीराज प्रयाण, भारत–बारहमासा, देश–दशा, रामजानकी, रहिमन विलास, विनय, जुबिली आदि।

उक्त के अतिरिक्त ठा. जगमोहन सिंह, लाला सीताराम, मिश्रबंधु, जगन्नाथदास रत्नाकर, देवीप्रसाद पूर्ण, लाला भगवानदीन, रामचरित उपाध्याय, श्रीधर पाठक, अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध, सत्यनारायण कविरत्न आदि भी भारतेंदु मंडल के प्रधान कवि थे। इस प्रकार तत्कालीन सभी कवियों ने जनजागरण के लिए काव्य–रचनाएं की। कवियों का मुख्य ध्येय समाज सुधार एवं देशभक्ति पूर्ण रचनाएं करने का रहा। परतंत्रता की बेड़ियों को तोड़ने का आह्वान इन कवियों ने किया इन सबकी अगुआई भारतेंदु हरिश्चंद्र ने की अतः उन्हीं के नाम पर इस युग का नाम 'भारतेंदु युग' पड़ा।

भारतेंदु युग की प्रमुख प्रवृत्तियां

भारतेंदु युग एक नया उत्साह, एक नया विचार लेकर साहित्य में आया। साहित्य में जहां नई गद्य दिशाएं खुलीं वहीं काव्य की विषयवस्तु, भाषा–शैली और छंद विधानों में भी परिवर्तन आया। इसका कारण वे परिस्थितियां थीं, जिन्होंने साहित्यकारों को विवश कर दिया। यही कारण है कि परंपरा से चली आ रहीं साहित्यिक प्रवृत्तियों में परिवर्तन आया।

1. **विषयवस्तु में वैविध्य**– भारतेंदु युग में गद्य एवं पद्य दोनों की विषयवस्तु परिवर्तित हो गई। परंपरा एवं नवीनता का समन्वय इस काल में दिखता है। उस समय के कवियों ने भक्तिपूर्ण रचनाएं कीं, किंतु देश की दशा पर आंसू भी बहाए– यथा–

   रोवहु सब मिलि, आवहु भारत भाई।
   हा! हा! भारत – दुर्दशा देखी न जाई।। (भारतेंदु)

   साथ ही कहा–

   अंग्रेज़ राज सुखसाज सजे सब भारी।
   पै धन विदेश चलि जात इहै अति ख्वारी।। (भारतेंदु)

   प्रेमघन ने कर लगाने पर कटाक्ष किया–

   रोओ सब मुंह बाय बाय
   हाय टिकस हाय हाय।

टिप्पणी

कवियों, नाटककारों, निबंधकारों सभी ने एक स्वर से राष्ट्रीयता एवं समाज सुधार का राग अलापा।

2. **जनवादी चेतना**– डॉ. रामविलास शर्मा का कथन है– "भारतेंदु युग का साहित्य इस अर्थ में जनवादी है कि वह भारतीय समाज में पुराने ढांचे से संतुष्ट न होकर उसमें सुधार भी चाहता है।" भारतेंदु युगीन काव्य में सुधारवादी दृष्टिकोण और पीड़ित शोषित के प्रति सहानुभूति उसे सच्ची जनवादी चेतना से जोड़ती है; यथा–

    निज धर्म भली विधि जानैं, निज गौरव पहिचानैं
    स्त्रीगण को विद्या देवैं, करि पतिव्रता यश लेवैं।

3. **सामाजिक चेतना**– भारतेंदु युगीन कवियों की सामाजिक चेतना का भाव अंधविश्वास और कुरीतियों की आलोचना में लक्षित होता है। पश्चिमी रहन–सहन एवं बाल विवाह के विरोध में सच्चा समाज हित दृष्टिगोचर होता है। इन कवियों का मत है कि सामाजिक उत्थान के अभाव में सच्ची राष्ट्रीय चेतना का विकास संभव नहीं है।
4. **राजतंत्र का तिरस्कार**– यह युग राजाओं का था। राजाओं ने जनता पर ध्यान न देकर अंग्रेज़ों की दासता को स्वीकार किया। तत्कालीन कवियों में इसे लेकर गहरा क्षोभ था जिसे उन्होंने अपनी कविता में व्यक्त किया।
5. **नवयुग चेतना**– भारतेंदु जी ने जन–जागृति के लिए जातीय संगीत के प्रचार का महत्व बताया था। उस काल के काव्य में ऐसी स्थितियां चित्रित हुईं जिनमें नवीन चेतना का भाव था। इनमें शिक्षा का महत्व, फैशन के कुपरिणाम, एकता की भावना, असंतोष का परित्याग आदि प्रमुख हैं।
6. **सांस्कृतिक पुनरुत्थान**– इन कवियों ने भारतीय संस्कृति का गौरव गान किया। साथ ही भारतीयों को एक नई ऊर्जा और प्रेरणा प्रदान की। सभ्यता एवं संस्कृति का सुधार इन कवियों ने प्रमुखतः किया।
7. **कलात्मकता का अभाव**– इस युग की कविता में कलात्मकता का अभाव पाया जाता है। संभवतः विषय–वैविध्य और युग–चेतना को समेटने के कारण कलात्मकता दब सी गई। डॉ. केसरी नारायण शुक्ल ने भी स्वीकार किया है– "इस युग की कविता में कलात्मकता के अभाव के कारण इस उत्थान में विचारों का संक्रांति काल होना है। सामान्य जन तक पहुंचाने की ललक में कलात्मकता दब सी गई है।"
8. **भाषा–शैली**– काव्य की भाषा तो ब्रजभाषा ही थी, किंतु खड़ी बोली में भी रचनाएं होने लगीं। भारतेंदु ने सरल–सुलभ भाषा का प्रयोग किया। भावावेश के समय उनकी भाषा में छोटे वाक्यों का प्रयोग हुआ है, तथा पदावली सरल बोलचाल की हो जाती है। कवियों ने विषयानुकूल भाषा का प्रयोग किया। इस युग के कवियों द्वारा हास्य–व्यंग्य के लिए अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग भी किया गया– यथा–

    विष्णु वाहिनी पोर्ट पुरुषोत्तम, भय मुरारि।
    शैंपन शिव, गौरी गिरीश, ब्रांडी क्रम विचारी।।

टिप्पणी

इस प्रकार भारतेंदु युगीन हिन्दी साहित्य में जहां साहित्य में नवीन विधाओं का समावेश हुआ वहीं नए–नए विषयों को लेकर रचनाएं हुईं। भाषा को जन सामान्य के निकट लाने के लिए प्रचलित शब्दों का प्रयोग किया गया।

मूल्यांकन

भारतेंदु युग हिन्दी साहित्य के इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण युग है। आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रवर्तन एवं इसके विकास की आधार भूमि का निर्माण इसी युग में हुआ। भारतेंदु जैसे युगप्रवर्तक साहित्यकार के व्यक्तित्व के कारण भारतेंदु युग हिन्दी साहित्य में प्रमुख स्थान रखता है। साहित्य में नवीन प्रवृत्तियों का समावेश करने का श्रेय भारतेंदु जी को ही है। भारतेंदु युग के साहित्यकारों ने साहित्य को जन साधारण की वाणी बनाया तथा पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से राष्ट्रवादी भावनाओं का विकास किया। भारतेंदु युग के साहित्य का महत्व इस दृष्टि से और भी बढ़ जाता है कि भविष्य में होने वाले हिन्दी साहित्य के विकास के लिए उसने आधारभूमि तैयार की। आने वाले द्विवेदी युग की महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में भी इस साहित्य का महत्व है।

1.3.2 द्विवेदी युग : परिचय तथा प्रवृत्तियां

आधुनिक काल का द्वितीय युग 'द्विवेदी युग' कहलाता है। भाषा साहित्य के क्षेत्र में अराजकता एवं उच्छृंखलता का वातावरण बन गया। ऐसे में महावीर प्रसाद द्विवेदी का आगमन होता है। उन्होंने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से हिन्दी को अराजकता के घेरे से बाहर निकाला। द्विवेदी युग की परिस्थितियां भी लगभग भारतेंदु युग जैसी ही थीं। भारत अंग्रेज़ों के चंगुल में फंस चुका था। 'युगांतर' और 'संध्या' पत्रिका द्वारा जन जागरण का कार्य किया गया। 'वन्देमातरम्' के नारों द्वारा जनता में जोश और उमंग को बुलंद किया गया। 'वन्देमातरम्' शब्द पर नियंत्रण लगा कर जनता की आवाज को बंद करने का षड्यंत्र रचा। इस समय गांधीवादी विचारधारा समस्त राष्ट्र में व्याप्त थी।

अंग्रेज़ सरकार ने जनता के समक्ष मार्ले–मिंटो सुझाव प्रस्तुत किए। 1911 में बंग–विभाजन रद्द किया गया। गांधी जी के पदार्पण के फलस्वरूप राजनीतिक परिदृश्य एकदम परिवर्तित हो गया। गांधी जी ने रौलेट एक्ट का विरोध किया। सन् 1919 में असहयोग आंदोलन प्रारंभ किया गया। सन् 1920 में लोकमान्य तिलक पुलिस बर्बरता के शिकार हुए। फलस्वरूप राजनीतिक परिदृश्य के साथ साहित्यिक वातावरण भी बदल गया। सन् 1900 से 1920 के बीच जितनी भी घटनाएं घटीं, सबका प्रभाव साहित्य पर पड़ा। गांधी जी के सत्य, अहिंसा, मानवता, बंधुत्व और राष्ट्रीयता का स्थायी प्रभाव तत्कालीन साहित्य पर देखा जा सकता है। नाथूराम शर्मा शंकर, श्रीधर पाठक, महावीरप्रसाद द्विवेदी, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', राय देवीप्रसाद 'पूर्ण', रामचरित उपाध्याय, गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही', मैथिलीशरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी आदि इस युग के प्रमुख कवि हैं।

द्विवेदी युग में सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में भी परिवर्तन स्पष्ट रूप से दिखता है। यह परिवर्तन तत्कालीन समाज सुधार आंदोलनों द्वारा उत्पन्न हुआ। राजा राममोहन राय, एनी बेसेंट, दयानंद सरस्वती, केशवचंद्र सेन, रामकृष्ण परमहंस ने समाज सुधार की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किए। आर्य समाज, ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, थियोसोफिकल

टिप्पणी

सोसाइटी, रामकृष्ण मिशन तथा गांधीवादी विचारधारा के लोगों ने अपने–अपने तरीके से कुरीतियों को दूर करने का प्रयास किया। कई अमानुषिक प्रथाओं के खिलाफ आवाज उठाई गई। छुआछूत, बाल विवाह, विधवा विवाह निषेध, पर्दाप्रथा, वर्णभेद आदि का व्यापक विरोध किया गया। राष्ट्र को स्वतंत्र कराने की भावना ने लोगों को जाति, धर्म, वंश से ऊपर उठने के लिए प्रेरित किया। वैज्ञानिक दृष्टिकोण ने लोगों को एक नई राह दिखाई। इस युग में कर्मकांड का विरोध, हिंदू–मुस्लिम एकता, हरिजनोद्धार आदि के लिए नेताओं ने कई कार्य किए। इस प्रकार समग्र रूप में द्विवेदी युग सामाजिक एवं धार्मिक सुधारवाद का युग था।

भारतेंदु के अवसान के बाद एक रिक्तता आ गई थी। साहित्य में एक प्रकार से अराजकता उच्छृंखलता और पथभ्रष्टता का वातावरण बन गया था। राष्ट्रीयता को वाणी देने के लिए एक सशक्त भाषा की आवश्यकता थी। अंग्रेज़ भाषा–भेद नीति को बनाए रखकर अपना कार्य सिद्ध करना चाहते थे। किंतु हिन्दी प्रेमी हिन्दी की उन्नति के लिए प्रयत्नशील थे। तत्पश्चात राजनीतिक आंदोलनों वैज्ञानिक आविष्कारों तथा ईसाई मिशनरियों के प्रयत्न से हिन्दी के विकास में सहायता पहुंची। भाषा अनगढ़ थी, अपरिनिष्ठ थी तथा काव्योचित गुणों से विहीन हो रही थी। ऐसे समय में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का पदार्पण हुआ। उन्होंने भाषा के परिमार्जन एवं परिष्कार का कार्य किया। एक समर्थ आलोचक की भांति उन्होंने विभिन्न रचनाकारों की रचनाओं को सुधारा। 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से भाषा को सजाने व संवारने का कार्य किया। मुहावरों का प्रयोग तथा स्वाभाविक अलंकारों का प्रयोग किया। तत्कालीन पत्रिकाओं में नागरी प्रचारिणी पत्रिका, सरस्वती, इंदु, मर्यादा, प्रताप, अभ्युदय, भारतमित्र, अर्जुन और आज में राष्ट्रीय विचारधारा से पूर्ण साहित्य का प्रकाशन होता था जिससे लोगों में राष्ट्रीय चेतना फैली। इस प्रकार द्विवेदी युगीन साहित्य एक नई दिशा की ओर अग्रसर हुआ।

प्रमुख साहित्यकार

इस युग को दिशा देने का कार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने किया, इस कारण इस युग का नाम 'द्विवेदी युग' पड़ा। द्विवेदी जी ने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से हिन्दी भाषा–साहित्य को अराजकता के घेरे से बाहर निकाला। सरस्वती पत्रिका में टिप्पणियां लिखकर उन्होंने हिन्दी भाषा–साहित्य की उन्नति के लिए कार्य किया। इस युग में नाटक, कहानी, उपन्यास एवं निबंध विधा का पर्याप्त विकास हुआ। पं. किशोरी लाल गोस्वामी ने 'चौपट चपेट' तथा 'मयंकमंजरी', ज्वाला प्रसाद मिश्र ने 'सीता बनवास', हरिऔध ने 'रुक्मिणी', शिवनंदन सहाय ने 'सुदामा' नाटक की रचना की। ये नाटक मौलिक थे। इसके अतिरिक्त बांग्ला नाटक अनूदित हुए। पारसी थियेटरों का भी विकास हुआ, किंतु उनका स्तर काफी गिरा हुआ था।

द्विवेदी युग के उपन्यासकारों में किशोरी लाल गोस्वामी प्रमुख हैं। तारा, तरुण, तपस्विनी, चपला, लीलावती, सुल्ताना रजिया बेगम और लवंगलता इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। अयोध्यासिंह उपाध्याय ने 'ठेठ हिन्दी का ठाठ' तथा 'अधखिला फूल' उपन्यासों की रचना की। उपन्यास सम्राट के रूप में प्रसिद्ध प्रेमचंद ने हिन्दी उपन्यास साहित्य को नई दिशा दी। प्रेमा, रूठी रानी और सेवासदन इनके तीन उपन्यास इसी युग में प्रकाशित हुए।

टिप्पणी

हिन्दी साहित्य में स्वस्थ कहानी–लेखन एवं उसका विकास भारतेंदु युग के बाद यानी आलोच्य युग में हुआ। 'सरस्वती' पत्रिका के प्रकाशन (1990) के साथ ही हिन्दी कहानी का जन्म मान्य है। इंदुमती (किशोरीलाल गोस्वामी), प्लेग की चुड़ैल (भगवानदीन 'बी.ए.'), ग्यारह वर्ष का समय (रामचंद्र शुक्ल), दुलाईवाली (बंग महिला), राखीबंद भाई (वृंदावनलाल वर्मा) आदि आरंभिक कहानियों में शुमार होती हैं।

कहानी विधा की प्रथम मौलिक एवं श्रेष्ठ कहानी चंद्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था' शीर्षक कहानी थी। यह 1915 में प्रकाशित हुई। इससे पूर्व 1911 में 'ग्राम्या' कहानी जयशंकर प्रसाद द्वारा लिखी गई। कहानी के क्षेत्र में भी प्रेमचंद का अप्रतिम स्थान है। उनकी 'पंचपरमेश्वर' कहानी 1916 में प्रकाशित हुई। जयशंकर प्रसाद की कहानियों में भावात्मक संघर्ष और मनोवैज्ञानिक अंतर्द्वंद्व दिखता है। आकाशदीप, पुरस्कार, इंद्रजाल, छाया आदि इस काल की प्रमुख कहानियां हैं। इसके अतिरिक्त राधिकारमण लिखित 'कानों में कंगना' तथा सुदर्शन की 'एक लोटा पानी' भी प्रसिद्ध कहानियां हैं।

निबंध साहित्य की दृष्टि से यह काल बहुत समृद्ध है। 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से महावीर प्रसाद द्विवेदी ने इस विधा को पर्याप्त प्रोत्साहन दिया। द्विवेदी जी ने ऐतिहासिक ज्ञान–विषयक, पुरातत्व तथा समीक्षा संबंधी अनेक उपयोगी निबंधों की रचना की। उन्होंने बेकन के निबंधों का अनुवाद किया। इस युग में प्रकाशित 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका', 'समालोचक', 'इंदु', 'मर्यादा', 'प्रभा' आदि पत्रिकाओं में विभिन्न विषयों से संबंधित निबंध प्रकाशित होते थे। सरदार पूर्णसिंह ने 'आचरण की सभ्यता', 'सच्ची वीरता', 'मजदूरी और प्रेम' आदि लोकप्रिय निबंध लिखे। बालमुकुंद गुप्त ने समसामयिक राजनीति को निबंध के विषय के रूप में चुना। 'शिवशंभु का चिट्ठा' इनका महत्वपूर्ण निबंध है। इसके अतिरिक्त श्यामसुंदर दास, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, रामचंद्र शुक्ल ने भी प्रमुख निबंध लिखे।

गद्य विधाओं के विकास के साथ ही इस युग में अनेक प्रसिद्ध काव्यकृतियों की भी रचना हुई। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इन कवियों ने काव्यभाषा के रूप में अवधी एवं ब्रज भाषा के स्थान पर खड़ी बोली को अपनाया।

गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' ने शृंगारादि पारंपरिक विषयों पर 'सनेही' उपनाम से एवं राष्ट्रीय भावनाओं पर 'त्रिशूल' उपनाम से अभिव्यक्ति दी। सामाजिक समस्याओं को गयाप्रसाद शुक्ल सनेही ने काव्य का विषय बनाया। उन्होंने उर्दू, शैली के प्रबंधों और छप्पयों में रचनाएं कीं। 'राष्ट्रीय वाणी' तथा 'त्रिशूल तरंग' उनके गीतों का संकलन है। उन्होंने देशवासियों को प्रेरित करते हुए कहा–

> जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।
> वह नर नहीं, नरपशु निरा है और मृतक समान है।

'कुसुमांजलि', 'प्रेमपचीसी', 'कृषक वंदन', 'करुणा कादम्बिनी' उनके प्रसिद्ध काव्य–संग्रह हैं।

मैथिलीशरण गुप्त द्विवेदी युग के सबसे लोकप्रिय कवि थे। द्विवेदी जी की प्रेरणा से वे काव्यरचना में प्रवृत्त हुए। उनकी प्रथम रचना 'हेमन्त' सरस्वती पत्रिका में प्रकाशित हुई।

टिप्पणी

इसके अतिरिक्त पौराणिक कथानक को लेकर लिखी गईं काव्यकृतियां 'उर्मिला', 'हिडिम्बा', 'कैकेयी', 'यशोधरा', 'विष्णुप्रिया' आदि प्रमुख हैं। गुप्त जी ने इन महिला पात्रों को काव्य का आधार बनाया तथा उपेक्षित पात्रों को महिमामंडित किया। नारी की गौरवगाथा का गान कर उन्होंने पुरुष शासित समाज को चुनौती दी– यथा–

नारी निकले तो असति है
नर यति कहा कर चल निकले।

गुप्त जी ने 'साकेत' तथा 'भारत भारती' जैसे प्रबंध काव्यों की रचना कर देशवासियों को आत्मोद्धार के लिए प्रेरित किया। उनकी अन्य रचनाएं हैं– पंचवटी, जयद्रथवध, वीरांगना, सिद्धराज, स्वदेश संगीत एवं वैतालिक आदि।

महावीर प्रसाद द्विवेदी खड़ी बोली कविता के प्रेरणास्रोत थे। उन्होंने खड़ी बोली को स्थिर करने का भागीरथ कार्य किया। वे स्वयं कवि थे, कवि निर्माता थे। उनकी रचनाएं हैं– नागरी, सुमन, द्विवेदी काव्य माला, कविता कलाप, देवीस्तुति, काव्य–मंजूषा आदि।

हरिऔध जी भी द्विवेदी युग के प्रधान कवि रहे हैं। वे कृष्णभक्त थे तथा ब्रजभाषा में उन्होंने अनेक कवित्त–सवैया ग्रंथों की रचना की। प्रिय प्रवास, पद्यप्रसून, चुभते चौपदे, बोलचाल, रसकलस, प्रेम प्रपंच, वैदेही–वनवास एवं प्रेमपुष्पोहार आदि आपके काव्य ग्रंथ हैं। खड़ी बोली को काव्य के उपयुक्त बनाने वाले अग्रणी कवि हरिऔध ने द्विवेदी युग की भाषा संबंधी कर्कशता में सरसता संचारित की है और अपनी रचनाओं में मानवीय रूपों को प्रस्तुत किया है।

स्वच्छंदतावादी कवियों में रामनरेश त्रिपाठी का नाम प्रमुख है। खड़ी बोली की इनकी रचना 'जन्मभूमि भारत' है। इनकी कविता में राष्ट्रीयता का भाव प्रमुख रूप से मिलता है। मिलन, पथिक, मानसी, स्वप्न, स्वदेश गीत, हिंदुओं की हीनता, पुस्तक प्रार्थना आदि इनकी प्रमुख रचनाएं हैं। हिन्दी–उर्दू, बांग्ला एवं संस्कृत की कविताओं का संकलन–संपादन रामनरेश त्रिपाठी ने अत्यंत कर्मठतापूर्वक 'कविता–कौमुदी' में किया है। इसके आठ भाग हैं।

माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रवादी कवियों में प्रमुख हैं। उनकी प्रधान कृतियां 'चेतावनी', 'पत्नी' तथा 'हिमतरंगिनी' हैं। सियारामशरण गुप्त पर गांधीवादी विचारधारा का प्रभाव है। उनकी काव्य रचनाओं में उनका हृदय पक्ष प्रकट हुआ है। प्रसिद्ध रचनाएं 'उन्मुक्त', 'मौर्य विजय', 'अनाथ', 'वीर बालक', 'श्री राघव विलाप' तथा 'तिलक वियोग' हैं। 'विवाह तथा 'अविश्वास' वीररस पूर्ण रचनाएं हैं।

नाथूराम शंकर शर्मा द्विवेदी युग के ऐसे कवि हैं जिन्होंने समस्यापूर्ति में काव्य–रचना की। वे आर्यसमाजी विचारधारा से प्रभावित थे तथा उनके काव्य में तार्किकता एवं तीखापन मिलता है। उनकी प्रकाशित कृतियां हैं– 'अनुराग रत्न', 'शंकर सरोज', 'लोकमान्य तिलक', 'गर्भरण्डा रहस्य'। उन्होंने समाज सुधार पर आधृत रचनाएं कीं जिनमें प्रधान हैं– 'पंचपुकार', 'मेरा महत्व', 'शोकाश्रु गीत', 'राजभक्ति', 'बाल विनोद', 'होली', 'नीति' आदि। नाथूराम जी को 'खड़ी बोली के कबीर' की उपाधि प्राप्त है।

टिप्पणी

मुकुटधर पांडेय की रचनाएं हैं– 'काल की कुटिलता', 'जीवन साफल्य', 'रत्नाकार', 'संकेत सप्तक', 'एक शुभ समय', 'कैकेयी का पट्य' आदि। 'विश्वबोध पांडेय जी' इनकी ऐसी रचना है जिसमें दलितों एवं दीनों के प्रति सहानुभूति व्यक्त की गई है।

इनके अतिरिक्त द्विवेदी युग के अन्य कवि हैं– ठाकुर गोपाल सिंह, श्रीमन्न द्विवेदी, कामता प्रसाद गुरु, रामचरित चिंतामणि, गिरिधर शर्मा नवरत्न आदि।

द्विवेदी युग की प्रमुख प्रवृत्तियां

द्विवेदी युग को 'जागरण सुधार काल' की संज्ञा भी दी जाती है। इस काल की प्रमुख प्रवृत्तियां निम्न हैं–

1. **विषय व्यापकता**– द्विवेदी युग किसी विषय–विशेष में बंधा नहीं, इसका कारण द्विवेदी जी का प्रेरणास्पद व्यक्तित्व रहा। भाषा को परिष्कृत एवं परिमार्जित कर उत्कृष्ट साहित्य की रचना करना एवं करवाना उनका लक्ष्य रहा। द्विवेदी युग में विषयों का विस्तार हुआ, तत्कालीन समस्याओं को साहित्यकारों ने विषयवस्तु के रूप में चुना। जनसाधारण एवं सर्वसाधारण से संबंधित रचनाएं होने लगीं। नारी पुनरुत्थान, राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक समस्याओं के निवारण, मानवीयता, आदर्शवाद एवं यथार्थवाद को लेकर रचनाएं की गईं। अलौकिकता का स्थान लौकिकता ने ले लिया। कल्पना का स्थान यथार्थ ने ले लिया। साहित्य विशिष्ट वर्ग से हटकर सर्वहारा वर्ग तक पहुंच गया।

2. **राष्ट्रीय जागरण, देशभक्ति व समाज सुधार**– इस काल तक आते–आते अंग्रेज़ों के अत्याचारों के खिलाफ नेताओं से लेकर साहित्यकारों ने भी कमर कस ली। लेखों एवं कविताओं के माध्यम से साहित्यकारों ने आवाज बुलंद की। यथा–

   जन जय भारत भूमि भवानी
   अमरों ने भी तेरी महिमा बारंबार बखानी (गुप्त जी)

   राष्ट्रीयता का स्वर लेखनी में भी दृष्टिगोचर हो रहा था। जागरण और अभियान गीतों द्वारा कवियों ने भारतीय जनमानस को अन्यायी शासकों के विरुद्ध तैयार किया। नाथूराम शंकर के शब्दों में–

   देशभक्त वीरों, मरने से नहीं डरना होगा।
   प्राणों का बलिदान, देश की वेदी पर करना होगा।

   रूपनारायण पांडेय कह उठे–

   उठो, उठो, क्यों शिथिल पड़े हो?
   देखो सुदिन सबेरा है। (बलिदान गान)

   समाज में व्याप्त बुराइयों के निवारण के लिए साहित्यकारों ने रचनाएं कीं। उपन्यास, कहानी, निबंध, नाटक एवं लेखों के माध्यम से यह संभव हो सका। राष्ट्रीय जन आंदोलन, राजनीतिक उथल–पुथल, मानवतावादी दृष्टिकोण द्वारा सामाजिक काव्य–रचना की प्रवृत्ति का प्रसार हुआ। विधवा, किसान, अछूत, नारी,

टिप्पणी

दुर्भिक्ष, दलित, छुआछूत, दहेज, छल–कपट, निर्धनता, नैतिक पतन आदि वैविध्यपूर्ण विषयों पर रचना हुई। यथा–

जाति पाति के धर्मजाल में उलझे पड़े गंवार
मैं इन सबको सुलझा दूंगा, करके एकाकार।

इस प्रकार कवियों ने समाज को नई राह पर लाने का महती कार्य किया।

3. **मानवतावादी दृष्टिकोण–** इस युग में मानवतावाद का स्वर प्रमुखतः दिखाई देता है। खंडन–मंडन, तर्क–वितर्क और बौद्धिक जागरण के कारण सत्य को ढूंढने की प्रवृत्ति जाग गई। राम और कृष्ण देवरूप में नहीं वरन् मानवीय रूप में चित्रित होने लगे। मानवीय भावनाओं के जागरण का उदाहरण है–

मानव का जीवन ही जग में
मानवता का माप हुआ। (ठाकुर गोपाल सिंह)

द्विवेदी युग में मानवता को धर्म से भी बड़ा माना गया, ईश्वर सेवा का ही रूप और जनसेवा में भी माना गया। सरस्वती जनचेतना की पत्रिका बन गई।

4. **बुद्धिवाद की प्रतिष्ठा–** शिक्षा, प्रसार, वैज्ञानिक आविष्कार, पाश्चात्य प्रभाव ने बुद्धिवाद को जाग्रत किया और विचार–स्वातंत्र्य उभरा। अतः द्विवेदी युगीन कविता भी बुद्धिवाद से प्रभावित हुई; यथा–

राम तुम मानव हो, ईश्वर नहीं हो क्या?

5. **नारी के प्रति नवीन दृष्टि–** द्विवेदी युग में नारी का एक नया रूप प्रस्तुत किया गया। नारी राष्ट्रीय आंदोलन की सहभागिनी बनी तथा विलासिता की वस्तु मात्र नहीं रह गई। वह प्रेरणादायी रूप में चित्रित की गई। डॉ. जयकिशन प्रसाद के अनुसार– "द्विवेदी युगीन काव्यधारा में नारी भारतीय संस्कृति की मूर्ति है इसलिए उसमें तपस्या, त्याग, आत्मोत्सर्ग की भावनाएं कूट–कूटकर भरी हैं।

6. **इतिवृत्तात्मकता–** उपयोगितावादी प्रभाव के कारण कविता इतिवृत्तात्मक हो उठी। फलतः उसमें भावात्मकता, काल्पनिकता, सरसता और माधुर्य भाव का आया। उपदेशात्मकता की प्रवृत्ति प्रधान रही।

7. **छंद–विधान–** द्विवेदी ने परंपरागत छंद के प्रति अरुचि दिखाई। अतुकांत छंद को भी इस काल के कवियों ने अपनाया। परिणामस्वरूप नए छंदों की महत्ता उभरी। लावनी व उर्दू छंदों के प्रयोग हुए।

मूल्यांकन

द्विवेदी युगीन साहित्य का मूल्य आज भी महत्वपूर्ण है। खड़ी बोली की अभिव्यंजना शक्ति का विकास, स्वच्छंदतावाद का श्रीगणेश, मुक्त छंद की शुरुआत, हिन्दी की विविध गद्य विधाओं का विकास, भाषा–परिमार्जन, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद कुछ ऐसी विशेषताएं हैं जो इस काल को महत्वपूर्ण बनाती हैं। इस युग में पौराणिक आख्यानों को समसामयिक संदर्भ में रखकर साहित्य रचना हुई। साहित्य में मानवतावादी दृष्टिकोण का प्रचार हुआ। इस प्रकार द्विवेदी युग ने साहित्य को एक नया आयाम दिया।

1.3.3 छायावाद : परिचय तथा प्रवृत्तियां

टिप्पणी

आधुनिक काल का तीसरा युग 'छायावाद' के नाम से अभिहित किया जाता है। हिन्दी काव्यधारा के विकास में छायावाद का महत्वपूर्ण स्थान है। इस काल में जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानंदन पंत व महादेवी वर्मा जैसे प्रमुख साहित्यकार हुए। छायावाद ने न केवल अंतर्वस्तु के स्तर पर वरन् काव्य–भाषा और संरचना–शिल्प की दृष्टि से भी हिन्दी कविता को समृद्ध किया है और उसे उत्कर्षता प्रदान की है। इस काल में साहित्य, संगीत एवं कला तीनों का समन्वय उत्पन्न हुआ। नई उपमा, नए प्रतीक, नए अलंकार प्रयुक्त हुए। काव्य के क्षेत्र में आए इस अरुणोदय को पहले तो कुछ साहित्याचार्यों ने हल्केपन से 'छायावादी काव्य' नाम से अभिहित किया। किंतु बाद में साहित्य–सुधियों द्वारा यही नाम इस अभिनव अरुणोदयी काव्यधारा का अभिधान बन गया।

नामकरण

छायावाद का प्रारंभ निराला रचित 'जूही की कली' से माना जाता है, जिसका प्रकाशन 1916 में हुआ। कुछ विद्वान मुकुटधर पांडेय द्वारा रचित 'कुररी के प्रति' से इसका आरंभ मानते हैं। वस्तुतः इससे पूर्व छायावाद के नामकरण पर विचार कर लेना आवश्यक है। बीसवीं शती के दूसरे दशक के उत्तरार्द्ध में हिन्दी कविता में एक नई प्रवृत्ति का उदय हो रहा था, जो पूर्व की काव्य प्रवृत्तियों से भिन्न थी। पंत, प्रसाद, निराला की नई तरह की कविताओं ने लोगों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। डॉ. नामवर सिंह के अनुसार 1920 तक इन कविताओं के लिए 'छायावाद' नाम रूढ़ हो गया। आचार्य शुक्ल ने 'छायावाद' शब्द को छायाभास से निकला हुआ बतलाया है। इस संबंध में प्रसाद जी लिखते हैं– "अभिव्यक्ति का यह निराला ढंग अपना स्वतंत्र लावण्य रखता है।"

'सरस्वती' पत्रिका में सुशील कुमार नामक किसी लेखक ने 'हिन्दी में छायावाद' शीर्षक एक निबंध लिखा। उनके लिए ये कविताएं टैगोर स्कूल की चित्रकला के समान 'अस्पष्ट' होने के कारण छायावादी कही जाने लगीं। आचार्य शुक्ल ने कहा भी है– "प्रतीकवाद के अनुकरण पर रची जाने के कारण बंगाल में ऐसी कविताएं 'छायावाद' कही जाने लगीं थीं।"

हजारी प्रसाद द्विवेदी का मत है "... बहुत दिनों तक इस काव्य का उपहास किया गया है और बाद में भी इसे या तो चित्रमयी भाषा शैली या प्रतीक–पद्धति के रूप में माना गया या फिर रहस्यवाद के अर्थ में।"

छायावाद नाम स्वीकृत होने के पश्चात इसके अभिप्राय को लेकर अनेक मत आए। इस संदर्भ में द्विवेदी जी का कथन है– "शायद उनका मतलब है कि किसी कविता के भावों की छाया यदि कहीं अन्यत्र जाकर पड़े तो उसे छायावादी कविता कहना चाहिए।"

आचार्य शुक्ल ने कहा– "छायावाद शब्द का प्रयोग दो अर्थों में समझना चाहिए। एक तो रहस्यवाद के अर्थ में जहां उसका संबंध काव्यवस्तु से होता है अर्थात जहां कवि उस अनंत और अज्ञात प्रियतम को आलंबन बनाकर अत्यंत चित्रमयी भाषा में प्रेम की अनेक प्रकार से व्यंजना करता है।"

टिप्पणी

छायावाद नाम पर पंत जी की सहमति नहीं है। उनका कथन है– "छायावाद नाम से तो मैं संतुष्ट नहीं हूं। यह तो द्विवेदी युग के आलोचकों के द्वारा कविता के उपहास का सूचक है।"

विद्वानों ने छायावाद को अनेक प्रकार से परिभाषित किया। महादेवी वर्मा ने कहा– "प्रकृति में चेतना का आरोप, सूक्ष्म सौंदर्य सत्ता का उद्‌घाटन एवं असीम के प्रति अनुरागमय आत्मा–विसर्जन की प्रवृत्तियों का गीतात्मक एवं नवीन शैली में व्यक्त रूप छायावाद है।"

शांतिप्रिय द्विवेदी ने कहा– "जिस प्रकार इतिवृत्तात्मकता के आगे की चीज़ छायावाद है उसी प्रकार छायावाद के आगे की चीज़ रहस्यवाद है।"

डॉ नगेन्द्र का मत है– "छायावाद एक विशेष प्रकार की भाव–पद्धति है। जीवन के प्रति एक विशेष प्रकार का भावात्मक दृष्टिकोण है।"

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि छायावाद के संदर्भ में स्वच्छंदतावाद और रहस्यवाद की चर्चा होती रही है। उसमें रहस्य भावना के साथ–साथ मानवतावादी दृष्टिकोण को भी स्वीकारा गया है। साथ ही इसे राष्ट्रवादी आंदोलन से भी जोड़ा गया। जैसा कि नामवर सिंह का कथन है– "छायावाद उस राष्ट्रीय जागरण की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है जो एक ओर पुरानी रूढ़ियों से मुक्ति चाहता था और दूसरी ओर विदेशी पराधीनता से। इस जागरण में जिस तरह क्रमशः विकास होता गया, इसकी काव्यात्मक अभिव्यक्ति भी विकसित होती गई और इसके फलस्वरूप 'छायावाद' संज्ञा का भी अर्थ–विस्तार होता गया।

छायावाद की परिस्थितियां भी विचित्र थीं। प्रथम विश्व युद्ध के बाद स्थितियां बदल रहीं थीं। गांधीजी का आंदोलन उच्च मध्यवर्ग से निकलकर गरीब किसानों और मज़दूरों के बीच फैल गया। दासता से मुक्ति की भावना जनता में फैल चुकी थी। राष्ट्रवाद और देशप्रेम की भावना अपने चरम पर थी। जाति, धर्म के भेदभाव कम हो रहे थे। पुनर्जागरण ने न केवल यूरोप वरन् भारत को भी प्रभावित किया। मुक्ति की इच्छा में छटपटाते भारतीयों में एक नए उत्साह और उमंग का संचार इन कवियों ने किया। कीट्स, बायरन, वर्ड्सवर्थ, कॉलरिज, शैली आदि रोमांटिक कवियों के काव्य और उनके लेखन ने उन्हें सोचने–समझने का नया क्षितिज प्रदान किया।

प्रमुख छायावादी साहित्यकार

भक्तिकाल के बाद छायावाद ही ऐसी काव्यधारा है जिसमें इतने लोकप्रिय कवि एवं साहित्यकार हुए। प्रमुख छायावादी कवियों पर संक्षिप्त दृष्टि डालनी आवश्यक है।

जयशंकर प्रसाद छायावादी काव्य–लेखन के प्रमुख कवि हैं। इनकी प्रथम रचना जो खड़ी बोली में लिखित है वह है– 'कानन कुसुम'। प्रसाद के नाटकों एवं काव्यकृतियों का अद्वितीय योगदान रहा। भारतीय संस्कृति के उन्नायक के रूप में प्रसाद ने लोकप्रियता प्राप्त की। 'कामायनी' जैसा महाकाव्य, आंसू जैसा विरह काव्य, लहर, झरना, कानन कुसुम आदि कृतियां प्रसाद जी की श्रेष्ठता को प्रमाणित करती हैं। प्रसाद जी ने राष्ट्रीय गौरव की रचनाएं भी कीं जिनमें प्रमुख हैं– पेशोला की प्रतिध्वनि, महाराणा का महत्व एवं शेरसिंह का शस्त्र समर्पण।

टिप्पणी

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' छायावाद के चार प्रबल स्तंभों में से एक हैं। विडंबना है कि निराला की प्रथम कृति 'जूही की कली' को द्विवेदी जी ने लौटा दिया था, यही रचना बाद में छायावाद और मुक्त छंद की पहली रचना स्वीकार की गई। अनामिका, परिमल, तुलसीदास, नए पत्ते, कुकुरमुत्ता, आराधना, अणिमा, बेला, सांध्य काकली आदि प्रधान काव्यकृतियां हैं। निराला का संपूर्ण काव्य संघर्ष और विद्रोह का काव्य है। हास्य–व्यंग्यपूर्ण रचनाओं में निराला जी सिद्धहस्त हैं। आचार्य शुक्ल जी ने निराला के विषय में लिखा कि उनमें 'बहुवस्तुस्पर्शिनी' प्रतिभा है। निराला के काव्य में भावबोध और कला दोनों ही स्तरों पर वैविध्य मिलता है। निराला के काव्य में एक ओर उल्लास है तो दूसरी ओर अवसाद। एक ओर क्रांति है दूसरी ओर प्रपत्ति।

प्रकृति के सुकुमार चितेरे के रूप में प्रसिद्ध **सुमित्रानंदन पंत** छायावाद के प्रमुख कवि रहे हैं। उनकी प्रथम प्रकाशित रचना 'उच्छ्‌वास' है। इनकी अन्य रचनाएं पल्लव, वीणा, ग्रंथि, ज्योत्सना, गुंजन हैं। ये उनके प्रथम चरण की रचनाएं हैं। द्वितीय चरण की रचनाओं में प्रगतिशीलता मिलती है, ये हैं– युगांत, युगवाणी तथा ग्राम्या आदि। इस काल में पंत, अरविंद दर्शन से प्रभावित रहे। यह पंत की काव्य यात्रा का तीसरा चरण है, इस समय उनका झुकाव अध्यात्म की ओर हो गया। इन कविताओं में स्वर्णधूलि, उत्तरा, रजतशिखर, शिल्पी, अतिमा, वाणी एवं स्वर्णकिरण हैं। पंतजी का संपूर्ण काव्य प्राकृतिक सौंदर्य एवं शिवम् का सम्मिलित रूप है। मानव और प्रकृति दोनों को इनके काव्य में स्थान मिला है।

महादेवी वर्मा 'आधुनिक मीरा' के रूप में विख्यात हैं। इनका प्रथम काव्य–संकलन 'नीहार' है। इसके अलावा रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत आदि संग्रह 'यामा' में संकलित हैं। महादेवी का काव्य नारी की वेदना और आत्मपीड़ा की अभिव्यक्ति है। वे इस वेदना को आध्यात्मिक शब्दावली में प्रस्तुत करती हैं इसलिए उनके काव्य में रहस्यवाद की प्रमुखता है।

छायावाद की प्रमुख प्रवृत्तियां

छायावाद काव्य विविध भावों से युक्त था। इस काल में रहस्यवादी, प्रकृति संबंधी रचनाएं और स्व की अभिव्यक्ति वाली कविताएं हैं। इस काल की प्रमुख प्रवृत्तियां निम्न हैं–

1. **आत्माभिव्यक्ति की भावना**– छायावाद में स्व की भावना को कवियों ने व्यक्त किया है। कवियों ने 'मैं' के भावों को व्यक्त किया। अपनी निजता को आत्मीय ढंग से वाणी दी। कवियों ने न केवल प्रणय–भावना को वाणी दी, अपितु अपने दुखों को भी अभिव्यक्त किया। यथा निराला के भाव–

    धन्य मैं पिता निरर्थक था
    कुछ भी तेरे हित न कर सका। (सरोज स्मृति)

    इसी प्रकार महादेवी ने भी आत्मपीड़ा को अभिव्यक्त किया है–

    मैं नीर भरी दुख की बदली।

2. **रूढ़ियों से मुक्ति**– छायावाद का कवि सामाजिक बंधनों के बीच छटपटा रहा था क्योंकि उसके हृदय में स्वतंत्रता की भावना उत्पन्न हो गई थी। यह

टिप्पणी

'आत्मप्रसार' की आकांक्षा ही विभिन्न रूपों में छायावाद में व्यक्त हुई है। आत्मप्रसार की इस इच्छा ने छायावादी कवियों को यह समझ प्रदान की कि संकीर्णता और रूढ़िवादिता से आत्मविकास नहीं किया जा सकता है। मुक्ति की आकांक्षा उनके हृदय में पनप रही थी तथा जीवन–मूल्य अवरोध बन रहे थे।

3. **रहस्यवाद–** इन कवियों ने ऐहिक व्यक्तिकता की क्षुद्रता से उसे बचाने के लिए उस पर रहस्यात्मकता का आवरण डाल दिया। छायावाद में रहस्य भावना का सामाजिक आधार यही है। डॉ. नामवर सिंह के अनुसार– "काव्य में रहस्य–भावना एक प्रकार से 'परोक्ष की जिज्ञासा' है।... अब वह प्रकृति और सृष्टि को जानना–समझना चाहता है। स्वच्छंदतावादी काव्य की यह खास विशेषता है। यथा–

    न जाने, नक्षत्रों से कौन
    निमंत्रण देता मुझको मौन।

   इस अज्ञात को जानने की जिज्ञासा ही रहस्य भावना है। छायावादी कवियों ने रहस्य–भावना की अभिव्यक्ति कई रूपों में की है।

4. **प्रकृति–प्रेम–** छायावादी कवि प्रकृति प्रेमी थे। प्रकृति इन कवियों के हृदय की मुक्ति और स्वच्छंदता की प्रेरणा बन गई। प्रकृति को इन कवियों ने सहचरी, प्रेयसी, उपदेशदात्री तथा उद्दीपक के रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने प्रकृति के कण–कण से अपना रागात्मक संबंध जोड़ा; यथा–

    दिवसावसान का समय
    मेघमय आसमान से उतर रही
    वह संध्या सुंदरी परी सी (संध्या सुंदरी)

   पंत तो प्रकृति के सुकुमार चितेरे के रूप में विख्यात हुए। वस्तुतः यह प्रकृति के साथ मनुष्य का नया रिश्ता था, जो छायावादी कविता के माध्यम से व्यक्त हुआ।

5. **नारी–स्वातंत्र्य की भावना–** छायावाद में नारी को सहज रूप में व्यक्त किया गया। उसे मानवी, सहचर, मित्र के रूप में सम्मान मिला। एक उदाहरण प्रस्तुत है–

    नारी तुम केवल श्रद्धा हो
    विश्वास रजत नग पग तल में।

   छायावादी नारी के सौंदर्य में शरीर से अधिक भावों की प्रधानता है। इस युग में नारी सौंदर्य में स्थूलता और शारीरिकता की अपेक्षा कल्पनाशीलता तथा भावात्मकता की प्रधानता है।

6. **राष्ट्रीय भावना–** छायावादी काव्य में राष्ट्रीयता की भावना कई रूपों में अभिव्यक्त हुई। इन कवियों का देशप्रेम संकीर्ण नहीं है; यथा–

    अरुण, यह मधुमय देश हमारा
    जहां पहुंच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।

   छायावादी कवियों ने स्वतंत्रता का आह्वान किया। उन्होंने असहाय एवं शोषितों को वाणी दी, शोषकों को धिक्कारा।

टिप्पणी

7. **कल्पना का नवोन्मेष–** छायावाद में जिज्ञासा एवं कौतूहल का भाव दिखता है। जिज्ञासा ने कवियों को कल्पनाशील बनाया। पंत ने 'कल्पना' को 'कल्पना' के ये विह्वल बाल कहा तो निराला ने कविता को 'कल्पना के कानन की रानी' कहा। इन कवियों ने मूर्त को अमूर्त तथा अमूर्त को मूर्त रूप में चित्रित किया है।
8. **छंद से मुक्ति–** इन कवियों ने भाषा में, छंद में नवीन प्रयोग किए। मुक्त छंद इसी काल में प्रमुखतः रचित हुआ। गीतों एवं प्रगीतों की रचना की। यही कारण है कि महाकाव्यों की रचना कम हुई।
9. **बिंब और प्रतीक–** छायावादी कवियों ने प्रकृति से बिंब ग्रहण किए। इसके अतिरिक्त परंपरागत बिंबों को नया रूप दिया गया। प्रतीक–विधान भी अनुपम उपमानों से भरा पड़ा है। लाक्षणिक वक्रता भरी भाषा इस काल की स्वाभाविक प्रवृत्ति है।

मूल्यांकन

अतः कहा जा सकता है कि छायावाद का हिन्दी साहित्य में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है। छायावाद मुक्ति का, वैयक्तिक अनुभूतियों का, प्रकृति का, मानवता का तथा स्वाधीनता का काव्य है। यह क्लासिक कृतियों का भंडार है।

1.3.4 प्रगतिवाद : परिचय तथा प्रवृत्तियां

छायावाद के बाद एक सशक्त साहित्यिक आंदोलन के रूप में प्रगतिवाद का उदय हुआ। प्रगतिवाद का उदय 1936 में लखनऊ में 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना से माना जाता है। व्यक्ति की मुक्ति का जो लक्ष्य छायावादी कवियों के सामने था, उसका स्थान समाज और राष्ट्र की मुक्ति ने ले लिया।

राजनीतिक रूप से देश में उग्रवादी एवं उदारवादी आंदोलन चल रहे थे। गांधी जी का सविनय अवज्ञा आंदोलन सारे राष्ट्र में व्याप्त हो चुका था। ज़मींदारी प्रथा, मजदूरों का शोषण देशी रियासतों में जनता के अधिकारों पर बहस चल रही थी। समाजवादी पार्टी की स्थापना हो चुकी थी। प्रगतिवादी उसे कहा गया जो मार्क्सवादी विचारधारा में विश्वास रखता हो तथा उसी के अनुसार साहित्य रचना करता हो। जबकि प्रगतिशील वह है जो प्रगतिशील मूल्यों में विश्वास करता हो। यह नया दृष्टिकोण था–पुराने रुढ़िबद्ध जीवन मूल्यों का त्याग, शोषण और दमन का विरोध, समानता और लोकतंत्र में विश्वास इसका आधारबिंदु थे।

प्रमुख साहित्यकार

प्रगतिवादी काव्यधारा ने हिन्दी कवियों को बहुत दूर तक प्रभावित किया। निराला, पंत, नरेन्द्र शर्मा जैसे कवि भी इससे अछूते नहीं रहे। इसके अलावा रामविलास शर्मा, नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, शमशेर बहादुर सिंह, गजानन माधव मुक्तिबोध, त्रिलोचन शास्त्री भी इसी काव्यधारा की देन थे।

टिप्पणी

समकालीन हिन्दी काव्य परिदृश्य में नागार्जुन को महत्ता प्राप्त है। इनके काव्य में ठेठपन, गहन आंचलिकता व्यंग्यपूर्ण आक्रामकता पाई जाती है। प्रमुख काव्य संग्रह हैं– युगधारा, शपथ, प्रेत का बयान, चना जोर गरम, सतरंगे पंखोंवाली, तालाब की मछलियां, प्यासी पथराई आंखें आदि।

केदारनाथ अग्रवाल भी इसी काव्यधारा की देन हैं। भावुकता, रुमानी आदर्शवाद इनकी कविता की प्रधान विशेषताएं हैं। बसंती हवा, चंद्रगहना से लौटती बेर से इनकी खास पहचान बनी। 'गुलमेंहदी', 'अपूर्वा' तथा 'फूल नहीं रंग बोलते हैं' इनके प्रमुख काव्य संग्रह हैं।

शमशेरबहादुर सिंह को प्रयोगवादी भी कहा जाता है। किंतु रूप और शिल्प उन्हें प्रकट सच्चाइयों की तरह लगते हैं। प्रमुख काव्य संग्रह हैं– 'कुछ कविताएं', 'कुछ और कविताएं', 'इतने पास अपने' आदि।

गजानन माधव मुक्तिबोध की दृष्टि मार्क्सवादी रही है। उन्होंने यथार्थ चित्रण के लिए फेंटेसी का प्रयोग किया है, इस प्रकार उनकी रचनाओं में नाटकीयता है। 'चांद का मुह टेढ़ा है', 'भूरी–भूरी खाक धूल', 'अंधेरे में' उनकी प्रधान रचनाएं हैं।

त्रिलोचन शास्त्री ने मामूली प्रसंगों पर कविताएं लिखीं। सॉनेट उनका प्रधान छंद है। 'धरती', 'दिगंत', 'ताप के तापे हुए दिन', 'उस जनपद का कवि हूं' इनकी प्रधान रचनाएं हैं।

प्रगतिवाद की प्रमुख प्रवृत्तियां

प्रगतिवाद का संबंध जीवन और जगत के नए दृष्टिकोण से है। जीवन के प्रति लौकिक दृष्टि ही इस साहित्य का आधार है और यह सामाजिक यथार्थ से उत्पन्न होता है। प्रगतिवादी कवि न इतिहास की उपेक्षा करता है न वर्तमान का अनादर, न ही वह भविष्य के रंगीन सपने बुनता है। कुछ प्रमुख प्रवृत्तियां निम्न हैं–

1. **सामाजिक यथार्थ दृष्टि**– प्रगतिवादी कवि के पास सामाजिक यथार्थ को देखने की विशेष दृष्टि होती है। एक वर्ग चेतना प्रधान दृष्टि वाला है। कवियों ने वास्तविकता बोध और वस्तुपरक निरीक्षण दोनों पर ध्यान दिया है; यथा–

   बरसा कर बेबस बच्चों पर मिनट–मिनट में पांच तमाचे
   इसी तरह से दुखरन मास्टर गढ़ता है आदम के सांचे।

   कवि कभी सामाजिक विषमता को उजागर करता है तो कभी विक्षोभ व्यक्त करता है, कभी अत्याचार के विरुद्ध गर्जना करता है।
2. **परिवेश और प्रकृति के प्रति लगाव**– प्रगतिवाद में प्रकृति और परिवेश के प्रति कवि का लगाव भी ध्यान आकृष्ट करता है। ये कवि प्रकृति में जीवन की सक्रियता का लगाव पाते हैं। इनका प्रकृति बोध भी यथार्थ बोध से विच्छिन्न नहीं है।
3. **जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण**– प्रगतिवादी कवि जीवन की स्वीकृति के कवि हैं। "मुझे विश्वास है कि पृथ्वी रहेगी"– यह सकारात्मक दृष्टिकोण प्रगतिवाद की महत्वपूर्ण विशेषता है। प्रगतिवादी कवि अंधकार और भयानक निराशा में भी एक प्रकार का सकारात्मक दृष्टिकोण रखते हैं; यथा–

टिप्पणी

रोज कोई भीतर चिल्लाता है कि कोई काम बुरा नहीं
बशर्ते कि आदमी खरा हो, फिर भी मैं उस ओर अपने को ढो नहीं पाता।

4. **भविष्य दृष्टि**– ये कवि यथास्थितिवादी नहीं हैं। सामाजिक परिवर्तन के पक्षधर हैं। यही इनकी भविष्योन्मुखी दृष्टि है। उनकी कल्पना स्वेच्छाचारी या अराजक नहीं है।
5. **व्यंग्यात्मकता**– प्रगतिवाद की सबसे प्रमुख विशेषता व्यंग्यात्मकता है। डॉ. नामवर सिंह ने लिखा है– "हिन्दी कविता में व्यंग्य कविता का जितना सुंदर विकास प्रगतिवाद में हुआ, उतना कहीं नहीं।" कथ्य से लेकर छंद, भाषा और लय तक में वे व्यंग्य उपजाने में सफल रहे हैं।
6. **काव्यभाषा, छंद और लय**– प्रगतिवादी कवियों की भाषा का गुण है– संप्रेषणीयता। भाषा सादगीपूर्ण, सरल और सहज है। इनके बिंब भी सीधे–सादे तथा अनलंकृत हैं। लय विन्यास तथा छंद–विधान भी अद्भुत है। आवृत्ति युक्त लय सहज ही प्रभावित करती है।

मूल्यांकन

प्रगतिवाद का एक काव्य प्रवृत्ति के रूप में और व्यापक साहित्यिक आंदोलन के रूप में ऐतिहासिक महत्व है। प्रगतिवाद ने कविता की अवधारणा को बदला, साहित्य के रचना–संसार को महत्व दिया। कविता का संसार अधिक यथार्थ, प्रमाणिक, व्यापक और विश्वनीय लगने लगा।

1.3.5 प्रयोगवाद : परिचय तथा प्रवृत्तियां

प्रगतिवाद के बाद का काल 'प्रयोगवाद' के नाम से अभिहित किया गया। सन् 1943 में अज्ञेय ने 'तारसप्तक' का प्रकाशन किया तथा लिखा– " ...... संग्रहित कवि प्रयोग को कविता का विषय मानते हैं। वे किसी स्कूल के नहीं हैं, किसी मंजिल पर पहुंचे हुए नहीं हैं, अभी राही हैं, राही नहीं, राहों के अन्वेषी।" अज्ञेय के इस कथन से ही 'प्रयोगवाद– की चर्चा होने लगी।

'दूसरे सप्तक' में अज्ञेय ने इसका खंडन किया व कहा– "प्रयोग का कोई वाद नहीं है। हम वादी नहीं रहे, नहीं हैं। न प्रयोग अपने आप इष्ट या साध्य है।" किंतु प्रयोगवाद शब्द रूढ़ हो गया।

सन् 1947 में 'प्रतीक' के प्रकाशन के समय प्रगतिशील कवियों के दृष्टिकोण में भी बदलाव आने लगे। अज्ञेय प्रगतिवाद की सामूहिकता के विरुद्ध व्यक्ति की स्वतंत्रता के समर्थक बनकर आगे आए। उन्होंने स्पष्ट किया कि प्रयोगवाद में रचना का कलात्मक उद्देश्य कभी संदिग्ध नहीं रहता, प्रयोगवाद साहित्य के रूप संबंधी नवीन प्रयोगों पर बल देता है तथा साहित्य के सामाजिक पक्ष की अपेक्षा करता है। यह शुद्ध रूप से एक साहित्यिक काव्य आंदोलन था।

प्रयोगवादी काव्य के समय देश स्वतंत्र हो चुका था। मध्यवर्ग के सम्मुख कोई आदर्श नहीं था। सामूहिकता की भावना के शिथिल पड़ने के साथ व्यक्तिवाद ने जोर पकड़ा।

टिप्पणी

व्यक्ति स्वातंत्र्य की मांग ज़ोर पकड़ने लगी। प्रगतिवादी आंदोलन क्षीण होता जा रहा था। प्रयोगवाद नई सोच का वाहक बनकर प्रवर्तित हुआ। प्रयोगवादी कवि केवल प्रयोगशीलता को ही काव्य का धर्म मानते हैं, वरन् काव्य के कलापक्ष और रूपपक्ष पर भी बल देते हैं। अज्ञेय प्रयोग को दोहरा साधन मानते हैं– एक तो सत्य को जानने का साधन तथा दूसरे उस प्रेषण की क्रिया को जानने का। अतः प्रयोग का संबंध नई विषय–वस्तु की खोज भी है तथा उस विषयवस्तु को प्रेषित करने के ढंग में भी है।

प्रमुख साहित्यकार

तारसप्तक के प्रकाशन के साथ प्रारंभ हुई यह काव्यधारा दूसरा सप्तक तक मान्यता प्राप्त कर सकी। अज्ञेय के अतिरिक्त प्रमुख कवि हैं– प्रभाकर माचवे, गिरिजाकुमार माथुर, गजानन माधव मुक्तिबोध, नेमिचंद्र जैन, भारत भूषण अग्रवाल, शमशेर बहादुर सिंह, नरेश मेहता आदि।

अज्ञेय को प्रयोगवाद का प्रवर्तक माना जाता है। इनका प्रथम काव्य संग्रह 'भग्नदूत' है। अन्य प्रमुख रचनाएं हैं– 'हरी घास पर क्षण भर', 'चिंता', 'बावरा अहेरी', 'आंगन के पार द्वार', 'कितनी नावों में कितनी बार'। इन्होंने अपनी रचनाओं में काव्य सत्य पर विचार किया है। जिजीविषा, प्रकृति के प्रति लगाव आदि प्रमुख विशेषताएं हैं।

गिरिजाकुमार माथुर भी प्रमुख कवि रहे। 'मंजीर' इनकी प्रारंभिक रचना है। इनके काव्य की जमीन प्रेम और सौंदर्य है। 'नाश और निर्माण', 'धूप के धान', 'जो बंध न सका' उनके प्रमुख काव्य संग्रह हैं। नारी प्रेम और प्रकृति प्रेम उनकी कविताओं के मुख्य विषय रहे हैं। भारतभूषण अग्रवाल का प्रथम काव्य संग्रह 'छवि के बंधन' है। इसके अतिरिक्त 'जागते रहो', 'मुक्तिमार्ग', 'ओ अप्रस्तुत मन', 'अनुपस्थित लोग', 'एक उठा हुआ हाथ', तथा 'उतना वह सूरज है' आदि इनकी अन्य प्रमुख रचनाएं हैं। इनकी कविताओं में अधिकांशतः दर्द की अभिव्यक्ति हुई है।

नरेश मेहता पर आरंभ में प्रगतिवाद का प्रभाव था, किंतु बाद में इनके स्वर बदल गए। प्रकृति–चित्रण इनका प्रिय विषय रहा है। 'संशय की एक रात', 'महाप्रस्थान', 'समय देवता', 'वन पाखी! सुनो!!', 'बोलने दो चीड़ को', 'मेरा समर्पित एकांत' इनकी प्रमुख कृतियां हैं।

शमशेर बहादुर सिंह यद्यपि वैचारिक दृष्टि से मार्क्सवादी कवि है, किंतु इनका काव्य सौंदर्यवादी है। इनके काव्य में प्रयोग की प्रवृत्ति अधिक है। प्रमुख काव्य–कृतियां हैं– 'कुछ कविताएं', 'कुछ और कविताएं', 'चुका भी हूं नहीं मैं' आदि। इनका झुकाव अमूर्त की ओर अधिक है।

मुक्तिबोध आत्मसंघर्ष के कवि हैं। उनकी कविताएं आत्मसंघर्ष का ही प्रतिफलन हैं, किंतु यह बाहरी संघर्ष से उत्प्रेरित है। ये सामाजिक अनुभवों के कवि हैं। 'चांद का मुंह टेढ़ा है' और 'भूरी–भूरी खाक धूल', 'अंधेरे में' आदि प्रमुख कृतियां हैं।

प्रयोगवाद की प्रमुख प्रवृत्तियां

प्रयोगवाद का उदय प्रगतिवाद की प्रतिक्रिया में हुआ इसलिए यह स्वाभाविक था कि प्रयोगवाद समाज की तुलना में व्यक्ति को, अनुभव को तथा कलात्मकता को श्रेयस्कर मानता।

टिप्पणी

1. **विचारधारा से मुक्ति**– डॉ. नामवर सिंह ने 'वाद के विरुद्ध विद्रोह' को प्रयोगवाद की सर्वप्रथम विशेषता माना है। प्रयोगवादी कवियों का मानना था कि कोई भी वाद या विचारधारा मनुष्य को सत्य तक नहीं पहुंचा सकती; यथा–

    कि जिस बाती का तुम्हें भरोसा
    वही हलेगी सदा
    अकम्पित, उज्ज्वल, एकरूप, निर्धूम?

2. **सत्य के लिए अन्वेषण**– प्रयोगवादी कवियों की प्रधान विशेषता सत्य के लिए अन्वेषण है। इन कवियों का मत है कि प्रयोगवादी कवि सत्य की खोज करता है, जिसे वह काव्य में व्यक्त करना चाहता है और उस माध्यम की भी खोज करता है, जिसके द्वारा सत्य व्यक्त होता है।
3. **व्यक्तिवाद**– प्रयोगवादी कवियों ने व्यक्ति के एकांत महत्व पर बल दिया है। 'नदी के द्वीप' कविता में अज्ञेय ने व्यक्ति और समाज को व्यक्त किया। इन कवियों में व्यक्ति की स्वतंत्रता के प्रति यह आग्रह, मध्यवर्ग की मानसिकता की अभिव्यक्ति है जो वैयक्तिक असंतोष से उपजा है।
4. **यथार्थ दृष्टि**– प्रयोगवादी कविता में भावुकता के स्थान पर बौद्धिकता का आग्रह अधिक है। इन कवियों का यद्यपि जीवनानुभव कम था, किंतु यह सीमित अनुभव यथार्थपरक रूप में ही व्यक्त हुआ। इन कवियों ने नारियों को सामान्य भावभूमि पर चित्रित किया। इनके प्रकृति चित्रण भी यथार्थ–दृष्टि के परिचायक हैं।
5. **काव्यभाषा छंद और लय**– प्रयोगवाद की भाषा में शब्द प्रयोग पर विशेष ध्यान दिया गया है। इनकी भाषा सहज व सरल है तथा संप्रेषणीय है। भाषा में गेयता और आलंकारिकता का अभाव है। इन्होंने छंदमुक्त, तुकमुक्त एवं लयमुक्त रचनाएं कीं। अज्ञेय ने काव्य को 'शब्द' माना है। यद्यपि इन कवियों में गेयता है तथापि गीतों में मोहकता का अभाव पाया जाता है।
6. **प्रतीक और बिंब**– इन कवियों ने प्रतीकों को प्रमुखता दी। ये प्रतीकों को सत्यान्वेषण का साधन मानते हैं। कविता में प्रतीक सांकेतिक अर्थ एवं लाक्षणिक वक्रता के सूचक हैं। प्रयोगवादी कविता बिंब निर्माण की दृष्टि से समृद्ध है। प्रकृति संबंधी बिंब अधिक हैं; यथा–

    एक पीली शाम
    पतझर का जरा अटका हुआ पत्ता
    शांत
    मेरी भावनाओं में तुम्हारा मुखकमल।

मूल्यांकन

प्रयोगवादी कविता एक विलक्षण काव्यधारा है, जिसका हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। इन कवियों ने सत्यान्वेषण द्वारा जीवन के यथार्थ को काव्य में उतारा।

1.3.6 स्वातंत्र्योत्तर कविता : परिचय तथा प्रवृत्तियां

प्रत्येक युग में समाज में कुछ परिवर्तन आते हैं। स्वतंत्रता के परवर्ती युग में परंपरागत सामाजिक मान्यताएं टूटने लगीं। व्यक्ति अपनी स्वतंत्र सत्ता की प्रतिष्ठा पाने लगा। परंपरागत मूल्यों के प्रति युवा पीढ़ी के मन में वितृष्णा पैदा हुई। व्यक्तिवादी चिंतन के कारण परंपरागत पारिवारिक मूल्यों में भी विघटन हुआ। इसी प्रकार धर्म, संस्कृति एवं समाज के प्रति भी आस्था बदली। नयी पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के बीच संघर्ष होने लगा। संयुक्त परिवार प्रणाली टूटने लगी। औद्योगीकरण के कारण नगरीय सभ्यता का विकास हुआ। व्यक्तिवादी चिंतन के कारण परंपरागत पारिवारिक मूल्य बदल गए।

पराधीन भारत के साहित्यकारों के सम्मुख 'भारत की स्वाधीनता' का ठोस लक्ष्य था लेकिन स्वाधीन भारत के साहित्यकार के सामने एक नहीं कई जटिल चुनौतियां थीं। प्रसिद्ध साहित्यकार यशपाल जैन ने इस संबंध में कहा था कि "विदेशी दासता तो समाप्त हो चुकी है लेकिन व्यवस्थाओं की दासता से भारतवासी मुक्त नहीं हो पाए हैं। जब तक सर्वसाधाराण का शोषण बना रहता है तब तक जनगण की स्वतंत्रता मिथ्या है। यहां मात्र अधिकार का हस्तांतरण हुआ है। 'ट्रांसफर ऑफ पावर' और जनगण की स्वतंत्रता में अंतर है।" जनगण की स्वतंत्रता में साहित्यकार के सहायक होने की बात करते हुए यशपाल जी ने कहा कि "समाज के दुःख को साहित्यकार बारीकी से समझें। लिखें, मानवीय दृष्टि से उन्हें समझाकर वे समस्याओं को सुलझाने का मार्ग बनावें, ...जनता का सबसे बड़ा शत्रु अंधविश्वास है। इसे चकनाचूर करने के लिए साहित्यकार अपनी लेखनी का सदुपयोग करें।"

स्वातंत्र्योत्तर कविता 'नई कविता, 'नवगीत' एवं 'समकालीन कविता' आदि रूपों में सामने आई।

नई कविता : प्रतिनिधि रचनाकार एवं साहित्यिक विशेषताएं

प्रयोगवाद का ही विकसित रूप नई कविता है। डॉ. रामविलास शर्मा नई कविता की शुरुआत 'नई कविता' नामक पत्रिका के प्रकाशन से मानते हैं। इसके प्रथम अंक का प्रकाशन 1954 में हुआ था। तीसरा सप्तक की भूमिका में अज्ञेय ने प्रयोगवाद के स्थान पर नई कविता शब्द प्रयोग करना उचित माना है। सन् 1952 में इलाहाबाद से प्रसारित रेडियो वार्ता में प्रथम बार 'नई कविता' शब्द का प्रयोग किया। 'नई कविता' शब्द 1954 में पत्रिका के प्रकाशन के फलस्वरूप आरंभ हुआ।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद साम्राज्यवादी एवं समाजवादी लोगों के बीच बढ़ते तनाव का असर तत्कालीन लेखकों एवं बुद्धिजीवियों पर पड़ा। इस दौर में साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संगठनों ने जन्म लिया। व्यक्ति की स्वतंत्रता सर्वोच्च मूल्य है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की स्थिति को लेकर भी नए लेखकों और कवियों में असंतोष का भाव था। राष्ट्र का असंतुलित विकास हुआ और राष्ट्रीय एकता एवं बाहरी दवाबों की समस्याओं का विस्तार हुआ। नई कविता का आंदोलन इसी पृष्ठभूमि में उदित हुआ।

नई कविता का अभिप्राय

यह विवाद का विषय रहा है कि नई कविता नाम से जानी जाने वाली कविता किन अर्थों में नई है और इस काल की कविता को ही नई कविता कहना कहां तक उचित है। यह

विचारणीय विषय है। नई कविता के समर्थक पहले स्वयं को अज्ञेय से जोड़ने में गौरवान्वित होते थे, धीरे–धीरे ये प्रयोगवाद से स्वयं को विशिष्ट बताने लगे तथा नई कविता के प्रणेता बन गए।

नई कविता को परिभाषित करते हुए इन्होंने अनुभूति की अभिव्यक्ति पर बल दिया। धर्मवीर भारती ने नई कविता को पुराने और नए मानव मूल्यों के टकराव से उत्पन्न तनाव की कविता कहा है। मुक्तिबोध के अनुसार नई कविता मूलतः एक परिस्थिति के भीतर पलते हुए मानव हृदय की कविता है। वस्तुतः नई कविता विभिन्न दृष्टियों, काव्याभिरुचियों एवं कवि की वैयक्तिक क्षमताओं को समेटे हुए है।

नई कविता के प्रमुख कवि

नई कविता के कवियों में वैविध्य मिलता है। शमशेर, मुक्तिबोध जैसे कवि जहां मार्क्सवादी थे, वहीं अज्ञेय, गिरिजाकुमार माथुर, भारतभूषण अग्रवाल, नरेश मेहता प्रयोगवादी। लक्ष्मीकांत वर्मा, विजयदेव नारायण साही, कुंवरनारायण, धर्मवीर भारती जैसे प्रगतिवाद विरोधी कवि भी थे। नई कविता के प्रमुख कवियों का सूक्ष्म विश्लेषण निम्न है–

धर्मवीर भारती नई कविता के प्रमुख कवि हैं। 'अंधायुग', 'कनुप्रिया', 'ठंडा लोहा', 'सात गीत वर्ष', आदि चर्चित कृतियां हैं। इन्होंने मिथकों की नई व्याख्याएं की हैं। रुमानियत का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

कुंवरनारायण के काव्य को विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने 'वृहतर जिज्ञासा का काव्य' कहा है। इनकी प्रवृत्ति चिंतन की ओर अधिक है इसलिए उनकी काव्य–भाषा में यह प्रवृत्ति देखी जा सकती है। इनकी कृतियां– 'आत्मजयी', 'चक्रव्यूह', 'परिवेशः हम–तुम' में संग्रहीत हैं।

रघुवीर सहाय उन कवियों में हैं जिनका प्रभाव समकालीन कविता पर पड़ा है। इनकी कविताओं में बदलाव का स्वर है तथा वे समकालीन यथार्थ को संवेदना के साथ प्रस्तुत करते हैं। उनकी कविताएं जनपक्षीय हैं। प्रमुख संग्रह है– 'सीढ़ियों पर धूप में', 'आत्महत्या के विरुद्ध', 'हंसो–हंसो जल्दी हंसो', 'लोग भूल गए हैं' आदि।

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की कविता यात्रा में अनेक मोड़ आए हैं। आरंभ में उन पर व्यक्तिवादी धारा का प्रभाव था, बाद में वे प्रगतिशील काव्यधारा की ओर झुके। इनकी कविताओं में निजता व आत्मीयता पाई जाती है। इनकी कविताएं सहज, सरल और सपाट हैं। 'काठ की घंटियां', 'जंगल का दर्द' आदि प्रमुख कृतियां हैं।

केदारनाथ सिंह भी तीसरा सप्तक के कवि हैं। इनकी कविताएं 'अभी बिल्कुल अभी', 'जमीन पक रही है', 'यहां से देखो' और 'अकाल में सारस' प्रमुख कृतियां हैं। केदारनाथ सिंह भी उन कवियों में हैं जिन पर नई कविता की नकारात्मक प्रकृतियों का प्रभाव नहीं है। इनकी कविता में बिंब प्रमुख हैं।

नई कविता की प्रमुख प्रवृत्तियां

नई कविता का संबंध पूंजीवादी विकास से है। नई कविता में वस्तुतः दो तरह की धाराएं रही हैं। एक धारा वह जो अस्तित्ववाद–आधुनिकतावाद से प्रभावित थी, दूसरी धारा जो मार्क्सवाद से प्रभावित थी। नई कविता की प्रमुख प्रवृत्तियां निम्न हैं–

टिप्पणी

1. **व्यक्ति–स्वातंत्र्य–** व्यक्ति–स्वातंत्र्य नई कविता की प्रधान विशेषता थी। नई कविता के कवियों ने नए मनुष्य की प्रतिष्ठा का नारा दिया। कोई इसे 'लघुमानव' कह रहा था तो कोई 'सहज मानव'। लेकिन यह मानव मध्यवर्ग का ही प्रतिनिधि था। नई कविता में व्यक्ति–विशेष की आशाओं, निराशाओं, आस्थाओं–अनास्थाओं की अभिव्यक्ति हुई है। इस काल में भीड़ बनाम अकेला व्यक्ति का विवाद प्रमुख है।
2. **आस्था और अनास्था–** नई कविता में यह प्रश्न भी उठा है। उनके अनुसार, नई कविता वादों, विचारधाराओं, रुढ़ियों, सामूहिक निर्णयों पर झूठी आस्था का विरोध करती है। कुंवरनारायण ने आस्था–अनास्था का प्रश्न उठाया है।
3. **औद्योगिक सभ्यता–** बढ़ते औद्योगीकरण और मशीनीकरण ने मनुष्य को भावात्मक स्तर पर अकेला और असहाय बनाया, स्वार्थी बनाया। इसीलिए कवियों ने औद्योगिक सभ्यता की आलोचना भी की। कवियों का मत है कि यंत्र व्यक्ति को केवल सुविधाएं ही नहीं देता, वह संवेदनशक्ति भी छीन लेता है; यथा–

   अपने ही हथियारों से घबराया मानव
   पत्थर का देव और लोहे का दानव
   यह युग
   अपनी ही ताकत से हारा मनुष्य।

   इन कवियों ने शहरी जीवन की वास्तविकता को उजागर किया।
4. **अनुभूतिपरकता–** नई कविता में अनुभूति की अभिव्यक्ति प्रधान है। इन कवियों के लिए अनुभूति की विशिष्टता का अर्थ अनुभव को अभिव्यक्त करने के नए अंदाज से है। इसे ही वे सौंदर्यानुभूति भी कहते हैं। प्रत्येक कवि के मूल उन कवियों की जीवन दृष्टि, सौंदर्यानुभूति, सामाजिक यथार्थ से संपृक्ति, कलात्मक क्षमता का हाथ रहता है। क्षणबोध की चर्चा भी कवियों ने प्रमुख रूप से की।
5. **प्रकृति–प्रेम–** प्रकृति संबंधी रचनाएं इन कवियों ने प्रमुख रूप से कीं। प्रकृति और मानव के बीच की दूरी को नए कवियों ने भिन्न–भिन्न रूपों में ग्रहण किया। इनके काव्य में प्रकृति–चित्रण, समाज निरपेक्ष अधिक है। इन कवियों ने प्रकृति के अनेक बिंब व्यक्त किए हैं। साथ ही कृषक चेतना के भी दर्शन होते हैं।
6. **काव्यभाषा, छंद और लय–** नई कविता ने उत्तराधिकार में प्राप्त समस्त प्रभावों के प्रति सजगता व्यक्त करते हुए शब्दार्थ की आंतरिक अन्विति पर आधारित एक ऐसा सौंदर्यबोध विकसित किया जिसमें खड़ी बोली का खड़ापन बाधक न होकर साधक तत्व बन गया। इस काल में गद्य–पद्य की भाषा इतनी निकट आ गई कि विभाजन करना कठिन हो गया। कवियों ने बोलचाल के शब्द प्रयोग किए; यथा–

   देवता इन प्रतीकों से कर गए हैं कूच
   कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है।

   कवियों ने मुक्तछंद को अपनाया है जिससे गद्यात्मकता को बढ़ावा मिला। नए कवियों ने 'शब्द की लय' के स्थान पर 'अर्थ–की लय' को प्रधानता दी। संगीत से मुक्त कविता को इन्होंने 'शुद्ध कविता' कहा है।

टिप्पणी

7. **प्रतीक और बिंब–** नई कविता में प्रतीक का महत्वपूर्ण स्थान है। नए कवियों ने पौराणिक प्रतीकों का प्रयोग किया है। साथ ही जीवन और प्रकृति के विविध रूपों से भी प्रतीक ग्रहण किए हैं। बिंब–विधान भी इन कवियों की प्रमुख प्रवृत्ति रही है। काव्य–बिंबों में मानव जीवन के यथार्थ की अभिव्यक्ति हुई है। वस्तुतः नई कविता को उत्कृष्ट रूप देने में संश्लिष्ट काव्य–बिंबों का प्रमुख स्थान है।

मूल्यांकन

वस्तुतः नई कविता प्रयोगवाद का विकास है। व्यक्ति स्वातंत्र्य, वैयक्तिक अनुभूति की समझ, क्षणबोध, मानव की लघुता की महत्ता इस कविता की पहचान है। यह सामाजिक यथार्थ की मध्यवर्गीय अभिव्यक्तियां थीं।

नवगीत : प्रतिनिधि रचनाकार एवं साहित्यिक विशेषताएं

नवगीत समकालीन हिन्दी कविता की महत्वपूर्ण विधा है। इसकी रूपरेखा छठे दशक के उत्तरार्द्ध में तैयार की गई। विषम परिस्थितियों में, कुछ जागरूक रचनाकारों ने 'नवगीत' का उद्घोष किया। लोकचेतना और लोकधुनों के संस्पर्श से इन रचनाकारों ने गीतिकाव्य को एक नई गरिमा और अर्थवत्ता प्रदान की। प्रमुख गीतकार हैं– शंभूनाथसिंह, ठाकुरप्रसाद सिंह, रामदरश मिश्र, रवीन्द्र भ्रमर, ओम प्रभाकर आदि। नवगीत ने अपना संबंध जीवन के संघर्ष और लोकधर्मी अनुभूतियों से जोड़ा। जीवन के अनुभवों को गीतों में उतारा गया। आम–आदमी के दुःख और संघर्ष के गीत गाए गए। लोकगीतों की जीवंतता, सहज संप्रेषणीयता और सरलता को अपनाकर जनवादी नवगीत को नई शक्ति और ऊर्जा प्राप्त हुई; यथा–

'रूप के भाग में चीर
अपने तो भाग, मजदूर के भाग हैं
भाल पै स्याम लकीर। (रमेश रंजक)

काव्यभाषा, प्रतीक और बिंब

इस काल की भाषा सपाट है। कवियों ने सृजनात्मक प्रयोग भी किए हैं। चमत्कार एवं आडंबर के स्थान पर सपाटबयानी प्रमुख है। गद्यात्मकता का समावेश है, लय तथा संगीतात्मकता का अभाव पाया जाता है। बिंब एवं प्रतीकों की कवियों ने योजना की है। प्रतीक जीवन से ही लिए गए हैं। बिंबों में जीवन के मर्मस्पर्शी चित्र हैं।

प्रमुख कवि

समकालीन कविता के प्रमुख कवि हैं– जगदीश चतुर्वेदी, लीलाधर जगूड़ी, धूमिल, राजकमल चौधरी, सौमित्र मोहन, मंगलेश डबराल, अशोक वाजपेयी, शंभुनाथ सिंह, रमेश रंजक, असद जैदी, इब्बार रब्बी आदि।

मूल्यांकन

इस प्रकार समकालीन कविता विविध चरणों से गुजरी है। सपाटबयानी, बिंबात्मकता, यथेष्ठ का चित्रण, निषेधात्मकता, जनवादी सोच इसकी प्रधान विशेषताएं हैं। यह कविता युवावर्ग

की मानसिकता का प्रतिबिंब है। प्रारंभ में यह अतिक्रांतिकारिता से ग्रस्त थी किंतु बाद में यह संतुलित व संयमित रूप से पाठकों के समक्ष आई।

टिप्पणी

समकालीन कविता : प्रतिनिधि रचनाकार एवं साहित्यिक विशेषताएं

नई कविता की दोनों धाराओं व्यक्तिवादी–आधुनिकतावादी तथा प्रगतिशीलता का विकास हम समकालीन कविता में देख सकते हैं। हिन्दी में समकालीन कविता जैसी कोई काव्य–प्रवृत्ति नहीं है। नई कविता के बाद के दौर में उभरे विभिन्न काव्यांदोलनों, काव्यधाराओं और काव्य प्रवृत्तियों को ही समकालीन कविता कहा गया है।

वस्तुतः साठ के बाद के दशक की कविता जिसे साठोत्तरी कविता नाम दिया गया है, कुछ अन्य नाम अकविता, विद्रोही कविता, नूतन कविता, सहज कविता, विचार कविता, सनातन सूर्योदयी कविता, युयुत्सावादी कविता आदि विभिन्न नामों के साथ सातवें दशक में युवा कवि नए तेवर और नई भंगिमा के साथ उभर रहे थे परंतु इनमें से एक भी नाम और आंदोलन हिन्दी काव्य–परंपरा में स्थायी महत्व नहीं प्राप्त कर सका। सभी आंदोलन क्षणजीवी सिद्ध हुए।

भारत की स्वतंत्रता के बाद जनता में जो उमंग व उत्साह था वह धूल–धूसरित होने लगा। बेरोजगारी, भुखमरी, सूखा, बाढ़ आदि ने लोगों के कष्टों को बढ़ाया। वामपंथी तथा प्रगतिशील आंदोलन भी अंतर्विरोधों के कारण बिखर गया। अतः युवा वर्ग निराशावाद में डूब गया। ऐसे में नकारने के विद्रोही तेवर अपनाते हुए हर चीज को और अपने आपको भी निरर्थक मानने लगे।

इस बीच 1962 के भारत–चीन युद्ध एवं 1965 के भारत–पाकिस्तान युद्ध ने स्थितियों को और भी बदतर बना दिया। नक्सलवादी आंदोलन भी प्रारंभ हो गया। धीरे–धीरे परिवर्तन की आकांक्षा ने जन्म लिया, जिसने कविता को नया प्रेरणा संसार दिया। ऐसे में पुनः 1975 के आपातकाल के बाद की स्थिति भयावह हो गई। जिससे साहित्यकार सकते में आ गए। राजनीतिक–सामाजिक परिस्थितियां 1977 से बदलने लगीं तथा जातिवाद, क्षेत्रीयवाद, राष्ट्रीय एकता व अखंडता के प्रश्न उठने लगे। समकालीन कविता में मुख्यतः साठोत्तरी कविता, प्रगतिशील–जनवादी कविता एवं नवगीत परंपरा नामक काव्यधाराएं भी चलीं। समकालीन कविता की प्रमुख प्रवृत्तियां निम्न हैं–

1. **विचारों से विदाई**– राजनीतिक विचारधारा से इन कवियों का कोई सरोकार नहीं है। इनके लिए व्यक्ति सत्ता तथा अनुभूत सत्य ही काव्य का एवं जीवन का दर्शन है। साथ ही सामाजिक आदर्श भी बौद्धिक चेतना से अनुप्राणित है; यथा–

    कुछ लोग मूर्तियां बनाकर / फिर
    बेचेंगे क्रांति की (अथवा षड्यंत्र की)
    कुछ और लोग / सारा समय
    कसमें खायेंगे लोकतंत्र की।

2. **व्यर्थता–बोध**– विचारहीन विद्रोह एवं पराजय–भावना ही कवियों को व्यर्थता बोध की ओर ले गई। यथार्थ के प्रति कुंठा ने इन्हें असहाय बनाया तथा इसे इन कवियों ने नियति मान लिया। यहां विरोध का स्वर व्यंग्य नहीं, ऊब है; यथा–

    चारों तरफ मुर्दानी है
    भीड़ है और कूड़ा है
    हर व्यस्तता
    और अधिक अकेला कर जाती है।

3. **अकेलेपन का भाव**– वर्तमान में मनुष्य यांत्रिक हो गया है, जिससे वह स्वयं को 'अकेला' व 'अजनबी' महसूस करने लगा है। महानगरों की भीड़ में भी वह स्वयं को इकाई के रूप में देखता है, पाता है।
4. **नारी के प्रति पतनोन्मुख दृष्टिकोण**– नारी के प्रति सम्मान का अभाव देखा गया है। नारी को मात्र 'वस्तु' के रूप में देखा एवं व्यक्त किया गया। अगर नारी किसी भाव या विचार को व्यक्त करने के लिए आई भी तो केवल विकृत रूप में। वह सामूहिक उपभोग की वस्तु के रूप में व्यक्त हुई।
5. **निषेधात्मकता**– ये कवि भावुकता, आदर्शवादिता, प्रेम, नैतिक मूल्यों के प्रति निषेधात्मक दृष्टिकोण अपनाते हैं। मूल्यों के प्रति यह संदेहवाद और निषेध जीवन में भी व्याप्त दिखाई देता है।
6. **प्रगतिशील जनवादी विचारधारा**– समकालीन कविता के कुछ कवि यथा शमशेर बहादुर सिंह, गजानन माधव मुक्तिबोध, रघुवीर सहाय, केदारनाथ सिंह आदि कवियों की कविताओं पर उक्त व्यक्तिवादी एवं निषेधात्मक दृष्टिकोण का प्रभाव नहीं पड़ा है। ये प्रगतिशील जनवादी कवि थे इनमें धूमिल, लीलाधर जगूड़ी, मंगलेश डबराल को भी सम्मिलित किया जा सकता है। ये आशावादी विचारधारा के कवि रहे हैं।

1.4 सारांश

इतिहास वह सामाजिक शास्त्र है जो हमें भूतकाल के लोगों के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक जीवन का परिचय कराता है। यह वर्णन क्रमबद्ध वैज्ञानिक विवेचन होता है। वैज्ञानिक दृष्टि से इतिहास में घटनाओं, परिस्थितियों या क्रियाकलापों और रचनाओं की व्याख्या कालक्रमानुसार होती है, किंतु इसका अर्थ यह भी नहीं है कि यदि हम किसी भी विषय की घटनाओं या रचनाओं का विवरण कालक्रमानुसार कर दें तो वह 'इतिहास' की संज्ञा का अधिकारी हो जाएगा। वस्तुतः इतिहास का लक्ष्य घटनाओं या रचनाओं का विवरण प्रस्तुत करना मात्र नहीं होता, अपितु वह उनमें घटित या रचित होने के कारणों एवं आधारभूत तथ्यों की खोज करता है।

इतिहास केवल अतीत ही नहीं है, वरन वर्तमान का पुनर्मूल्यांकन भी है। यह भविष्य की कल्पना भी है। इस प्रकार, यह वर्तमान और भविष्य का सेतु भी है। दूसरे शब्दों में, यदि

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

4. हिन्दी कविता का वर्तमान युग कब से प्रारंभ होता है?
5. कहानी विधा की प्रथम मौलिक एवं श्रेष्ठ कहानी कौन–सी थी?
6. सही–गलत बताइए–
    (क) अज्ञेय को प्रयोगवाद का प्रवर्त्तक माना जाता है।
    (ख) प्रताप नारायण मिश्र द्विवेदी युग के साहित्यकार माने जाते हैं।

यह कहें कि इतिहास मात्र बीते दिनों का लेखा–जोखा नहीं, अपितु वर्तमान का संवाद भी होता है, इस प्रकार सदैव प्रासंगिकता सिद्ध करता है।

टिप्पणी

साहित्य का इतिहास अतीत में लिखे गए साहित्य या साहित्यकार का ब्यौरा मात्र नहीं है। जिस प्रकार इतिहास आज राजाओं के जीवन–चरित्र एवं राजनीतिक घटनाओं का संकलन मात्र नहीं है, उसी प्रकार साहित्य का इतिहास मात्र रचनाओं और रचयिताओं का परिचय–ग्रंथ नहीं है। किसी भी साहित्य के इतिहास को समझने के लिए उससे संबंधित जातीय परंपराओं, राष्ट्रीय और सामाजिक स्थिति एवं सामाजिक परिस्थितियों का विवेचन–विश्लेषण ज़रूरी है। इसका कारण यह है कि किसी भी देश का साहित्य उस देश के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक वातावरण को प्रतिबिंबित करता है।

साहित्य का इतिहास मानव चिंतनधारा के विकासक्रम को निरूपित करने के साथ–साथ अभिव्यंजना–शिल्प के क्रमिक विकास को भी दर्शाता है। उसमें युगविशेष के व्यक्तित्व का उद्घाटन होता है। जहां एक ओर जातीय जीवन की प्रामाणिक झांकी देखने को मिलती है, वहीं दूसरी ओर साहित्यिक मूल्यों का मूल्यांकन भी होता है। यह एक ऐसी विधा है, जिसमें शोध, इतिहास, समीक्षा सबके तत्व सम्मिलित होते हैं।

किसी भी साहित्य का इतिहास लिखते समय इतिहासकार को कई चरणों से गुजरना पड़ता है। इसमें स्रोत–सामग्री का संकलन प्रमुख है। तत्पश्चात वह विशिष्ट रचनाकारों और रचनाओं की पहचान करता है। परंपरा के वैज्ञानिक अनुशीलन के उपरांत काल–विभाजन व नामकरण की समस्या पर विचार करता है। इस हेतु वह विभिन्न प्रवृत्तियों का अवलोकन व विश्लेषण करता है। तदुपरांत वह युगविशेष और प्रवृत्ति के अंतर्संबंध का विश्लेषण करते हुए वर्तमान संदर्भ में उनका मूल्यांकन करता है।

हिन्दी साहित्येतिहास लेखन के लिए रुझान उन्नीसवीं शती के आरंभ से हुआ। यद्यपि इससे पूर्व भी यदा–कदा रचनाकारों के जीवनवृत्त व कृतित्व का परिचय देने की परंपरा रही, किंतु इसे पूरी तरह इतिहास–लेखन की संज्ञा नहीं दी गई। चौरासी वैष्णवन की वार्ता, दो सौ वैष्णवन की वार्ता भक्तमाल, कविमाला, कालिदास–हजारा आदि ऐसे ही ग्रंथ हैं।

इतिहास को स्पष्ट रूप से समझने के लिए काल–विभाजन और नामकरण आवश्यक है। साहित्येतिहास भी इसका अपवाद नहीं है। किसी भी चीज़ का व्यवस्थित अध्ययन करने के लिए यह आवश्यक है। इसके बिना दिशाहीनता की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। वस्तुतः काल–विभाजन से साहित्य के विकास की दिशा, विकास को प्रभावित करने वाले तत्वों, विभिन्न परिवर्तनों और मोड़ों का पता चलता है।

काल–विभाजन एवं नामकरण करने की आवश्यकता इस कारण से भी है, क्योंकि साहित्य सतत प्रवाहमान है तथा प्रत्येक समय की परिस्थितियां बदलती रहती हैं, अतः उन परिस्थितियों के अनुसार नामकरण आवश्यक है। इसी क्रम में उस बदलाव को काल में विभक्त किया जाना आवश्यक होता है।

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने शुक्ल जी द्वारा दिए गए 'वीरगाथाकाल' को 'आदिकाल' ही कहा। डॉ. रामबहोरी शुक्ल एवं डॉ. भगीरथ प्रसाद मिश्र का 'हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास' ग्रंथ भी प्रकाश में आया है। आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने अपने 'हिन्दी–साहित्य के अतीत' में भी रीतिकाल के नामकरण एवं अंतर्विभाजन के क्षेत्र में नया प्रयास करते हुए भी शेष बातों में पूर्ववर्ती परंपरा का निर्वाह किया है। राहुल सांकृत्यायन ने आदिकाल को 'सिद्ध सामंत युग' की संज्ञा दी।

टिप्पणी

आधुनिक काल को शुक्ल जी ने 'गद्यकाल' की संज्ञा दी है, किंतु इस काल में आधुनिक हिन्दी कविता बहुमुखी होकर विकसित हुई और इसी काल के द्वितीय चरण में आकर कविता में भाषाई क्रांति आई। अब कविता खड़ी बोली हिन्दी में रची जाने लगी। इस प्रकार हिन्दी में पहली बार आधुनिक हिन्दी साहित्य का विकास गद्यात्मक और पद्यात्मक दो प्रकार से हुआ।

हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग का प्रारंभ कब से माना जाए इस विषय में विद्वानों के भिन्न–भिन्न मत हैं। सामान्यतया इसका प्रारंभ संवत 1900 अर्थात 1843 ई. से माना जाता है। कुछ विद्वानों ने 1857 से नवीन सामाजिक–राजनीतिक चेतना के प्रादुर्भाव का संदर्भ जोड़ते हुए यहीं से आधुनिक काल का प्रारंभ माना। इस संदर्भ में डॉ. नगेन्द्र का मत विचारणीय है– "सामान्यतया रीतिकाल के अंत (1843) से आधुनिक काल का आरंभ मानने की परंपरा रही है, नवीन सामाजिक–राजनीतिक चेतना के संवहन के फलस्वरूप सन् 1857 को भी यह गौरव दिया जाता है, किंतु साहित्य–क्षेत्र में नई विचारधारा का प्रवेश वस्तुतः भारतेंदु के रचनाकाल से हुआ। इसके पूर्ववर्ती कालखंड की गणना आधुनिक काल के अंतर्गत तो होगी, किंतु उसे भारतेंदु युग की पूर्वपीठिका के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।"

रीतिकाल की शृंगारिक कविता के बाद हिन्दी साहित्य में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ। साहित्य में ब्रजभाषा का स्थान खड़ी बोली ने ले लिया। भारतेंदु युग की परिस्थितियां लगभग वही हैं, जो आधुनिक युग की रही हैं। हिन्दी कविता का वर्तमान युग भारतेंदु युग से ही प्रारंभ होता है। भारतेंदु हरिश्चंद्र के आगमन से हिन्दी भाषा और साहित्य को एक नई राह मिली। भाषा का शिष्ट और सामान्य रूप लाने का श्रेय भारतेंदु को ही है। अब तक भक्ति व शृंगार संबंधी रचनाएं हो रही थीं। भारतेंदु ने हिन्दी साहित्य को जन जीवन से जोड़ने के लिए तत्कालीन परिस्थितियों के अनुकूल नए–नए विषयों को साहित्य में स्थान दिया। भारतेंदु ने भाषा की शक्ति को पहचाना और सबल शब्दों में घोषणा की– निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।

आधुनिक काल का द्वितीय युग 'द्विवेदी युग' कहलाता है। भाषा साहित्य के क्षेत्र में अराजकता एवं उच्छृंखलता का वातावरण बन गया। ऐसे में महावीर प्रसाद द्विवेदी का आगमन होता है। उन्होंने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से हिन्दी को अराजकता के घेरे से बाहर निकाला। द्विवेदी युग की परिस्थितियां भी लगभग भारतेंदु युग जैसी ही थीं। भारत अंग्रेज़ों के चंगुल में फंस चुका था। 'युगांतर' और 'संध्या' पत्रिका द्वारा जन जागरण का कार्य किया गया। 'वन्देमातरम्' के नारों द्वारा जनता में जोश और उमंग को बुलंद किया गया। 'वन्देमातरम्' शब्द पर नियंत्रण लगा कर जनता की आवाज को बंद करने का षड्यंत्र रचा। इस समय गांधीवादी विचारधारा समस्त राष्ट्र में व्याप्त थी।

टिप्पणी

आधुनिक काल का तीसरा युग 'छायावाद' के नाम से अभिहित किया जाता है। हिन्दी काव्यधारा के विकास में छायावाद का महत्वपूर्ण स्थान है। इस काल में जयशंकर प्रसाद, निराला, पंत व महादेवी वर्मा जैसे प्रमुख साहित्यकार हुए। छायावाद ने न केवल अंतर्वस्तु के स्तर पर वरन् काव्य–भाषा और संरचना–शिल्प की दृष्टि से भी हिन्दी कविता को समृद्ध किया है और उसे उत्कर्षता प्रदान की है। इस काल में साहित्य, संगीत एवं कला तीनों का समन्वय उत्पन्न हुआ। नई उपमा, नए प्रतीक, नए अलंकार प्रयुक्त हुए। काव्य के क्षेत्र में आए इस अरुणोदय को पहले तो कुछ साहित्याचार्यों ने हल्केपन से 'छायावादी काव्य' नाम से अभिहित किया। किंतु बाद में साहित्य–सुधियों द्वारा यही नाम इस अभिनव अरुणोदयी काव्यधारा का अभिधान बन गया।

छायावाद के बाद एक सशक्त साहित्यिक आंदोलन के रूप में प्रगतिवाद का उदय हुआ। प्रगतिवाद का उदय 1936 में लखनऊ में 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना से माना जाता है। व्यक्ति की मुक्ति का जो लक्ष्य छायावादी कवियों के सामने था, उसका स्थान समाज और राष्ट्र की मुक्ति ने ले लिया।

प्रगतिवादी काव्यधारा ने हिन्दी कवियों को बहुत दूर तक प्रभावित किया। निराला, पंत, नरेन्द्र शर्मा जैसे कवि भी इससे अछूते नहीं रहे। इसके अलावा रामविलास शर्मा, नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, शमशेर बहादुर सिंह, गजानन माधव मुक्तिबोध, त्रिलोचन शास्त्री भी इसी काव्यधारा की देन थे।

प्रगतिवाद के बाद का काल 'प्रयोगवाद' के नाम से अभिहित किया गया। सन् 1943 में अज्ञेय ने 'तारसप्तक' का प्रकाशन किया तथा लिखा– " ...... संग्रहित कवि प्रयोग को कविता का विषय मानते हैं। वे किसी स्कूल के नहीं हैं, किसी मंजिल पर पहुंचे हुए नहीं हैं, अभी राही हैं, राही नहीं, राहों के अन्वेषी।" अज्ञेय के इस कथन से ही 'प्रयोगवाद– की चर्चा होने लगी।

प्रयोगवादी काव्य के समय देश स्वतंत्र हो चुका था। मध्यवर्ग के सम्मुख कोई आदर्श नहीं था। सामूहिकता की भावना के शिथिल पड़ने के साथ व्यक्तिवाद ने जोर पकड़ा। व्यक्ति स्वातंत्र्य की मांग ज़ोर पकड़ने लगी। प्रगतिवादी आंदोलन क्षीण होता जा रहा था। प्रयोगवाद नई सोच का वाहक बनकर प्रवर्तित हुआ। प्रयोगवादी कवि केवल प्रयोगशीलता को ही काव्य का धर्म मानते हैं, वरन् काव्य के कलापक्ष और रूपपक्ष पर भी बल देते हैं। अज्ञेय प्रयोग को दोहरा साधन मानते हैं– एक तो सत्य को जानने का साधन तथा दूसरे उस प्रेषण की क्रिया को जानने का। अतः प्रयोग का संबंध नई विषय–वस्तु की खोज भी है तथा उस विषयवस्तु को प्रेषित करने के ढंग में भी है।

प्रत्येक युग में समाज में कुछ परिवर्तन आते हैं। स्वतंत्रता के परवर्ती युग में परंपरागत सामाजिक मान्यताएं टूटने लगीं। व्यक्ति अपनी स्वतंत्र सत्ता की प्रतिष्ठा पाने लगा। परंपरागत मूल्यों के प्रति युवा पीढ़ी के मन में वितृष्णा पैदा हुई। व्यक्तिवादी चिंतन के कारण परंपरागत पारिवारिक मूल्यों में भी विघटन हुआ। इसी प्रकार धर्म, संस्कृति एवं समाज के प्रति भी आस्था बदली। नयी पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के बीच संघर्ष होने लगा। संयुक्त

टिप्पणी

परिवार प्रणाली टूटने लगी। औद्योगीकरण के कारण नगरीय सभ्यता का विकास हुआ। व्यक्तिवादी चिंतन के कारण परंपरागत पारिवारिक मूल्य बदल गए।

नई कविता की दोनों धाराओं व्यक्तिवादी–आधुनिकतावादी तथा प्रगतिशीलता का विकास हम समकालीन कविता में देख सकते हैं। हिन्दी में समकालीन कविता जैसी कोई काव्य–प्रवृत्ति नहीं है। नई कविता के बाद के दौर में उभरे विभिन्न काव्यांदोलनों, काव्यधाराओं और काव्य प्रवृत्तियों को ही समकालीन कविता कहा गया है।

1.5 मुख्य शब्दावली

- **अतीत** : भविष्य
- **यथार्थ** : सच्चाई।
- **अभिप्राय** : तात्पर्य, अर्थ।
- **प्रतिबिंब** : आईना, दर्पण।
- **आयाम** : चरण।
- **सामंजस्य** : तालमेल।
- **अनुसंधान** : खोज।
- **प्रौढ़** : वृद्ध।
- **प्रादुर्भाव** : आरंभ, उदय।
- **दृष्टिगोचर** : दिखाई देना।
- **प्रतीक** : चिह्न।
- **प्राचीन** : पुरानी।
- **विभाजन** : बंटवारा।
- **बेड़ी** : जंजीर।

1.6 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर

1. सातवीं सदी से
2. 'सिद्ध सामंत युग' की
3. (क) गलत, (ख) सही
4. भारतेन्दु युग से
5. चंद्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था'
6. (क) सही (ख) गलत

1.7 अभ्यास हेतु प्रश्न

टिप्पणी

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. साहित्येतिहास लेखन के विविध पक्ष कौन–से हैं?
2. इतिहास से क्या तात्पर्य है?
3. हिन्दी साहित्य में काल–विभाजन का आधार क्या है?
4. भारतेन्दु युग की प्रमुख विशेषताएं कौन–सी हैं?
5. द्विवेदी युग के प्रमुख साहित्यकार कौन–कौन से हैं?

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. हिन्दी साहित्येतिहास के अध्ययन की पूर्वपीठिका पर विस्तार से प्रकाश डालिए।
2. हिन्दी साहित्य के काल–विभाजन, सीमा निर्धारण एवं नामकरण की व्याख्या कीजिए।
3. भारतेन्दु एवं द्विवेदी युग का परिचय तथा प्रवृत्तियों का उल्लेख कीजिए।
4. छायावाद, प्रगतिवाद एवं प्रयोगवाद का तुलनात्मक विश्लेषण कीजिए।
5. स्वातंत्र्योत्तर कविता के परिचय एवं प्रवृत्तियों की समीक्षा कीजिए।

1.8 आप ये भी पढ़ सकते हैं

- द्विवेदी, हजारी प्रसाद, *हिंदी साहित्य : उद्‌भव और विकास*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
- नगेंद्र, *हिंदी साहित्य का इतिहास*, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
- पांडेय मैनेजर, *साहित्य और इतिहास दृष्टि*, पीपुल्स लिटरेसी, दिल्ली।
- शर्मा, नलिन विलोचन, *साहित्य का इतिहास–दर्शन*, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना।
- गणपति चंद्र गुप्त, *हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास*, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
- आचार्य रामचंद्र शुक्ल, *हिंदी साहित्य का इतिहास*, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

इकाई 2 छायावादी कवि

टिप्पणी

इकाई की रूपरेखा

2.0 परिचय
2.1 इकाई के उद्देश्य
2.2 जयशंकर प्रसाद : सामान्य परिचय
2.2.1 जयशंकर प्रसाद : पाठ्यांश – अरुण यह मधुमय देश हमारा, हिमाद्रि तुंग शृंग से
2.2.2 काव्यगत विशेषताएं
2.2.3 प्रसाद काव्य में जागरण के स्वर
2.3 सुमित्रानन्दन पन्त : सामान्य परिचय
2.3.1 सुमित्रानन्दन पन्त : पाठ्यांश – पर्वत प्रदेश में पावस, अनित्य जग
2.3.2 पन्त काव्य में प्रकृति
2.3.3 छायावादी काव्य भाषा और पन्त
2.4 सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' : सामान्य परिचय
2.4.1 सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' : पाठ्यांश – तोड़ती पत्थर, भारति! जय विजय करे!
2.4.2 छायावाद और निराला
2.4.3 निराला के काव्य में प्रगति और विद्रोह के स्वर
2.5 महादेवी वर्मा : सामान्य परिचय
2.5.1 महादेवी वर्मा : पाठ्यांश – विरह का जलजात जीवन, रूपसि तेरा घन केशपाश
2.5.2 विरह वेदना
2.5.3 महादेवी वर्मा की कविता में छायावादी तत्त्व
2.6 सारांश
2.7 मुख्य शब्दावली
2.8 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर
2.9 अभ्यास हेतु प्रश्न
2.10 आप ये भी पढ़ सकते हैं

2.0 परिचय

हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल साहित्यिक संवेदना, सामाजिक सरोकार और आधुनिक चेतना की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। भारतेंदु युग और द्विवेदी युग के बाद हिन्दी साहित्य में छायावाद के नाम से काव्य आंदोलन आया। छायावादी कविता के प्रमुख कवियों में जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पन्त, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला और महादेवी वर्मा हैं। साहित्य और विचार की दृष्टि से छायावादी कविता श्रेष्ठता का पर्याय है।

हिन्दी का छायावादी काव्य प्रथम एवं द्वितीय विश्वयुद्ध के बीच एवं भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के समय में लिखा जा रहा था। इसलिए छायावादी कविता में देश और दुनिया की हलचलें उपस्थित हैं। किन्तु छायावादी कविता की संवेदना सांस्कृतिक है, राजनीतिक नहीं। इसीलिए छायावादी कविता के सरोकार अपनी पूर्ववर्ती साहित्यिक धाराओं की तरह सतह पर नहीं दिखते। छायावादी कविता की व्यजंना स्थूल नहीं सूक्ष्म है। मुख्य रुप से देखें तो छायावाद का समय शक्ति के संधान का समय है। शक्ति की मौलिक कल्पना का समय है। शक्ति का संधान प्रत्येक क्षेत्र में अपने–अपने ढंग से हो रहा था। सामाजिक–राजनीतिक

क्षेत्र में जो कार्य गोखले–गांधी अपने ढंग से कर रहे थे, वही कार्य छायावादी कवि अपनी तरह से कर रहे थे।

टिप्पणी

छायावादी कविता में राष्ट्रीयता, देश की स्वाधीनता का भाव, गांधीवादी विचारों के प्रति लगाव, अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीतियों के प्रति आक्रोश का भाव उपलब्ध है। वर्षों की दासता से मुक्ति की आकांक्षा में पूरा देश खड़ा हो गया था। आधुनिक शिक्षा और चेतना ने भारतीय बुद्धिजीवियों के सामने सोच–समझ के नये दरवाजे खोल दिये थे। भारतीय जनमानस में आये इन परिवर्तनों को छायावादी कवियों ने प्रमुख काव्य–स्वर बनाया।

जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला और महादेवी वर्मा जैसे रचनाकारों ने अपनी कविता में अपने इसी युग–चेतना के विभिन्न स्वरों को उच्च साहित्यिक मानदण्डों पर प्रस्तुत किया है। अपनी श्रेष्ठ साहित्यिक उपलब्धियों के कारण ही ये चारों रचनाकार छायावाद के चार स्तम्भ माने जाते हैं। जयशंकर प्रसाद की रचनाओं में आंसू, झरना, लहर, कामायनी, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला की रचनाओं में अनामिका, परिमल, गीतिका, तुलसीदास, अपरा आदि, सुमित्रानन्दन पन्त की रचनाओं में वीणा, पल्लव, गुंजन, ग्रन्थि आदि एवं महादेवी वर्मा की रचनाओं में नीहार, रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत, दीपशिखा आदि प्रमुख हैं। इनकी कविता में मनुष्य, समाज, देश और तार्किक आधुनिक विचार बिल्कुल मौलिक रूप में आये हैं, जो छायावाद ही नहीं पूरे हिन्दी साहित्य में अपना एक विशिष्ट स्थान और महत्व रखते हैं।

प्रस्तुत इकाई में छायावादी कविता के चार प्रमुख कवियों जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानन्दन पंत और महादेवी वर्मा की चुनी हुई प्रतिनिधि कविताओं की व्याख्या और कविताओं की मुख्य विशेषताओं का अध्ययन–विश्लेषण किया गया है।

2.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- छायावाद के प्रमुख कवियों से परिचित हो पाएंगे;
- प्रमुख छायावादी कवियों की प्रतिनिधि कविताओं का अध्ययन–विश्लेषण कर पाएंगे;
- छायावादी कविता के माध्यम से कविता और समाज के सम्बन्धों को समझ पाएंगे;
- छायावादी कविता के कथ्य, सौन्दर्य और विशेषताओं की पहचान कर पाएंगे।

2.2 जयशंकर प्रसाद : सामान्य परिचय

जयशंकर प्रसाद छायावाद के सर्वप्रमुख कवि हैं। प्रसाद का जन्म 30 जनवरी, सन् 1889 को वाराणसी (उ.प्र.) में हुआ था। जयशंकर प्रसाद का परिवार वाराणसी में प्रसिद्ध था। मान्यता है कि उनके पूर्वज कन्नौज के थे। यह परिवार व्यापारिक कारणों से पहले जौनपुर और 18वीं शताब्दी के आसपास वाराणसी में आया। समय के साथ प्रसाद के पूर्वजों के लिए

टिप्पणी

वाराणसी ही घर–द्वार बन गया। वाराणसी में तम्बाकू के व्यापार में इस परिवार को अभूतपूर्व सफलता मिली। धीरे–धीरे यह परिवार 'सुघनी साहू' के रूप में ख्यात हो गया। जयशंकर प्रसाद के पितामह शिवरत्न साहू काशी के बहुत ही प्रसिद्ध और लोकप्रिय थे। सुघनी साहू परिवार की प्रसिद्धि का आधार इनके तम्बाकू के व्यापार की समृद्धि के साथ–साथ इनकी धर्मपरायणता और सेवा–भाव भी था। सुघनी साहू का कुल अपने अन्य सरोकारों के साथ ही साहित्य, संगीत, धर्म, दर्शन एवं संस्कृति के प्रति लगावों के लिए भी प्रसिद्ध था। इन सभी क्षेत्रों के महत्वपूर्ण लोगों का आना–जाना हमेशा लगा रहता। जयशंकर प्रसाद के पिता देवीप्रसाद साहू ने भी अपने कुल की परम्परा के अनुसार ही व्यापार और व्यवहार दोनों क्षेत्रों में ही अपार सफलता प्राप्त की। देवीप्रसाद साहू विद्वानों का आदर करते थे। आये दिन साहू परिवार में विभिन्न विचारों के विद्वानों की महफिल जमी रहती। जिसका प्रभाव बालक जयशंकर प्रसाद पर भी पड़ रहा था।

समय के साथ सुघनी साहू परिवार की स्थिति भी बदली। धीरे–धीरे व्यापार की गति कम होने लगी। प्रसाद के पिता देवीप्रसाद साहू किसी तरह कुल–परम्परा का निर्वाह करते रहे। जब पिता का निधन हुआ तब प्रसाद की उम्र मात्र ग्यारह वर्ष थी। परिवार की जिम्मेदारी प्रसाद के बड़े भाई शंभुरत्न ने संभाली। किन्तु व्यापार में लगातार घाटा बढ़ता रहा। परिवार की आर्थिक स्थिति खराब हो गई। प्रसाद जब सोलह वर्ष के हुए बड़े भाई का निधन हो गया। परिवार का दायित्व जयशंकर प्रसाद पर आ गया। घर–परिवार, व्यापार की बिगड़ती स्थिति और कठोर यथार्थ ने जयशंकर प्रसाद के कोमल, भावुक एवं कवि मन को अत्यधिक प्रभावित किया। जिसकी अनुगूंज उनकी रचनाओं में उपलब्ध है।

जयशंकर प्रसाद ने संस्कृत, फारसी, हिन्दी और उर्दू का विधिवत् अध्ययन किया था। उनके लिए इन विषयों के श्रेष्ठ शिक्षक लगाये गये थे। पुराने संस्कृत ग्रंथों के साथ ही भारतीय धर्म–दर्शन में भी प्रसाद की गहरी रुचि थी।

जयशंकर प्रसाद ने कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी और निबन्ध जैसी विधाओं में महत्वपूर्ण लेखन कार्य किया है। वे हिन्दी साहित्य के एक ऐसे रचनाकार हैं जिन्होंने गद्य और पद्य दोनों में बराबर सफलता और प्रसिद्धि अर्जित की है। कई प्रकार की आर्थिक, शारीरिक एवं भावनात्मक संकटों के बीच 15 नवम्बर, 1937 को काशी में जयशंकर प्रसाद का निधन हुआ।

जयशंकर प्रसाद की रचनाएं

काव्य संग्रह

- प्रेम पथिक – 1910
- कानन कुसुम – 1912
- चित्राधार – 1918
- झरना – 1918
- आंसू – 1926
- लहर – 1935
- कामायनी – 1936

टिप्पणी

नाटक

- करुणालय – 1912
- राज्यश्री – 1915
- विशाख – 1921
- अजातशत्रु – 1922
- जन्मेजय का नागयज्ञ – 1926
- कामना – 1927
- स्कन्दगुप्त 1928
- एक घूंट – 1930
- चन्द्रगुप्त – 1931
- ध्रुवस्वामिनी – 1933

कहानी संग्रह

- छाया – 1912
- प्रतिध्वनि – 1926
- आकाशदीप – 1929
- आंधी – 1931
- इन्द्रजाल – 1936

उपन्यास

- कंकाल – 1929
- तितली – 1934
- इरावती – 1938

निबन्ध

- काव्यकला तथा अन्य निबन्ध – 1938

2.2.1 जयशंकर प्रसाद : पाठ्यांश – अरुण यह मधुमय देश हमारा, हिमाद्रि तुंग शृंग से

1. अरुण यह मधुमय देश हमारा

अरुण यह मधुमय देश हमारा।

जहां पहुंच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।।

शब्दार्थ : अरुण–लालिमा, मधुमय–मिठास से भरा हुआ, अनजान–जिसके विषय में हम जानते नहीं हैं, क्षितिज–वह कल्पित स्थान जहां पृथ्वी और आकाश मिलते हुए प्रतीत होते हैं।

टिप्पणी

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां भारतीय संस्कृति के रक्षक–संवर्द्धक और छायावाद के प्रतिनिधि कवि जयशंकर प्रसाद की हैं। यह कविता उनके प्रसिद्ध नाटक 'चंद्रगुप्त' से ली गई है। यह नाटक सन् 1931 में प्रकाशित हुआ था और यह मगध के महान सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य के ऐतिहासिक विजय पर केंद्रित है। जयशंकर प्रसाद ने इस नाटक की रचना गुलाम भारत के नागरिकों में राष्ट्रवादी चेतना के जागरण और देश की आजादी के लिए संघर्ष की भावना पैदा करने के लिए किया था। इस कविता में जयशंकर प्रसाद ने भारत की प्राकृतिक सुषमा के वर्णन के बहाने यह संदेश दिया है कि भारत ही वह देश है जहां सभ्यता का जन्म हुआ था। प्रातःकालीन सौंदर्य के वर्णन के समानांतर भारत में सभ्यता के जन्म का संकेत इस कविता में किया गया है।

प्रसंग : 'चंद्रगुप्त' नाटक में यह गीत सिकंदर के सेनापति यूनानी सेल्यूकस निकेटर की पुत्री कार्नेलिया के द्वारा गवाया गया है। एक विदेशी युवती द्वारा भारत की प्रशंसा में गाए गए इस गीत के द्वारा प्रसाद जी भारत की महान संस्कृति को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं।

व्याख्या : भारत देश के गौरव को बताते हुए कवि कहता है कि हमारा यह भारत देश सूर्य की तरह ऊर्जा और लालिमा लिए हुए है। इस देश का अतीत इतना उज्ज्वल है कि इसका नाम सारी दुनिया में सूर्य की तरह प्रकाशित हो रहा है। हमारा यह देश शहद की तरह मिठास लिए हुए है। यहां की सभ्यता और संस्कृति 'वसुधैव कुटुम्बकम' अर्थात सारी दुनिया एक परिवार की तरह है, के आदर्श से संचालित होती रही है। भारत देश ने सदियों से दुनिया के अलग–अलग हिस्सों से आने वाले लोगों का खुले मन से स्वागत किया है और उन्हें अपने परिवार के एक सदस्य के रूप में अपनाया है। प्रसादजी इस भाव को विराट रूप देते हुए कहते हैं कि आसमान और धरती का मिलन यदि कहीं संभव हुआ है तो वह भारतवर्ष में ही हुआ है। यहीं पर आकर अपरिचित क्षितिज को भी एक सहारा प्राप्त होता है।

विशेष : कार्नेलिया सम्राट सेल्यूकस निकेटर की पुत्री थी। सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य से युद्ध में परास्त होने के बाद सेल्यूकस निकेटर ने उनसे मित्रता की और संधि कर अपनी पुत्री कार्नेलिया का विवाह उनसे करा दिया। इस प्रकार मौर्य वंश की रानी बनकर कार्नेलिया का भारत आगमन हुआ।

सरस तामरस गर्भ विभा पर, नाच रही तरुशिखा मनोहर।
छिटका जीवन हरियाली पर, मंगल कुंकुम सारा।।
लघु सुरधनु से पंख पसारे, शीतल मलय समीर सहारे।
उड़ते खग जिस ओर मुंह किए, समझ नीड़ निज प्यारा।।

शब्दार्थ : तामरस–लाल कमल, विभा–प्रभा, कांति, किरण, रश्मि, तरुशिखा–वृक्ष की फुनगी, मनोहर–सुंदर, मंगल–कल्याण, कुंकुम–केसर, रोली, लघु–छोटा, सुरधनु,–इंद्रधनुष, शीतल–ठंडा, मलय–चंदन, समीर–हवा, खग–पक्षी, नीड़–चिड़ियों के बैठने का स्थान या घोंसला, निज–अपना।

सन्दर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां भारतीय संस्कृति के रक्षक–संवर्द्धक और छायावाद के प्रतिनिधि कवि जयशंकर प्रसाद की हैं। यह कविता उनके प्रसिद्ध नाटक 'चंद्रगुप्त' से ली गई है। यह नाटक सन् 1931 में प्रकाशित हुआ था और यह मगध के महान सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य के ऐतिहासिक विजय पर केंद्रित है। जयशंकर प्रसाद ने इस नाटक की रचना गुलाम भारत के नागरिकों में राष्ट्रवादी चेतना के जागरण और देश की आजादी के लिए संघर्ष की भावना पैदा करने के लिए किया था। इस कविता में जयशंकर प्रसाद ने भारत की प्राकृतिक सुषमा के वर्णन के बहाने यह संदेश दिया है कि भारत ही वह देश है जहां सभ्यता का जन्म हुआ था। प्रातःकालीन सौंदर्य के वर्णन के समानांतर भारत में सभ्यता के जन्म का संकेत इस कविता में किया गया है।

प्रसंग : उपर्युक्त पंक्तियों में सूर्योदय के समय सूर्य की किरणों से प्रकाशित भारत के सौंदर्य का चाक्षु–बिंब निर्मित किया गया है। इसमें सभ्यता के आरंभ से ही समस्त संसार को अपनी ओर आकर्षित करने की भारत की क्षमता का भी सांकेतिक एवं कलात्मक चित्रण किया गया है।

व्याख्या : यहां कवि ने सूर्य की उपमा लाल कमल से दी है। कवि कहता है कि सुबह का सूर्य सुंदर लाल कमल की तरह सुशोभित हो रहा है और उसकी किरणों के प्रकाश में वृक्षों की मनोहर फुनगियां नाच रही हैं। सूर्य की किरणें जीवन रूपी हरियाली पर फैली हुई हैं और चारों ओर कल्याण रूपी कुंकुम बिखरा हुआ है। यहां सूर्योदय के समय का चाक्षु–बिंब निर्मित किया गया है। सूर्य जब उदित होता है तो वह लाल कमल की तरह दिखता है और उसके प्रकाश से सबसे पहले वृक्ष का सबसे ऊपरी हिस्सा नाचता हुआ दिखाई देता है। धीरे–धीरे जब सूर्य की किरणें पृथ्वी की ओर फैलती हैं तो उसके प्रकाश में खेतों में फैली हुई हरियाली प्रकाशित होती है। सूर्य की लाल किरणें और पृथ्वी की हरियाली जब एक साथ मिलती है तो ऐसा लगता है जैसे चारों ओर रोली फैला दी गयी हो। कवि आगे कहता है कि सभ्यता के आरंभ में भारत में इतनी शांति थी कि यहां की हवाओं में चंदन की खुशबू थी। इस खुशबू से आकर्षित होकर पक्षी चंदन की तरह ही शीतल हवाओं के सहारे छोटे इंद्रधनुष की तरह अपने पंखों को पसारे हुए जिसे अपना प्यारा घर समझकर उस तरफ मुख किए हुए उड़ रहे हों, समझ लेना है कि वही हमारा प्यारा भारतवर्ष है। तात्पर्य यह कि सभ्यता के आरंभ से ही दुनिया भर से लोग भारत की अद्भुत प्राकृतिक सुषमा और शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व की सभ्यता से आकर्षित होते रहे हैं।

बरसाती आंखों के बादल, बनते जहां भरे करुणा जल।
लहरें टकरातीं अनन्त की, पाकर जहां किनारा।।
हेम कुम्भ ले उषा सवेरे, भरती ढुलकाती सुख मेरे।
मदिर ऊंघते रहते जब, जगकर रजनी भर तारा।।

शब्दार्थ : अनन्त– जिसका अंत न हो, हेम– सोना, कुम्भ– घड़ा, उषा– सुबह का सूर्य, मदिर– नशे में, रजनी– रात।

सन्दर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां भारतीय संस्कृति के रक्षक–संवर्द्धक और छायावाद के प्रतिनिधि कवि जयशंकर प्रसाद की हैं। यह कविता उनके प्रसिद्ध नाटक 'चंद्रगुप्त' से ली गई है।

यह नाटक सन् 1931 में प्रकाशित हुआ था और यह मगध के महान सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य के ऐतिहासिक विजय पर केंद्रित है। जयशंकर प्रसाद ने इस नाटक की रचना गुलाम भारत के नागरिकों में राष्ट्रवादी चेतना के जागरण और देश की आजादी के लिए संघर्ष की भावना पैदा करने के लिए किया था। इस कविता में जयशंकर प्रसाद ने भारत की प्राकृतिक सुषमा के वर्णन के बहाने यह संदेश दिया है कि भारत ही वह देश है जहां सभ्यता का जन्म हुआ था। प्रातःकालीन सौंदर्य के वर्णन के समानांतर भारत में सभ्यता के जन्म का संकेत इस कविता में किया गया है।

प्रसंग : उपर्युक्त पंक्तियों में सूर्योदय के समय के भारत की प्राकृतिक सुषमा का चित्रण किया गया है। इन पंक्तियों में बरसात, सूर्य और तारों का मानवीकरण किया गया है।

व्याख्या : कवि कह रहा है कि बरसात के बादल भारत की मिट्टी पर पहुंचकर करुणा के जल बन जाते हैं। तात्पर्य यह कि भारत की मिट्टी इतनी उपजाऊ है कि यहां बादल के बरसने के बाद समस्त मनुष्यता को जीवन देने वाले अन्न की पैदावार होती है। दुनिया के अन्य हिस्से में अनुपजाऊ जमीन और अनुपयुक्त वातावरण की वजह से बारिश का पानी निरर्थक हो जाता है जबकि भारत में वह जीवनदायी अन्न की पैदावार का कारण बनता है। अनन्त समुद्र की लहरें जिस जगह पर जाकर किनारा पाती हैं वह भारतवर्ष है। भारत के पूर्वी, पश्चिमी और दक्षिणी हिस्से में अरब सागर और प्रशांत महासागर पृथ्वी को स्पर्श करता है। कवि भारत के इसी भौगोलिक परिदृश्य को इन पंक्तियों में प्रस्तुत कर रहा है। सूर्योदय के पहले उषा रूपी स्त्री सोने के घड़े से इस देश में प्राकृतिक सुषमा रूपी सुख को फैलाती है। सूर्योदय के समय सूर्य की किरणें जब पृथ्वी पर पड़ती हैं तो चारों तरफ सुनहला रंग फैल जाता है। इस दृश्य को देखकर कवि को महसूस होता है कि इस स्वर्णिम सौंदर्य को उषा ने अपने सोने के घड़े से फैलाया है। इस दृश्य को देखकर कवि सुख और आनन्द का अनुभव कर रहा है। कविता की अंतिम पंक्ति में कवि कह रहा है कि रात भर के शयन की मादकता के बाद जगकर तारे जिस जगह पर नशे में ऊंघते हुए दिखाई दें वहीं हमारा प्यारा भारतवर्ष है। तात्पर्य यह कि दुनिया भर के इंसान ही नहीं सूर्य, तारे, बादल, समुद्र सब भारत की सुषमा से आकर्षित होकर इसकी ओर खींचे चले आते हैं और यहां आकर विश्राम पाते हैं।

2. हिमाद्रि तुंग शृंग से

हिमाद्रि तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयंप्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती
अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़–प्रतिज्ञ सोच लो
प्रशस्त पुण्य पंथ हैं – बढ़े चलो बढ़े चलो

शब्दार्थ : हिमाद्रि– बर्फ से भरी हुई, तुंग– पर्वत, शृंग– चोटी, प्रबुद्ध– जागा हुआ, जाग्रत, भारती– भारत माता, स्वयंप्रभा– स्वयं से प्रकाशित होने वाला, समुज्ज्वला– चमकता हुआ, अमर्त्य– जिसकी मृत्यु न हो, प्रशस्त– प्रशंसा योग्य, उत्तम।

सन्दर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां छायावाद के महान कवि जयशंकर प्रसाद के प्रसिद्ध नाटक 'चंद्रगुप्त' से ली गई हैं। 'चंद्रगुप्त' नाटक का प्रकाशन सन् 1931 में हुआ था। इन

पंक्तियों के माध्यम से जयशंकर प्रसाद आजादी के लिए संघर्ष कर रहे युवाओं का उत्साहवर्धन करते हैं।

प्रसंग : 'चंद्रगुप्त' की अलका तक्षशिला की राजकुमारी राष्ट्र–सेविका है। वह भारतीय नारी की प्रतीक है, जो देश के लिए आत्मोत्सर्ग करने हेतु तत्पर रहती है। जब यवन सेनापति सिल्यूकस की विशाल सेना भारत पर आक्रमण करने के उद्देश्य से पश्चिमोत्तर सीमा पर पड़ाव डालती है, तो राजकुमारी अलका अपने देश के सैनिकों में उत्साहवर्द्धन तथा कर्तव्यबोध का भाव भरने के लिए और उत्साह भरे गीतों से न केवल अपने सैनिकों में प्राण फूंकती है, अपितु वह राष्ट्र में भी प्राण फूंकती है।

व्याख्या : कवि भारत के लोगों को जाग्रत करने का प्रयास इस कविता में करते हैं। कवि कहता है कि हिमालय की सबसे ऊंची चोटी से आज जागी हुई और अत्यंत पवित्र मनोभावों वाली भारतमाता अपने बेटों को पुकार रही हैं। गुलामी के लंबे दौर की यातना से दुखी भारतमाता को अपने युवा बेटों से आजादी की उम्मीद है। वे हिमालय की सबसे उंची चोटी पर चढ़कर उन्हें पुकार रही हैं ताकि उनकी पुकार सब तक पहुंच सके। स्वयं से प्रकाशित होने वाली, समग्र प्रकाश या चैतन्यता से भरी हुई स्वतंत्रता की मूर्ति भारतमाता अपने युवा बेटों को पुकार रही है। आज भारतमाता अपने युवाओं से कह रही हैं कि तुम कभी न मरने वाले वीरों के बेटे हो इसलिए तुम्हें किसी भी प्रकार का भय अपने भीतर नहीं रखना है। तुम अपने मन में विचार कर यह दृढ़ प्रतिज्ञा कर लो कि तुम्हें स्वाधीनता के अपने लक्ष्य को प्राप्त करना है। स्वाधीनता प्राप्ति की तुम्हारी राह अत्यंत उत्तम और पवित्र है, इसको लेकर मन में किसी प्रकार की दुविधा मत रखो। इस उदात्त विचार के साथ ऐ मेरे भारत के वीरो! तुम अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बस आगे की ओर बढ़ते चलो, बढ़ते चलो।

असंख्य कीर्ति–रश्मियां विकीर्ण दिव्य दाह–सी
सपूत मातृभूमि के रुको न शूर साहसी
अराति सैन्य सिंधु में, सुबड़वाग्नि से जलो
प्रवीर हो जयी बनो बढ़े चलो बढ़े चलो

शब्दार्थ : असंख्य– जिसकी गणना करना संभव न हो, कीर्ति रश्मियां– यश की किरणें, विकीर्ण– फैलाया हुआ, छितराया हुआ, दाह सी– जलती हुई सी, शूर– योद्धा, अराति– दुश्मन, सिंधु– सागर, बड़वाग्नि– समुद्र में लगने वाली आग, प्रवीर– श्रेष्ठ योद्धा, जयी– विजयी।

सन्दर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां छायावाद के महान कवि जयशंकर प्रसाद के प्रसिद्ध नाटक 'चंद्रगुप्त' से ली गई हैं। 'चंद्रगुप्त' नाटक का प्रकाशन सन् 1931 में हुआ था। इन पंक्तियों के माध्यम से जयशंकर प्रसाद आजादी के लिए संघर्ष कर रहे युवाओं का उत्साहवर्धन करते हैं।

प्रसंग : इन पंक्तियों में कवि स्वाधीनता आन्दोलन में संघर्ष कर रहे युवाओं का उत्साहवर्द्धन करते हुए उनके विजयी होने की कामना कर रहे हैं।

व्याख्या : कवि कहता है कि वीरो! मातृभूमि की आजादी के रास्ते पर तुम आगे बढ़ो। जिस पथ पर तुम आगे बढ़ रहे हो उस पर यशरूपी अनेक किरणें अग्नि की विशिष्ट ज्वाला की तरह फैली हुई हैं। तात्पर्य यह कि देश की आजादी की लड़ाई में शामिल होने पर तुम्हारे यश की गाथा दूर–दूर तक गाई जाएगी। ये तुम्हारे मन के उत्साह को और बढ़ा देंगी; इसलिए हे भारतमाता के श्रेष्ठ पुत्रो! तुम कभी घबड़ा कर रुकना। तुम भारतमाता के वीर और साहसी पुत्र हो। तुम्हें दुश्मनों के सागर रूपी सेना में बड़वाग्नि की तरह जलते हुए प्रवेश करना है, अर्थात जैसे समुद्री आग बड़वाग्नि विशाल समुद्र के भीतर जलकर उसे जला देती है वैसे ही तुम्हें दुश्मनों की सेना के भीतर प्रवेश कर उन्हें समाप्त कर देना है। कविता की अंतिम पंक्तियों में अलका के माध्यम से भारत के वीर युवकों को संबोधित करते हुए कहती हैं कि तुम एक श्रेष्ठ योद्धा बनकर आजादी के इस युद्ध में विजयी होने के लिए आगे की ओर बढ़ते चलो, बढ़ते चलो।

2.2.2 काव्यगत विशेषताएं

जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रमुख कवि हैं। उनकी कविता में समूची भारतीय परम्परा और संस्कृति के उज्ज्वल पक्ष अपने पूरे वैभव के साथ आये हैं। प्रसाद मुख्यतः सांस्कृतिक चेतना के रचनाकार हैं। वे अपनी कविताओं के माध्यम से आधुनिक मनुष्य की विडम्बना, भटकाव और विचलन की पहचान करते हैं तथा एक प्रखर चेतना से युक्त मानव एवं समरस समाज के निर्माण में अपना योगदान देते हैं। प्रसाद का रचना संसार उनके जीवन–दर्शन की साहित्यिक अभिव्यक्ति है। प्रसाद पर सबसे अधिक प्रभाव 'शैव दर्शन' के 'प्रत्यभिज्ञा दर्शन' का है। किन्तु यह प्रसाद के रचना–कर्म की विशेषता है कि वे दार्शनिक विचारों को अपनी अनुभूति में इस कदर समाहित कर लेते हैं कि वह सहज और सुबोध बन जाते हैं। प्रसाद के साहित्य की काव्यगत विशेषताओं को निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर समझ सकते हैं–

आत्म की अभिव्यक्ति : प्रसाद के काव्य में आत्म की अभिव्यक्ति प्रमुख विशेषता है। आत्म की अभिव्यक्ति को प्रसाद स्वानुभूति की अभिव्यक्ति कहते हैं। प्रसाद मूलतः आत्मनिष्ठ कवि हैं। किन्तु उनकी आत्मनिष्ठता में कहीं भी समाज का विरोध नहीं है। प्रसाद की आत्मनिष्ठता का अर्थ यह है कि वे अक्सर निजी अनुभूतियों और विचारों को कलात्मक ढंग से अपने काव्य में प्रस्तुत करते हैं। वे अपनी अनुभूतियों को आत्मकथात्मक ढंग से प्रत्यक्ष तौर या दूसरे पात्रों या माध्यमों के द्वारा अप्रत्यक्ष तौर पर व्यक्त करते हैं। उनकी कविता में उनके ही जीवन के सुख–दुख, जय–पराजय, जीवन–जगत के अनेक चित्र और स्थितियों की भावपूर्ण अभिव्यंजना हुई है। किन्तु यह प्रसाद की काव्यात्मक सफलता ही है कि कवि का 'स्व' सबके 'स्व' में रूपान्तरित हो गया है–

उज्ज्वल गाथा कैसे गाऊं मधुर चांदनी रातों की,
अरे खिलखिलाकर हंसते होने वाली उन बातों की। (लहर कविता से)

या

जो घनीभूत पीड़ा थी, मस्तक में स्मृति सी छाई,
दुर्दिन में आंसू बनकर, वह आज बरसने आई। (आंसू कविता से)

वेदना का विस्तार : जयशंकर प्रसाद ने अपनी कविता में अपनी वेदना का अत्यंत साहित्यिक चित्रण किया है। वेदना प्रेम जनित भी है और जीवन के कठोर एवं कटु यथार्थ से उपजी हुई भी। प्रेम जनित वेदना के चित्र प्रसाद के काव्य में खूब मिलते हैं। प्रसाद जैसे बड़े कवि की यह विशेषता है कि वे निज वेदना का विस्तार उसके उदात्त स्वरूप में करते हैं जिससे वह सकल विश्व की वेदना के रूप में अभिव्यक्त होने लगती है–

वेदना विकल फिर आई,
मेरी चौदहो भुवन में।
सुख कहीं न दिया दिखाई,
विश्राम कहां जीवन में।

सहज प्रेम की स्वाभाविक स्वीकृति : प्रेम की अभिव्यक्ति हिन्दी साहित्य के लगभग सभी प्रमुख कालखण्डों में होती रही है। किन्तु छायावादी कविता में प्रेम के जिस रूप की स्वीकृति और महत्व मिला है, वह सहज प्रेम का उदात्त स्वरूप है। प्रसाद के काव्य में भी प्रेम अपने इसी सहज रूप में स्वीकृत और प्रतिष्ठित हुआ है। प्रसाद के काव्य में जो प्रेम है वह स्त्री–पुरुष के बीच का स्वाभाविक प्रेम है। उसमें कहीं से भी किसी प्रकार का आवरण या ओट नहीं लिया गया है। जबकि वीरगाथा काल में प्रेम का अर्थ पुरुष द्वारा अपनी वीरता के प्रदर्शन में और स्त्री पर अधिकार दर्शाना था। भक्तिकाल में प्रेम का अर्थ अध्यात्म था। रीतिकालीन कविता का प्रेम मांसल और स्थूल था, द्विवेदी युग का प्रेम आदर्शवादी था किन्तु प्रसाद के काव्य में चित्रित प्रेम आत्मा के आत्मविश्वास की तरह है। उसमें किसी प्रकार की कोई कुंठा नहीं है। प्रसाद का प्रेम सहज और स्वाभाविक है। वह बांधता नहीं मुक्त करता है। प्रेम की स्मृतियां भी प्रेम ही की तरह प्रिय हैं–

प्रत्यावर्तन के पथ में
पद चिन्ह न शेष रहा है,
डूबा है हृदय–मरुस्थल,
आंसू नद उमड़ रहा है।

सौन्दर्याभिव्यक्ति : प्रसाद का काव्य सौन्दर्य की अभिव्यक्ति का विशिष्ट काव्य है। उनकी कविता में जीवन के सत्य, शिव और सुन्दर अपने पूरे वैभव के साथ अभिव्यक्त हुए हैं। वे अखिल विश्व में, प्रकृति में, जड़–चेतन में एक अनंत और व्यापक सौन्दर्य को देखते हैं। जहां स्त्री सौन्दर्य के प्रसंग आते हैं वहां भी उनकी दृष्टि केवल स्त्री के बाहय सौन्दर्य पर नहीं, बल्कि अंतर्बाह्य के संतुलन पर होती है। प्रसाद का सौन्दर्य–बोध उदात्त और गरिमापूर्ण है। अपनी प्रसिद्ध कृति 'कामायनी' में वे श्रद्धा के सौन्दर्य का चित्रण करते हैं, जिसमें श्रद्धा के शारीरिक सौन्दर्य के साथ ही उनके भावों का भी पता चलता है–

नील परिधान बीच सुकुमार खुल रहा मृदुल अधखिला अंग,
खिला हो ज्यों बिजली का फूल मेघ वन बीच गुलाबी रंग।
आह! वह मुख! पश्चिम के व्योमबीच जब घिरते हों घनश्याम,
अरुण रविमंडल उनको भेद दिखाई देता हो छविराम।

या कि नव इंद्रनील लघुश्रृंग फोड़कर धधक रही हो कांत,
एक लघु ज्वालामुखी अचेत माधवी रजनी में अश्रांत।

प्रसाद के लिए सौन्दर्य परमात्मा के सात्विक वरदान की तरह है। उन्होंने 'कामायनी' में इस आशय की पंक्तियां लिखी हैं–

उज्ज्वल वरदान चेतना का,
सौन्दर्य जिसे सब कहते हैं।
जिसमें अनन्त अभिलाषा के,
सपने सब जगते रहते हैं।

स्त्री की स्वायत्त छवि : प्रसाद के काव्य में स्त्री का स्वायत्त और गरिमापूर्ण चित्रण हुआ है। प्रसाद के काव्य में चित्रित स्त्री शक्ति, शील और सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति है। वह बाहय रूप में आकर्षक है तो आन्तरिक रूप से वह प्रेम, दया, करुणा, ममता, क्षमा और माधुर्य की स्रोत भी है। प्रसाद स्त्री के उस रूप का चित्रण करते हैं जहां वह पुरुष के अधिकार से अलग अपनी स्वायत्त छवि के साथ खड़ी होती है, और पुरुष को श्रेष्ठ और सुन्दर का मार्ग दिखाती है। इसीलिए प्रसाद पूरे विश्वास के साथ 'कामायनी' में कहते हैं कि–

नारी तुम केवल श्रद्धा हो,
विश्वास रजत नग पगतल में।
पीयूष स्रोत–सी बहा करो,
जीवन के सुन्दर समतल में।

प्रकृति का जाग्रत बोध : प्रसाद के मन में प्रकृति की जीवंत सत्ता का जाग्रत बोध था। सामान्य भाषा में कहें तो प्रसाद प्रकृति के प्रेमी थे। अपने काव्य में उन्होंने भी दूसरे छायावादी कवियों की तरह प्रकृति का मानवीकरण किया है। प्रसाद की कविता में व्यक्त प्रकृति के मानवीकरण और लगाव के दार्शनिक कारण भी हैं। प्रसाद पर प्रत्यभिज्ञादर्शन का प्रभाव है। प्रत्यभिज्ञादर्शन में प्रकृति को महाचिति का शरीर और चेतन से युक्त माना जाता है। अतः जब प्रसाद प्रकृति का मानवीकरण करते हैं तब उनके चित्रण में गहरी आस्था और प्रेम देखने को मिलता है–

बीती विभावरी जाग री।
अम्बर पनघट में डुबो रही–
तारा–घट ऊषा नागरी।
खगकुल कुलकुल–सा बोल रहा,
किसलय का अंचल डोल रहा,
ले यह लतिका भी भर लाई,
मधु–मुकुल नवल रस–गागरी।

लाक्षणिक, प्रतीकात्मक और चित्रात्मक भाषा : प्रसाद ने अपने काव्य में भावों की अभिव्यक्ति के लिए लाक्षणिकता उपयोग किया है। लाक्षणिकता के प्रयोग से वे शब्द के मुख्य अर्थ की जगह उसी से सम्बद्ध किसी अन्य अर्थ की सृष्टि करते हैं। जो शब्द की लक्षणा शक्ति का स्वभाव भी है। उदाहरण के लिए देखा जा सकता है कि–

इस करुणा–कलित हृदय में,

अब विकल रागिनी बजती,

क्यों हाहाकार स्वरों में

वेदना असीम गरजती।

इसी तरह प्रसाद अपनी कविता में प्रतीक–योजना का भी श्रेष्ठ प्रयोग करते हैं। उनके प्रतीक प्रायः प्रकृति से लिए गये हैं। जैसे वे 'मधु' का प्रयोग प्रेम के लिए करते हैं। उसी प्रकार 'उषा' या 'प्रभात' का प्रयोग प्रसन्नता या आनंद के लिए करते हैं। प्रसाद के काव्य की एक और विशेषता उनकी चित्रात्मक और ध्वन्यात्मक भाषा है–

हाहाकार हुआ क्रंदनमय,

कठिन कुलिश होते थे चूर;

हुए दिगंध बधिर, भीषण रव,

बार–बार होता था क्रूर।

इस तरह देखा जाय तो प्रसाद का काव्य अपनी इन विशेषताओं के साथ हिन्दी साहित्य में अपना एक विशिष्ट स्थान और महत्व रखता है।

2.2.3 प्रसाद काव्य में जागरण के स्वर

हिन्दी साहित्य में छायावादी काव्य एक नयी दिशा, पहचान और स्वर के लिए जाना जाता है। यह ऐसे समय की कविता है जब प्रथम विश्वयुद्ध की घटना हो चुकी थी तथा भारत में स्वतंत्रता आन्दोलन निरंतर जोर पकड़ रहा था। अतः छायावादी कवि भी अपने युग से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। इस काल के प्रमुख लेखकों प्रसाद, पन्त, निराला तथा महादेवी वर्मा ने आम आदमी के साथ अपनी काव्य यात्रा को शुरू किया।

छायावादी कविता का मूल्यांकन करते हुए आलोचक नामवर सिंह ने लिखा है कि–"छायावाद इस राष्ट्रीय चेतना की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है जो एक ओर पुरानी पीढ़ी से मुक्ति चाहता है और दूसरी ओर विदेशी पराधीनता से।" प्रसाद भी भावी पीढ़ी के लिए एक आदर्श समाज प्रस्तुत करना चाहते थे इसीलिए उनकी कविता में जागरण के विविध स्वर उपस्थित हैं। जयशंकर प्रसाद की कविता में व्यक्ति का महत्त्व स्वीकारा गया है। इस आधार पर उनकी कविता में चेतना के प्रमुख बिंदु निम्नलिखित हैं–

लोक जागरण : प्रसाद की कविता में मनुष्य को जाग्रत करने का प्रयास हुआ है। अबतक ईश्वर और मनुष्य को अलग–अलग परिभाषित किया गया था। प्रसाद ऐसा नहीं मानते हैं। उनके विचार में ईश्वर के सम्मुख मनुष्य की भी विशिष्ट सत्ता है। प्रसाद जी पर 'शैव" मत का प्रभाव था अतः वे 'नियतिवाद' के पक्षधर नहीं थे बल्कि 'कर्म' को प्रमुख मानते थे। मनुष्य के द्वारा किया गया कर्म ही उसके भाग्य का निर्माण करता है। प्रसाद जी ने स्वयं लिखा है–

हृदय ही तुम्हें दान कर दिया।

क्षुद्र था उसने गर्व किया।

तुम्हें पाया अगाध गंभीर।

कहां जल बिंदु कहां निधि क्षीर।

राष्ट्रीय जागरण के स्वर : छायावादी कविता का मूल स्वर राष्ट्रीय चेतना का रहा है। समाज की खराब स्थिति को देखकर प्रसाद का हृदय भी करुणा से भर उठा। उनका मानना था कि कवि की लेखनी समाज के उपकार के लिए होनी चाहिए तभी वह अपने उद्देश्य में सफल माना जाएगा। उनकी कविता 'प्रथम प्रभात', 'अब जागो जीवन के प्रभात', 'बीती विभावरी जाग री' आदि मानव को राष्ट्र प्रेम की भावना से ओतप्रोत करती हैं। अबतक की निराशा को भूलकर कवि ने आम आदमी में सुप्त चेतना को जाग्रत करने का प्रयास किया है–

फिर मधुर भावनाओं का,

कलरव हो इस जीवन में।

मेरी आहो में जागो,

सुस्मित में सोने वाले।

सांस्कृतिक जागरण : जयशंकर प्रसाद मनुष्य के बिखराव के कारणों की खोज अपनी कविता में करते हैं। उनका चिंतन था कि जीवन का पुनः मूल्यांकन जरूरी है। वैभव, समृद्धि तथा तमाम भौतिक सुविधाओं के होते हुए भी मनुष्य अशांत है। हमारी सांस्कृतिक विरासत दूसरी संस्कृतियों के दबाव में नष्ट होती जा रही है तथा नई संस्कृति मनुष्य को आक्रांत किये हुए है अतः ऐसे समय में हमें अपनी खोई हुई संस्कृति को फिर से प्राप्त करना होगा। प्रसाद ने मानवीय संस्कृति को महत्वपूर्ण बताया और इसे देव संस्कृति से श्रेष्ठ कहा है। इस प्रकार प्रसाद ने आम आदमी के निराश मन में आशा का संचार किया।

बनो संस्कृति के मूल रहस्य,

तुम्हीं से फैलेगी यह बेल।

विश्व भर सौरभ से भर जाएगा,

सुमन के खेलो सुंदर खेल।

सामाजिक जागरण : किसी भी बड़े बदलाव में समाज की प्रमुख भूमिका होती है। स्वतंत्रता आन्दोलन की प्रमुख बाधा थी भारत के लोगों के मध्य परस्पर संघर्ष। प्रसाद ने इस स्थिति को महसूस किया और आम आदमी को लोकतंत्र की दिशा में प्रेरित किया। उनकी कविता अहं भावना को त्यागकर मनुष्य को कर्तव्य पथ पर साथ–साथ बढ़ने की प्रेरणा देती है। टकराहट को सामंजस्य में बदलने का आह्वान प्रसाद ने कुछ इस प्रकार किया है–

औरों को हंसते देखो मनु हंसो और सुख पाओ,

अपने सुख को विस्तृत कर लो सबको सुखी बनाओ।

टिप्पणी

स्त्री के प्रति नवीन दृष्टिकोण : छायावादी कवियों ने स्त्री के प्रति अपनी विराट दृष्टि का परिचय दिया। प्रसाद ने नारी को उसकी स्वतंत्र सत्ता के साथ महत्व दिया। आधुनिक मनुष्य स्त्री को अपना सेवक मानता है। प्रसाद स्त्री को मानवीय गरिमा, गौरव के साथ प्रस्तुत करते हैं। कामायनी में प्रसाद ने दिखाया है कि मनु श्रद्धा के शरीर पर नहीं बल्कि उसके मन में विशिष्ट स्थान बनाना चाहते थे। स्त्री की परंपरागत स्थिति से अलग वे उसे श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं और देवी, मां, जैसे संबोधन से पुकारते हैं–

नारी तुम केवल श्रद्धा हो,
विश्वास रजत नग पग तल में,
पीयूष स्रोत सी बहा करो,
जीवन के सुंदर समतल में।

मशीनीकरण पर चिंता : कामायनी में प्रसाद ने चिंता व्यक्त की है कि भौतिक जीवन में मशीनों के बढ़ते प्रभाव ने उसके आनंद को समाप्त कर दिया है। विज्ञान के चमत्कारों ने प्रेम, परिवार, करुणा, शांति, मनुष्यता के भावों को नष्ट कर दिया है। इस स्थिति में मनुष्य अजनबीपन के विष को पीने पर मजबूर है। प्रसाद ने समाज में बढ़ते अविश्वास, असंतोष तथा पाखंड को अपनी कविताओं के माध्यम से व्यक्त किया है तथा समाज को "वसुधैव कुटुम्बकम' की शिक्षा दी है–

आज शक्ति का खेल खेलने में आतुर नर,
प्रकृति संग संघर्ष निरंतर अब कैसा डर।

निष्कर्षतः छायावाद के प्रमुख कवि जयशंकर प्रसाद सही मायने में जागरण पुरुष थे। उनकी काव्य यात्रा बताती है कि वास्तव में ये सिर्फ शरीर को नहीं बल्कि अपने पूरे इतिहास को जीना चाहते थे। इसीलिए अनुभूतियों का तीव्र वेग इनकी रचनाओं में मौजूद है। लेखक के पास समाज को देखने का एक विशिष्ट नजरिया होता है। प्रसाद की प्रमुख रचनाओं आंसू, चित्राधार, प्रेमपथिक, कानन कुसुम, झरना, लहर, कामायनी आदि के माध्यम से संसार के प्रति उनके चिंतन को समझा जा सकता है।

अपनी प्रगति जांचिए

1. जयशंकर प्रसाद का जन्म कब और कहां हुआ था?
2. जयशंकर प्रसाद का प्रसिद्ध नाटक 'चन्द्रगुप्त' कब प्रकाशित हुआ था।
3. सही–गलत बताइए–
   (क) कार्नेलिया सम्राट सेल्यूकस निकेटर की पुत्री थी?
   (ख) 'अरुण यह मधुमय देश हमारा' यह कविता प्रसाद के 'स्कन्दगुप्त' नाटक से ली गई है।

2.3 सुमित्रानन्दन पन्त : सामान्य परिचय

सुमित्रानन्दन पन्त एक महान छायावादी कवि हैं। पन्त की कविता में छायावादी काव्य की सभी विशेषताएं लक्षित की जा सकती हैं। पन्त का जन्म 20 मई, 1900 ई. को अल्मोड़ा के कौसानी नामक गांव में हुआ था। पिता का नाम गंगादत्त पन्त और माता का नाम सरस्वती देवी था। जन्म के कुछ ही देर बाद माता सरस्वती का निधन हो गया। मातृविहीन सुमित्रानन्दन के ऊपर पिता का अपार ममत्व रहा किन्तु उत्तराखण्ड, अल्मोड़ा के निर्मल और अद्वितीय प्राकृतिक जीवन ने उनके मानस और चेतना के निर्माण में सर्वाधिक योगदान दिया।

सुमित्रानन्दन पन्त के बचपन का नाम गोसाईं दत्त था। उनका जन्म तीन भाई और चार बहनों के बाद हुआ था। सबसे छोटे होने के कारण उन्हें पूरे घर का बहुत स्नेह मिला।

टिप्पणी

घर का वातावरण धार्मिक और संगीतमय था। जिसका उन पर खूब प्रभाव पड़ा। बड़े भाई हरदत्त पन्त साहित्यिक रुचि के थे। उन्हीं के पास सुमित्रानन्दन ने महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादन में निकलने वाली प्रसिद्ध पत्रिका 'सरस्वती' को देखा और पढ़ा। धीरे–धीरे बड़े भाई के साहित्यिक लगावों के कारण बालक सुमित्रानन्दन के भीतर साहित्य के प्रति गहरा अनुराग जगा।

पन्त 10 वर्ष की अवस्था में 1910 में गवर्नमेंट हाईस्कूल अल्मोड़ा गये। अलमोड़ा के साहित्यिक परिवेश ने पन्त की रुचियों को और अधिक निखारा। यहीं पर उन्होंने अपने बचपन के नाम 'गोसाईं दत्त' को बदलकर सुमित्रानन्दन पन्त रखा था। पन्त के साहित्यिक, वैचारिक विकास में अल्मोड़ा प्रवास का अत्यधिक योगदान रहा। यहीं पर रहते हुए पन्त ने साहित्य का गंभीर अध्ययन किया। इलाचन्द्र जोशी, गोविन्द वल्लभ पन्त के सम्पर्क में आने के बाद वे साहित्य रचना की ओर अग्रसर हुए। समय के साथ उनकी चेतना का दायरा बढ़ता जा रहा था। स्वामी रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द एवं स्वामी रामतीर्थ के सांस्कृतिक नवजागरण की वैचारिक धारा ने भी पन्त को अत्यधिक प्रभावित किया।

हाईस्कूल के बाद पन्त का दाखिला इलाहाबाद के म्योर कॉलेज में हुआ। इलाहाबाद का उन्नत साहित्यिक माहौल पन्त के लिए बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुआ। इलाहाबाद में ही पन्त अंग्रेजी के प्रमुख रचनाकारों, वर्ड्सवर्थ, कीट्स, शैली के स्वच्छन्दतावादी काव्य से परिचित और प्रभावित हुए। साथ ही उन पर गांधीजी के विचारों का भी प्रभाव पड़ रहा था।

परिवार को हुए व्यापारिक घाटे में बहुत सम्पत्ति, घर आदि को बेचना पड़ गया। पिता और बड़े भाई की मृत्यु ने पन्त के संवेदनशील मन को अत्यधिक आहत कर दिया। सांसारिक दुखों से थोड़ी सी राहत उन्हें साहित्य में मिलती थी, इसलिए उन्होंने स्वयं को पूरी तरह से साहित्य को समर्पित कर दिया। 1931 में कालाकांकर गये और वहां के राजभवन में रह कर साहित्य सेवा करते रहे। 1940 में वे पुनः अल्मोड़ा लौटे। बाद के दिनों में श्री अरविन्द के सम्पर्क में आये। पन्त के बाद के लेखन पर श्री अरविन्द का अत्यधिक प्रभाव है। 1950 से 1957 तक उन्होंने आकाशवाणी में परामर्शदाता के रूप में कार्य किया।

सुमित्रानन्दन पन्त जीवन भर पीड़ित मानवता एवं भारतीय संस्कृति के प्रगतिशील मूल्यों में भरोसा रखते हुए साहित्य–सेवा में लगे रहे। उन्होंने विपुल मात्रा में साहित्य–सृजन किया है। उन्हें 1960 में 'कला और बूढ़ा चांद' काव्य संग्रह के लिए 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' और 1968 में 'चिदम्बरा' के लिए उन्हें 'भारतीय ज्ञानपीठ' पुरस्कार मिला। 1961 में उनकी साहित्यिक उपलब्धियों के लिए भारत के राष्ट्रपति ने उन्हें 'पद्मभूषण' की उपाधि से सम्मानित किया। साहित्य, विचार और रचनात्मकता के इस प्रखर सर्जक का निधन 29 दिसम्बर, 1977 ई. को हुआ।

सुमित्रानन्दन पन्त की रचनाएं

उपन्यास : हार

काव्य : वीणा, ग्रन्थि, उच्छ्वास, पल्लव, गुंजन, युगान्त, युगवाणी, ग्राम्या, स्वर्णकिरण, स्वर्ण धूलि, मधुज्वाल, युगपथ, उत्तरा, रजत शिखर, शिल्पी, अतिमा, युग–पुरुष, छाया, वाणी,

चिदम्बरा, कला और बूढ़ा चांद, लोकायतन, किरण वीणा, पौ फटने से पहले, गीतहंस, शंखध्वनि, समाधिता, आस्था, सत्यकाम आदि।

टिप्पणी

निबन्ध संग्रह : आधुनिक कवि, छायावाद : पुनर्मूल्याकंन, शिल्प और दर्शन, साठ वर्ष : एक रेखांकन।

रेडियो रुपक : ज्योत्स्ना

नोट : सुमित्रानन्दन पन्त के समस्त लेखन को राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली ने शान्ति जोशी के संपादन में सात खण्ड में 'सुमित्रानन्दन पन्त ग्रन्थावली' में प्रकाशित किया गया है।

2.3.1 सुमित्रानन्दन पन्त : पाठ्यांश – पर्वत प्रदेश में पावस, अनित्य जग

1. पर्वत प्रदेश में पावस

पावस ऋतु थी, पर्वत प्रदेश,

पल–पल परिवर्तित प्रकृति–वेश।

मेखलाकार पर्वत अपार

अपने सहस्त्र दृग – सुमन फाड़,

अवलोक रहा है बार–बार

नीचे जल में निज महाकार,

जिसके चरणों में पला ताल

दर्पण सा फैला है विशाल!

शब्दार्थ : पावस ऋतु– वर्षा का मौसम, परिवर्तित– बदलता हुआ, प्रकृति वेश– प्रकृति का स्वरूप, मेखलाकार– मंडप के आकार वाला, अपार– जिसकी सीमा न हो, सहस्त्र– हजार, दृग सुमन– फूल रूपी आंखें, अवलोक– देखना, निज– अपना, महाकार– बड़ा आकार, ताल– तालाब, दर्पण– शीशा, विशाल– बड़ा।

सन्दर्भ : 'पर्वत प्रदेश में पावस' कविता प्रकृति के कुशल चितेरे और प्रसिद्ध छायावादी कवि सुमित्रानंदन पंत की रचना है। पंतजी को 'प्रकृति का सुकुमार कवि' भी कहा जाता है। वैसे तो सभी छायावादी कवियों ने प्रकृति का चित्रण किया है लेकिन उनमें से भी पंतजी का मन प्रकृति के चित्रण में ज्यादा रमा। प्रस्तुत कविता में पंतजी ने वर्षा ऋतु में क्षण–क्षण परिवर्तित हो रहे प्रकृति के परिवेश का चित्रण किया है। कविता के शीर्षक से स्पष्ट है कि इस कविता में कवि ने वर्षा के मौसम में पर्वत के मनोहारी रूप के वर्णन पर अपना ध्यान केंद्रित किया है।

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियों में बरसात के समय पर्वत के सौंदर्य का निरुपण किया गया है। बारिश में धुलकर पर्वत का सौंदर्य निखर गया है और वह अपना सौंदर्य तालाब में निहार रहा है।

टिप्पणी

व्याख्या : कवि कहता हैं कि वर्षा ऋतु थी और जहां बारिश हो रही थी वह पर्वतीय इलाका था। बरसात के मौसम में बादल उमड़ते–घुमड़ते रहते हैं और इस कारण आसपास का परिवेश पल–पल परिवर्तित होता रहता है। कभी बादल छा जाने के कारण दिन में ही अंधेरा हो जाता है और लगता है कि रात हो गयी और कभी बादलों के हट जाने से सूर्य के प्रकाश में अचानक वह सारा प्रदेश खिल उठता है। इसी स्थिति का वर्णन करते हुए कवि कह रहा है कि क्षण–क्षण प्रकृति अपना रूप परिवर्तित कर रही थी। इस प्राकृतिक वातावरण में मंडप के आकार का विशाल पर्वत अपने सुमन जैसी हजार आंखों को फाड़े पर्वत के निचले हिस्से में फैले शीशे के समान चमकने वाले तालाब के निर्मल जल को देख रहा है। ऐसा प्रतीत होता है मानो यह तालाब उसके चरणों में पड़ा हुआ है और यह एक विशाल दर्पण जैसा है। पर्वत पर उगे हुए फूल, पर्वत के नेत्रों के समान लग रहे हैं और ऐसा लगता है मानो ये नेत्र दर्पण के समान चमकने वाले विशाल तालाब के जल पर दृष्टिपात कर रहे हैं। इस बिम्ब का तात्पर्य यह है कि पर्वत अपने सौंदर्य का अवलोकन तालाब रूपी दर्पण में कर रहा है। कवि की इस कल्पना का मूल आशय यह है कि बारिश की वजह से पर्वत का सौंदर्य बारिश में धुल कर निखर गया है और वह अपने निखरे हुए स्वरूप को तालाब रूपी दर्पण में निहार रहा है।

विशेष

1. जब किसी मनुष्येतर वस्तु का चित्रण मनुष्य के रूप में किया जाय तो वहां मानवीकरण अलंकार होता है। यहां पर्वत द्वारा अपने सौंदर्य को निहारने का काम एक मनुष्य की तरह किया जा रहा है अतः यहां पर्वत का मानवीकरण किया गया है।
2. आरंभिक दो पंक्तियों में अनुप्रास अलंकार है। पल–पल, बार–बार में पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है। 'दृग–सुमन' में रूपक अलंकार तथा 'दर्पण–सा फैला' में उपमा अलंकार है।
3. चित्रात्मक शैली तथा संस्कृतनिष्ठ शब्दावली का प्रयोग किया गया है।

गिरि का गौरव गाकर झर–झर

मद में नस–नस उत्तेजित कर

मोती की लड़ियों–से सुंदर

झरते हैं झाग भरे निर्झर!

गिरिवर के उर से उठ–उठ कर

उच्चाकांक्षाओं से तरुवर

हैं झांक रहे नीरव नभ पर

अनिमेष, अटल, कुछ चिंतापर।

शब्दार्थ : गिरि– पर्वत, गौरव– सम्मान, मद– मस्ती, आनंद, निर्झर– झरना, उर– हृदय, उच्चाकांक्षाओं– ऊंची कामनाएं, तरुवर– श्रेष्ठ वृक्ष, नीरव– शांत, नभ– आकाश, अनिमेश– अपलक, अटल– स्थिर।

टिप्पणी

सन्दर्भ : 'पर्वत प्रदेश में पावस' कविता प्रकृति के कुशल चितेरे और प्रसिद्ध छायावादी कवि सुमित्रानंदन पंत की रचना है। पंतजी को 'प्रकृति का सुकुमार कवि' भी कहा जाता है। वैसे तो सभी छायावादी कवियों ने प्रकृति का चित्रण किया है लेकिन उनमें से भी पंतजी का मन प्रकृति के चित्रण में ज्यादा रमा। प्रस्तुत कविता में पंतजी ने वर्षा ऋतु में क्षण–क्षण परिवर्तित हो रहे प्रकृति के परिवेश का चित्रण किया है। कविता के शीर्षक से स्पष्ट है कि इस कविता में कवि ने वर्षा के मौसम में पर्वत के मनोहारी रूप के वर्णन पर अपना ध्यान केंद्रित किया है।

प्रसंग : इन पंक्तियों में कवि ने पर्वत से गिरने वाले झरने और उसके ऊपर खड़े विशाल वृक्षों के माध्यम से निर्मित होने वाले सौंदर्य का चित्रण किया है और इसके साथ ही इससे प्रकट होने वाली पर्वत की मनोभावनाओं का भी वर्णन किया है।

व्याख्या : ऊंचे पर्वत से बहने वाले झाग से भरे हुए झरने झर–झर करते हुए नीचे की ओर बह रहे हैं। उस झरने के स्वर को सुनकर ऐसा लगता है जैसे वह पर्वत के गौरव का गान कर रहा हो। झरने का यह गान पर्वत को मस्ती में डुबोकर उसके रोम–रोम को रोमांचित कर रहा है और उसके भीतर उत्साह भर रहा है। झरने का जल इतना शुद्ध और उज्ज्वल है कि उसकी बूंदें मोतियों के समान सुंदर प्रतीत हो रही हैं। झरने का लगातार बहता जल मोती की लड़ियों के समान सुंदर दिखाई दे रहा है। पर्वत पर अनेक श्रेष्ठ और ऊंचे वृक्ष लगे हुए हैं जो पर्वतराज के हृदय में उठने वाली महत्वाकांक्षाओं को प्रदर्शित कर रहे हैं। ये वृक्ष एक स्थान पर अटल रहकर एकटक शांत आकाश की ओर देखते हुए लगते हैं। इनको देखकर ऐसा लगता है मानो ये चिंतित होकर अपने स्थान पर खड़े हैं।

विशेष

1. पर्वत का मानवीकरण किया गया है।
2. संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग किया गया है। भाषा कवि की भावनाओं की अभिव्यक्ति में समर्थ है।
3. 'झर–झर', 'नस–नस', 'उठ–उठ' में पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है और 'झरते झाग', 'नीरव नभ', 'अनिमेष अटल' में अनुप्रास अलंकार है।

उड़ गया, अचानक लो, भूधर
फड़का अपार वारिद के पर!
रव–शेष रह गए हैं निर्झर!
है टूट पड़ा भू पर अंबर!
धंस गए धरा में सभय शाल!
उठ रहा धुआं, जल गया ताल!
यों जलद–यान में विचर–विचर
था इंद्र खेलता इंद्रजाल।

टिप्पणी

शब्दार्थ : भूधर– पर्वत, वारिद– बादल, पर– पंख, रव शेष– केवल शोर का बाकी रह जाना, निर्झर– झरना, भू– धरती, अंबर– आकाश, सभय– भय के साथ, शाल– पर्वतीय प्रदेश में उगने वाला एक विशाल वृक्ष, ताल– तालाब, जलद यान– बादल रूपी वाहन, इंद्रजाल– इंद्रधनुष।

सन्दर्भ : 'पर्वत प्रदेश में पावस' कविता प्रकृति के कुशल चितेरे और प्रसिद्ध छायावादी कवि सुमित्रानंदन पंत की रचना है। पंतजी को 'प्रकृति का सुकुमार कवि' भी कहा जाता है। वैसे तो सभी छायावादी कवियों ने प्रकृति का चित्रण किया है लेकिन उनमें से भी पंतजी का मन प्रकृति के चित्रण में ज्यादा रमा। प्रस्तुत कविता में पंतजी ने वर्षा ऋतु में क्षण–क्षण परिवर्तित हो रहे प्रकृति के परिवेश का चित्रण किया है। कविता के शीर्षक से स्पष्ट है कि इस कविता में कवि ने वर्षा के मौसम में पर्वत के मनोहारी रूप के वर्णन पर अपना ध्यान केंद्रित किया है।

प्रसंग : पर्वतीय प्रदेश में अचानक बादलों के समूह के आगमन से किस प्रकार वहां की प्रकृति में बहुत ही तीव्रता के साथ कैसा बदलाव हो रहा है इसी का गतिशील बिम्बात्मक चित्रण उपरोक्त पंक्तियों में हुआ है।

व्याख्या : प्रस्तुत पंक्तियों में पंतजी कह रहे हैं कि बादल रूपी विशाल पक्षी ने अपने पंख फड़फड़ाये और अचानक पर्वत को लेकर उड़ गया। वर्षा ऋतु में यह दृश्य आम है कि देखते–देखते ही अचानक विशाल पर्वत बादलों के पीछे छुप जाता है। पर्वत के बादलों द्वारा अपहरण कर लिए जाने के बाद अब केवल झरने की आवाज सुनाई पड़ रही है। इसको सुनकर ऐसा लगता है जैसे कोई रो रहा हो। धरती और आकाश के बीच से उस विशाल पर्वत के हट जाने से ऐसा लगता होता है जैसे आकाश टूटकर धरती पर गिर गया हो। इस प्राकृतिक घटना से भयभीत होकर शाल के विशाल वृक्ष धरती के भीतर घुस गए हैं और पर्वत के नीचे स्थित विशाल तालाब से धुआं उठ रहा है। दरअसल बादलों के विशाल समूह के अचानक आ जाने से आंखों के सामने का समस्त दृश्य एकाएक गायब हो जाता है। ऐसे में लगता है कि धरती और आकाश मिल गए हैं और सामने के वृक्ष भी दिखाई नहीं पड़ते। जब ये बादल तालाब के जल में प्रवेश करते हैं तो ऐसा लगता है कि तालाब से धुआं उठ रहा हो। कवि अंत में कह रहा है कि इस दृश्य को देखकर महसूस होता है कि बादल रूपी वाहन में घूमता हुआ प्रकृति का देवता इंद्र नए–नए खेल खेल रहा है अर्थात प्रकृति नित्य प्रति नवीन क्रीड़ाएं कर रही है।

विशेष

1. पूरे पद्य में प्रकृति का मानवीकरण किया गया है।
2. 'अपार वारिद के पर में' रूपक अलंकार और 'विचर–विचर' में पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है।
3. चित्रात्मक शैली और गतिशील दृश्य बिंब का प्रयोग किया गया है।

2. अनित्य जग

आज तो सौरभ का मधुमास
शिशिर में भरता सूनी सांस!

टिप्पणी

वही मधुऋतु को गुंजित डाल
झुकी थी जो यौवन के भार
अकिंचनता में निज तत्काल
सिहर उठती–जीवन है भार!
आज पावस मद के उद्‌गार
काल के बनते चिह्न करालय
प्रात का सोने का संसार
जला देती संध्या की ज्वाल!
अखिल यौवन के रंग–उभार
हड्डियों के हिलते कंकालय
कचों के चिकने, काले व्याल
केंचुली, कांस, सिवारय
गूंजते हैं सबके दिन चार,
सभी फिर हाहाकार!

शब्दार्थ : सौरभ– सुगंध, महक, मधुमास– वसंत ऋतु, शिशिर– छः ऋतुओं में से एक, मधुऋतु– वसंत ऋतु, अकिंचनता– गरीबी, निज– अपना, पावस– वर्षा ऋतु, काल– मृत्यु, कराल– डरावना, भयानक, अखिल– संपूर्ण, कच– बाल, व्याल– सर्प, कांस– शरद ऋतु में फूलने वाली घास, सिवार– एक जलीय पौधा।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां कोमल कल्पना के चितेरे छायावादी कवि सुमित्रानंदन पंत की प्रसिद्ध कविता 'परिवर्तन' की हैं। यह कविता पंत जी के सन् 1920 में प्रकाशित संग्रह 'पल्लव' में संकलित थी। यह एक दार्शनिक कविता है जिसमें जीवन की नश्वरता का वर्णन किया गया है। जीवन की नश्वरता का चित्रण होने के कारण इस कविता में जीवन के संबंध में निराशामूलक किंतु तटस्थ विचार प्रकट किया गया है। 'परिवर्तन' में दर्शनशास्त्र की शुष्कता के बीच काव्य–रस का संचार किया गया है जिससे मृत्यु जैसे शुष्क सत्य को भी स्वीकार करने का साहस पाठक जुटा लेता है। डॉ. नगेन्द्र ने इस कविता को 'ग्रैण्डभाव महाकाव्य' कहा है। प्रकृति की कोमल कल्पना से मुख मोड़कर जगत की नश्वरता की ओर पंत जी के मुड़ने की मूल वजह उनके पिता की मृत्यु और खुद के लंबी बीमारी से पीड़ित होना बताया जाता है। कवि ने इस कविता में जगत की नश्वरता और क्षणभंगुरता का अत्यंत भावपूर्ण एवं सजीव चित्र प्रस्तुत किया है। उन्होंने परिवर्तन को ही संसार का सबसे बड़ा सत्य सिद्ध किया है। स्वयं पंत जी ने लिखा है कि, "'पल्लव' की प्रतिनिधि रचना 'परिवर्तन' में विगत वास्तविकता के प्रति असंतोष तथा परिवर्तन के प्रति आग्रह की भावना विद्यमान है, साथ ही जीवन की अनित्य वास्तविकता के भीतर से नित्य सत्य को खोजने का प्रयत्न भी है, जिसके आधार पर नवीन वास्तविकता का निर्माण किया जा सके।"

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियों में कवि संसार की नश्वरता का वर्णन कर रहा है। उसका कहना है कि प्रकृति और जीवन दोनों में युवावस्था के दिन कम समय के लिए ही होते हैं। संसार में कुछ भी स्थायी नहीं है। सबको एक दिन काल का शिकार होना ही है।

टिप्पणी

व्याख्या : प्रस्तुत पंक्तियों में कवि कहता है कि आज भले ही संसार में वसंत ऋतु की महक और मादकता फैली हो लेकिन कुछ ही दिनों के बाद फिर शिशिर ऋतु की ठंडी हवा बहेगी, और तब सारी प्रकृति पीड़ा की ठंडी आहें भरने लगेगी। बदलते हुए मौसम के द्वारा पंत जी संसार की नश्वरता और परिवर्तनशीलता की ओर इशारा करते हुए कहते हैं कि संसार में सुख के दिन अस्थायी होते हैं। जब यौवन के दिन थे तो जीवन वसंत ऋतु की तरह सुख और आनंद रूपी फूलों से लदा हुआ था लेकिन जैसे ही बुढ़ापा और गरीबी का आगमन होता है तब ऐसा लगता है कि जीवन भार है। जीवन में अहंकार के उदगार वर्षा ऋतु की तरह उफान लेते हुए आते हैं लेकिन जल्द ही वे मृत्यु के डरावने पंजों में फंसकर समाप्त हो जाते हैं। जीवन के आरंभ में जो हमने सोने जैसा सुंदर संसार रचा होता है उसको बुढ़ापा रूपी संध्या की ज्वाला जलाकर भस्म कर देती है। यौवनावस्था में उभरे अंगों की खूबसूरती वृद्धावस्था में हड्डियों के हिलते हुए ढांचे में बदल जाता है। युवावस्था में काले सर्प की तरह लहराते सिर के चिकने बाल बुढ़ापे में सर्प की छोड़ी हुई सफेद केंचुल, कांस के सफेद फूल और सेवार के पौधे की तरह रंगहीन और सूखे दिखाई पड़ते हैं। जीवन का अंतिम सत्य यही है कि खुशियां और आनन्द केवल दो–चार दिनों के लिए ही होती हैं फिर जीवन में चारों तरफ दुख का हाहाकार ही फैला रहता है।

आज बचपन का कोमल गात
जरा का पीला पात!
चार दिन सुखद चांदनी रात,
और फिर अंधकार अज्ञात!
शिशिर सा झर नयनों का नीर
झुलस देता गालों के फूल,
प्रणय का चुम्बन छोड़ अधीर
अधर जाते अधरों को भूल!
मृदुल होंठों का हिमजल हास
उड़ा जाता निरुश्वास समीर,
सरल भौंहों का शरदाकाश
घेर लेते घन, घिर गंभीर!
शून्य सांसों का विधुर वियोग
छुड़ाता अधर–मधुर संयोग,
मिलन के पल केवल दो–चार
विरह के कल्प अपार!

टिप्पणी

अरे, वे अपलक चार नयन
आठ आंसू रोते निरुपायय
उठे–रोओं के आलिंगन
कसक उठते कांटों–से हाय!

शब्दार्थ : गात– शरीर, जरा– बुढ़ापा, नीर– आंसू, प्रणय– प्रेम, अधीर– बेचैन, अधर– होंठ, मृदुल– कोमल, हिमजल– बर्फ का पानी, समीर– हवा, घन– बादल, नयन– आंखें।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : कवि कह रहा है कि प्रेम में मिलन का क्षण अल्पकालिक होता है जबकि विरह की घड़ी बहुत बड़ी होती है।

व्याख्या : कवि कह रहा है कि भले ही आज हमारा शरीर बचपन की कोमलता लिए हुए है लेकिन कल यह बुढ़ापे के पीले पत्ते में बदल जाएगा। मनुष्य का शरीर और वृक्ष की पत्तियां जन्म लेने के बाद बहुत ही कोमल और सुंदर होती हैं लेकिन धीरे–धीरे वह बूढ़ी होती जाती हैं और उन पर बदरंगा पीलापन छाने लगता है। पंत जी कहते हैं कि जीवन और जगत में सुख की चांदनी रात केवल चार दिन की मेहमान होती है, उसके बाद दुख की अंधेरी रात का ही राज्य होता है। अर्थात सुख क्षणिक है और दुख ही संसार का सत्य है। भगवान बुद्ध ने भी यही कहा था। शिशिर ऋतु में जिस तरह पेड़ों के पत्ते झड़ते हैं वैसे ही दुख की बेला में आंखों से आंसू बहते हैं। इन आंसुओं की ज्वाला में फूल के तरह खिलने वाले गालों की सुंदरता कुंभला जाती है। जब जीवन में विपत्ति आती है तो व्यक्ति इतना बेचैन होता है कि प्रेम का चुंबन लेना भी भूल जाता है। प्रेम में एक दूसरे के अधरों में खोए रहने वाले प्रेमी भी संकट की घड़ी में एक दूसरे को भूल जाते हैं। तात्पर्य यह कि मिलन के पल क्षणिक होते हैं और अलगाव ही हकीकत् है। दुख की घड़ी में लिए जाने वाला निःश्वास खुशी के समय होंठों पर उठने वाली हंसी को उड़ा ले जाता है। शरद की चांदनी रात की तरह सरल दिखने वाली भौंहों के ऊपर भी जब विपत्ति के घने बादल छाते हैं तो उस पर दुख की गंभीरता छा जाती है। विरह में निकलने वाली शून्य सांसें होंठों के मधुर मिलन को अलगा देती हैं। तात्पर्य यह कि मिलन की बेला को विरह की घड़ी समाप्त कर देती है। संसार की सच्चाई तो यह है कि मानव जीवन में मिलन के पल तो दो–चार ही हैं जबकि विरह की बेला कल्प की तरह अपार है। विरह की बेला उसके जीवन से कभी समाप्त ही नहीं होती। कभी एक दूसरे को लगातार निहारने वाली आंखें आज असहाय होकर आठ–आठ आंसू रो रही हैं। जीवन की विपदा में प्रेमी इस कदर उलझ गए हैं कि मिलन का कोई उपाय ही नहीं खोज पा रहे। मिलन के समय आनंद में आह्लादित होकर शरीर के जो रोम–रोम खड़े हो गए थे अब विरह की बेला में वे ही शरीर में कांटे की तरह गड़ रहे हैं। तात्पर्य यह कि सुख के समय जो वस्तुएं हमें आनन्दित करती हैं विपदा की घड़ी में वे ही हमें पीड़ित करती हैं।

किसी को सोने के सुख साज
मिल गये यदि ऋण भी कुछ आज,

टिप्पणी

चुका लेता दुख कल ही ब्याज
काल को नहीं किसी की लाज!
विपुल मणि रत्नों का छवि जाल,
इन्द्रधनु की सी छटा विशाल–
विभव की विद्युत–ज्वाल
चमक, छिप जाती है तत्काल,
मोतियों जड़ी ओस की डार
हिला जाता चुपचाप बयार!
खोलता इधर जन्म लोचन
मूंदती उधर मृत्यु क्षण क्षण,
अभी उत्सव और हास हुलास,
अभी अवसाद, अश्रु, उच्छवास!
अचिरता देख जगत की आप
शून्य भरता समीर निःस्वास,
डालता पातों पर चुपचाप
ओस के आंसू नीलाकाश,
सिसक उठता समुद्र का मन,
सिहर उठते उडुगन!

शब्दार्थ : विपुल– बहुत अधिक, विभव– ऐश्वर्य, ज्वाल– ज्वाला, बयार– हवा, लोचन– आंखें, अवसाद– पीड़ा, अश्रु– आंसू, उच्छवास– आहें, अचिरता– नश्वरता।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : कवि इन पंक्तियों में काल की निष्ठुरता का वर्णन कर रहा है और कह रहा है कि संसार में जितना सुख नहीं है उससे कहीं ज्यादा दुख है। संसार की इस अनित्यता से प्रकृति के भीतर उठने वाली वेदना का चित्रण कवि ने इन पंक्तियों में किया है। इस क्रम में कवि ने प्रकृति का मानवीकरण किया है।

व्याख्या : पंत जी संसार की निष्ठुरता का वर्णन करते हुए कहते हैं कि यदि किसी को जीवन में कर्ज के रूप में भी सुख के पल मिल जाते हैं तो दुख अगले ही दिन ब्याज सहित उसे वापस ले लेता है। संसार की इस वास्तविकता से खिन्न होकर कवि कहता है कि काल अर्थात मृत्यु को किसी का संकोच नहीं है। उसके पास किसी प्रकार का लिहाज नहीं है। वह अवसर–बेअवसर आपके जीवन में हस्तक्षेप कर आपकी समस्त खुशियों को आपसे छीन सकता है। बहुसंख्य मणि–रत्नों से संपन्न सांसारिक ऐश्वर्य का विराट वैभव आसमान में छाए इंद्रधनुष की तरह है। यह आकाश में चमकने वाली बिजली की तरह है जो एक क्षण के लिए चमकती है और फिर बादलों में छिप जाती है। सुख के मोती वृक्ष के पत्ते पर गिरी

टिप्पणी

बूंदों की तरह है जिसको दुख की हवा जब चाहे तब चुपचाप उड़ा ले जाती है। जीवन में दुख चुपके से आता है और जीवन के सुखों को उड़ा ले जाता है। संसार का कटु सत्य तो यही है कि एक तरफ जहां जिंदगी आंखें खोलती है वहीं दूसरी ओर प्रत्येक क्षण मृत्यु आंखें बंद करती रहती है। थोड़ी देर पहले जहां उत्सव का, आनंद का छाया रहता है और वहीं थोड़ी देर बाद दुख, आंसू और दर्द भरी आहें सुनाई पड़ने लगती हैं। इस 'अनित्य जगत' में कुछ भी स्थायी नहीं है। संसार की इस नश्वरता को देखकर हवाएं गहरी सांसें भरती हैं। ऐसा लगता है जैसे प्रकृति–पुरुष संसार की इस अनित्यता के कारण दुखी है। नीला आकाश भी जगत की इस क्षणभंगुरता से पीड़ित है और ओस की बूंदों के रूप में रात्रिकाल में चुपचाप पत्तों पर गिरने वाली ओस की बूंदें उसकी आंखों के आंसू हैं।

2.3.2 पन्त काव्य में प्रकृति

सुमित्रानन्दन पन्त छायावाद के एक ऐसे कवि हैं जिन्हें प्रकृति चित्रण में सर्वाधिक सफलता मिली है। पन्त का प्रारम्भिक जीवन अल्मोड़ा (उत्तराखंड) के कौसानी के सुरम्य वातावरण में बीता। जिसका प्रभाव उनके जीवन और काव्य सभी पर पड़ा। पन्त की कविता में प्रकृति मनमोहक है एवं उसकी नैसर्गिक सुन्दरता को विशेष रूप से चित्रित किया गया है। पन्त के लिए प्रकृति माधुर्य, सुकुमारता, प्रणय, प्रेरणा और समर्पण आदि का पर्याय है।

पन्त के प्रकृति चित्रण पर टिप्पणी करते हुए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में लिखा है कि ''छायावाद के भीतर माने जाने वाले सब कवियों में प्रकृति के साथ सीधा प्रेम सम्बन्ध पंतजी का ही दिखाई पड़ता है। प्रकृति के अत्यंत रमणीय खंड के बीच उनके हृदय ने रूपरंग पकड़ा है। 'पल्लव','उच्छ्वास' और 'आंसू' में हम उस मनोरम खंड की प्रेमार्द स्मृति पाते हैं। यह अवश्य है कि सुषमा की ही उमंगभरी भावना के भीतर हम उन्हें रमते देखते हैं।'' आगे पन्त के प्रकृति–वर्णन की सीमा बताते हुए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कहते हैं कि ''पर प्रकृति के बीच उसके गूढ़ और व्यापक सौन्दर्य तक–ग्रीष्म की ज्वाला में संतप्त चराचर पर उसकी छाया के मधुर, स्निग्ध, शीतल प्रभाव तक; उसके दर्शन से तृप्त कृषकों के आशापूर्ण उल्लास तक–कवि ने दृष्टि नहीं बढ़ाई है। कल्पना के आरोप पर ही जोर देनेवाले 'कलावाद' के संस्कार और प्रतिक्रिया के जोश ने उसे मेघ को व्यापक प्रकृति–भूमि पर न देखने दिया जिस पर कालिदास ने देखा था।''

पन्त के प्रकृति चित्रण की सीमाओं का उल्लेख करती आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की इस टिप्पणी के बाद हम प्रकृति के सम्बन्ध में स्वयं पन्त के इस कथन को देख सकते हैं। पन्त ने 'आधुनिक कवि' की भूमिका में अपने और प्रकृति के बीच के रागात्मक लगावों स्पष्ट करते हुए कहा है कि ''मेरे भीतर ऐसे संस्कार अवश्य रहे होंगे, जिन्होंने मुझे कवि कर्म करने की प्रेरणा दी, किन्तु इस प्रेरणा के विकास के लिए स्वप्नों के पालने की रचना पर्वत प्रदेश की दिगन्त व्यापी प्राकृतिक शोभा ने ही की, जिसने छुटपन से ही मुझे अपने रूपहले एकान्त में एकाग्र तन्मयता के रश्मि दोल में झुलाया, रिझाया तथा कोमल कंठ वन पंखियों के साथ बोलना एवं कुहकना सिखाया। प्रकृति निरीक्षण और प्रकृति प्रेम मेरे स्वभाव के अभिन्न अंग ही बन गये हैं, जिनसे मुझे जीवन के अनेक संकट क्षणों में अमोघ सांत्वना मिली।''

पन्त की प्रकृति चेतना निस्संदेह उनके मन की चीज है। वे प्रकृति के प्रति एक रागात्मक लगाव रखते हैं। जिसके लिए कुछ भी छोड़ने को तैयार हैं–

छोड़ द्रुमों की मृदु छाया,
तोड़ प्रकृति से भी माया,
बाले तेरे बाल जाल में कैसे उलझा दूं लोचन?
छोड़ अभी से इसी जग को।

टिप्पणी

पन्त ने प्रकृति का चित्रण ऐन्द्रिय अनुभूति और सूक्ष्म दोनों रूपों में किया है। उनके लिए सौन्दर्य स्वयं प्रकृति है। उनकी कविता में प्रकृति का कोमल स्वरूप अधिक प्रकट हुआ है। इसके लिए स्वंय पन्त का कोमल मन उत्तरदायी है। 'वीणा' और 'पल्लव' जैसी काव्य कृतियों में प्रकृति के कई रूप प्रकट हुए हैं। 'गुंजन' काव्य–संग्रह के प्रकाशन के बाद की कविताओं पर पन्त के वैचारिक चिन्तन का प्रभाव देखा जा सकता है। इस वैचारिक चिन्तन का प्रभाव उनके प्रकृति चित्रण में भी देखने को मिलता है। पन्त भी अन्य छायावादी कवियों की तरह प्रकृति के मानवीकरण में विशेष रुचि लेते हैं। अपनी प्रसिद्ध कविता 'नौका विहार' में वे गंगा नदी को स्त्री के रूप में चित्रण करते हैं–

सैकत शय्या पर दुग्ध धवल, तन्वगी गंगा ग्रीष्मविरल
लेटी है श्रान्त क्लान्त निश्चय।
तापस बाला गंगा निर्मल, शशि मुख से दीपित मृदुकर तल
लहरें, उर पर कोमल कुन्तल।
गोरे अंगों पर सिहर–सिहर लहराता तरल–तरल सुन्दर
चंचल–चंचल सा नीलाम्बर।

छायावादी कविता की एक प्रमुख विशेषता प्रतीकात्मकता है। पन्त ने भी अपने युग और काव्य परम्परा के अनुरूप प्रतीकात्मक शैली का सफल प्रयोग किया है। पन्त ने प्रकृति का चित्रण जहां प्रतीकात्मक शैली में किया है वहां कथ्य की गरिमा और सम्प्रेषणीयता अत्यधिक प्रकाशित हो गये हैं–

ऊषा का था उर में आवास
मुकुल का मुख में मृदुल विकास
चांदनी का स्वभाव में वास,
विचारों में बच्चों की सांस।

यहां ऊषा सुख का प्रतीक है, मुकुट प्रसन्नता का, चांदनी पवित्रता का और बच्चों की सांस भोलेपन का प्रतीक है। देखा जा सकता है कि प्रतीकात्मकता के कारण प्रकृति का अर्थ विस्तार हुआ है।

सुमित्रानन्दन पन्त ने प्रकृति को समस्त सम्भावनाओं से युक्त दिखाया है। वे प्रकृति में अव्यक्त सत्ता का आभास करते हैं। साथ ही प्रकृति और मनुष्य के बीच एक नैसर्गिक सम्बन्ध को स्थापित और सत्यापित करते हैं–

स्तब्ध ज्योत्सना में जब संसार
चकित रहता शिशु–सा नादान

टिप्पणी

विश्व के पलकों पर सुकुमार,
विचरते हैं जब स्वप्न अजान
न जाने नक्षत्रों से मौन?
निमंत्रण मुझे भेजता कौन?

पन्त को आमतौर पर प्रकृति का सुकुमार कवि माना जाता है। क्योंकि उनकी कविता में प्रकृति का कोमल एवं सुकुमार रूप ही अधिक आया है। किन्तु पन्त ने प्रकृति को उसकी सम्पूर्णता में चित्रित किया है। उनके यहां यदि प्रकृति सुंदर और विराट है तो वहीं वह परिवर्तन का कारक और उग्र भी है–

अये एक रोमांच तुम्हार दिग्भू कम्पन।
गिर–गिर पड़ते भीत पक्षि पोतों से उड़गन।।
आन्दोलित अम्बुधि फेनोन्नत कर शतशत फन।
मुग्ध भुजगम–सा इंगित पर अपना नर्तन।
दिक पंजर में बद्ध गजाधि पसा वितननातन।
वाताहत हो गगन आर्त करता गुरु गर्जन।

पन्त अपनी कविता में प्रकृति को आलम्बन, उद्दीपन आदि रूपों में प्रस्तुत करते हैं। कहीं–कहीं वे प्रकृति जगत के कार्य–व्यापार को उसकी स्वाभाविकता और ध्वनि बिंबों के माध्यम से अदभुत चित्र खिंचते हैं–

बांसों का झुरमुट
सन्ध्या का झुटपुट
हैं चहक रही चिड़ियां–
टी–वी–टीं टुट्टुट्।

यहां बांसों के झुरमुट में चहकती हुईं चिड़ियों का वर्णन है। जिसमें वे 'चहकना' क्रिया को 'टी–वी–टीं टुट्टुट्' जैसे ध्वनि के साथ एकदम से सार्थक कर देते हैं। 'टी–वी–टीं टुट्टुट्' का अकेले कोई अर्थ नहीं है, किन्तु चिड़ियों के प्रसन्नता, चहकना जैसे भावों के साथ 'टी–वी–टीं टुट्टुट्' का प्रयोग कर वे भाषा पर अपने अधिकार और प्रकृति जगत से अपने विशेष परिचय को पाठकों के सामने लाते हैं।

पन्त प्रकृति का प्रयोग वातावरण निर्माण में भी करते हैं। प्रकृति के कुछ विशेष रूपों के माध्यम से वे विशेष प्रकार के वातावरण की सृष्टि करते हैं–

जाड़ों की सूनी द्वाभा में झूल रही निशि छाया गहरी।

या

सिमटा पंख सांझ की लाली
जा बैठी तरु–शिखरों पर,
ताम्रपर्ण पीपल से शतमुख झरते
चंचल स्वर्णिम निर्झार।

टिप्पणी

इस तरह देखें तो पन्त के प्रकृति चित्रण में स्वाभाविकता, चित्रात्मकता, प्रतीकात्मकता के साथ–साथ दार्शनिकता का अपूर्व संयोग मिलता है। उनके प्रकृति चित्रण में उनके भीतर का अनुराग प्रकट हुआ है। प्रकृति चित्रण की अपनी सीमाओं के बावजूद उनका प्रकृति चित्रण अद्वितीय है। उनके लिए जीवन प्रकृति की छाया नहीं, बल्कि स्वयं प्रकृति ही जीवन है। बचपन में ही मां को खो देने के बाद कौसानी के नैसर्गिक प्रकृति में ही उन्होंने मां का सहज दुलार और वात्सल्य खोजा और पाया। हिन्दी कविता में पन्त के जैसा प्रकृति चित्रण दुर्लभ है।

2.3.3 छायावादी काव्य भाषा और पन्त

भाषा के माध्यम से ही कवि अपने मनोभावों को अभिव्यक्त करता है। काव्य के कथ्य की सम्प्रेषणीयता का आधार भाषा है। इस दृष्टि से देखें तो सुमित्रानन्दन पन्त की कविता में भाषा के प्रयोग को लेकर अत्यंत सजगता लक्षित की जाती है। पन्त की कविता और उसकी कलात्मक सफलता में उनके द्वारा प्रयुक्त काव्य भाषा का सर्वाधिक योगदान है। पन्त ने अपनी अभिव्यंजना प्रधान और स्वाभाविक भाषा के द्वारा द्विवेदीयुगीन व्याकरण के शुष्क बंधनों में जकड़ी खड़ी बोली को समृद्ध किया। वे अपने प्रसिद्ध काव्य–संग्रह 'पल्लव' की भूमिका में कहते हैं कि "खड़ी बोली जागरण की चेतना थी। द्विवेदी युग जिस जागरण का प्रारम्भ था, हमारा युग उसके विकास का समारम्भ था। छायावाद के शिल्पकक्ष में खड़ी बोली ने धीरे–धीरे सौन्दर्य–बोध, पद–मार्दव तथा भाव–गौरव प्राप्त कर प्रथम बार उचित भाषा का सिंहासन ग्रहण किया।" इससे यह स्पष्ट है कि पन्त के लिए भाषा भावों की अभिव्यक्ति का अनिवार्य तत्व है।

पन्त के काव्य में भाषा के दो रूप मिलते हैं। पहला संस्कृतनिष्ठ शब्दों से युक्त पदावली और दूसरा व्यावहारिक शब्दों से युक्त पदावली। संस्कृतनिष्ठ शब्दों से युक्त पदावली का प्रयोग 'वीणा', 'पल्लव' और 'गुंजन' जैसे काव्य संग्रहों में तो व्यावहारिक शब्दों से युक्त पदावली का प्रयोग 'युगान्त', 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' संग्रह की भाषा में देखने को मिलता है। पन्त के पहले और बाद के संग्रहों की काव्य भाषा में आये इस परिवर्तन से उनकी भाषा सम्बन्धी मान्यताओं और उनकी काव्य भाषा के विकास की प्रक्रिया को समझा जा सकता है।

पन्त ने अपने काव्य–संग्रह 'पल्लव' में एक लम्बी भूमिका लिखी थी। उक्त भूमिका में पन्त ने कविता, कविता के विषय, छायावादी कविता के साथ ही खड़ी बोली हिन्दी पर अत्यंत महत्वपूर्ण टिप्पणियां की हैं। अपनी उस महान भूमिका के कारण ही 'पल्लव' को छायावाद का 'मेनीफेस्टो' कहा जाता है। वे पल्लव की भूमिका में कहते हैं कि "हिन्दी ने अब तुतलाना छोड़ दिया, वह 'पिय' को 'प्रिय' कहने लगी है। उसका किशोर कण्ठ फूट गया, अस्फुट अंग कट–छट गए।" छायावाद की भाषा में जो महत्तम सुधार और गरिमा आयी, उसके निर्माण में पन्त का योगदान अभूतपूर्व है। पन्त ने अपनी रचनाओं में प्रांजल भाषा, सादृश्य योजना, छंद विधान, अप्रस्तुत योजना, नाद सौन्दर्य आदि का प्रयोग कर छायावाद की भाषा को एक नई भंगिमा, एक नई ताजगी तथा एक नई शक्ति से भर दिया। पल्लव की भूमिका में काव्य में भाषा के प्रयोग को लेकर एक व्यावहारिक उदाहरण के साथ

टिप्पणी

वे कहते हैं कि "जिस प्रकार बड़ी चुवाने से पहले उड़द की पीठी को मथकर हल्का तथा कोमल कर लेना पड़ता है; कविता के स्वरूप में भावों के सांचे में ढालने के पूर्व भाषा को भी हृदय के ताप में गलाकर कोमल, करुण, सरस एवं प्रांजल कर लेना पड़ता है।"

पन्त की भाषा संवेदना की चित्रात्मक अभिव्यक्ति करने में अत्यधिक सफलता पाती है। चित्रात्मकता के साथ ध्वन्यात्मकता भी उनकी भाषा का खास गुण है। ध्वनि और चित्र के माध्यम से पन्त अपनी काव्य भाषा में भाव और अर्थ का अनुपम संसार रचते हैं–

एक पल मेरे प्रिया के दृग पलक,
थे उठे ऊपर सहज नीचे गिरे
चपलता ने इस विकम्पित पुलक से
दृढ़ किया मानो प्रणय सम्बन्ध था।

पन्त ने दूसरे हिन्दी कवियों की तरह ही बंगला भाषा के संस्कार, प्रभाव को ग्रहण किया, किन्तु उन्हें जस का तस प्रयोग न कर उसे अपने अनुभवों और हिन्दी की शब्दावली के साथ अद्‌भुत अर्थ और व्यंजना उत्पन्न करते हैं–

आदिकाल में बाल–प्रकृति जब
थी प्रसुप्त, मृतवत, हतज्ञान
शस्य–शून्य वसुधा का अंचल
निश्चल जलनिधि, रवि–शशि म्लान।

पन्त की काव्य भाषा में कोमलता, सुकुमारता का वैभव भी पूरी गरिमा के साथ उपस्थित है। वे कोमल शब्दों का प्रयोग कर भावों का प्रभावशाली माधुर्य की सृष्टि करते हैं। 'नौका विहार' कविता की इन पंक्तियों को उदाहरण के तौर पर देखा जा सकता है–

मृदु मन्द–मन्द मन्थर–मन्थर
लघुतरणि हंसिनी सी सुन्दर
तिर रही खोल पालों के पर।

साथ ही पन्त ने अपनी भाषा में लाक्षणिकता को एक विशिष्ट शैली के रूप में प्रयोग किया है। लाक्षणिकता का प्रयोग छायावाद के अन्य कवियों की रचनाओं में भी खूब मिलता है। किन्तु पन्त की कविता में लाक्षणिक पदों की स्वाभाविकता उनकी काव्य–भाषा को महत्वपूर्ण बनाती है–

शैवलिनी जाओ मिलो तुम सिन्धु से
अनिल आलिंगन करो तुम गगन का
चन्द्रिके चूमो तरंगो के अधर
उडुगनो गावो पवन वीणा बजा
पर हृदय सब भांति तू कंगाल है।

पन्त आभिजात्य स्वभाव के व्यक्ति थे। किन्तु प्रसंगानुकूल भाषा के आग्रह के चलते वे देशज शब्दों का सार्थक प्रयोग करते थे। उनकी कविता में लोकभाषा के शब्दों का भी

टिप्पणी

प्रयोग हुआ है। जैसे, झौर, ठौरे–ठौर, धीरे झूम, दुलराना आदि। पन्त ने भावों की पूर्ण अभिव्यक्ति के लिए नये शब्दों का सृजन कर छायावादी काव्य भाषा को समृद्ध किया है। अनेक अवसरों पर उन्होंने तत्सम और तद्‌भव शब्दों में प्रत्यय लगाकर नये शब्दों का निर्माण किया है। जैसे– फेनिल, रंगिणि, तरंगिनि, स्वप्निल, स्वरित, तन्द्रिल आदि।

इन विशेषताओं के आधार पर कहा जा सकता है कि पन्त ने अपनी भाषा में छायावादी काव्य भाषा की विशेषताओं को आत्मसात किया साथ ही अपनी अभिनव भाषा दृष्टि से छायावाद की काव्य–भाषा और खड़ी बोली हिन्दी को समृद्ध किया।

2.4 सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' : सामान्य परिचय

निराला आधुनिक हिन्दी कविता के सर्वाधिक लोकप्रिय कवि हैं। निराला का जन्म बसंत पंचमी के दिन महिषादल स्टेट मेदनीपुर, बंगाल में सन् 1896 में हुआ। इनके बचपन का नाम सुर्जकुमार था। निराला के पिता पं. रामसहाय मूलतः उन्नाव जिले के गढ़कोला गांव के थे; जो बंगाल के महिषादल स्टेट में नौकरी करते हुए वहीं बस गये थे। निराला की प्रारम्भिक शिक्षा महिषादल में ही हुई। निराला जब तीन वर्ष के थे तभी उनकी माता का निधन हो गया। बाल्यकाल में ही बंगला भाषा में इनकी विशेष दक्षता लोगों को आकर्षित करने लगी थी। बहुत कम उम्र में ही वे बंगला भाषा में कविता लिखने लगे थे। समय के साथ निराला की रुचि दार्शनिक विचारों की तरफ भी हुई। निराला का विवाह मनोहरा देवी से हुआ, जो गायन में अत्यधिक निपुण एवं हिन्दी साहित्य में विशेष अनुराग रखने वाली थीं। निराला ने स्वयं स्वीकार किया है कि उनके भीतर हिन्दी भाषा और साहित्य के प्रति प्रेम पत्नी मनोहरा देवी के कारण ही हुआ।

निराला के जीवन की दिशा को तय करने में आर्थिक, सामाजिक एवं प्राकृतिक आपदाओं की बड़ी भूमिका रही है। लगभग 15–16 वर्ष की उम्र से ही निराला को इन विपत्तियों ने घेर लिया था। पहले पिता का असामयिक निधन हुआ, मजबूरी में उन्हें महिषादल स्टेट में छोटी नौकरी करनी पड़ी। उसी बीच पत्नी की बीमारी की खबर पाकर निराला को नौकरी से वापस आना पड़ा। उस समय उनकी पत्नी मनोहरा देवी अपने मायके मे थीं। निराला जब वहां पहुंचे तब उनकी पत्नी का देहान्त हो चुका था। उस समय इन्फ्लुएंजा नामक संक्रामक बीमारी चारों तरफ फैली हुई थी। जिसमें बहुत से लोगों की जान चली गयी थी। निराला ससुराल से अपने घर आये। घर पर उनके बड़े भाई, दादा, भाभी, भाभी की छोटी बच्ची का देहान्त भी उसी महामारी में हो गया। इन घटनाओं ने निराला को बुरी तरह से तोड़ दिया। परिवार की जिम्मेदारी उन पर आ गयी। लगभग 22 वर्ष की उम्र में विधुर होने पर, रिश्तेदारों के प्रबल आग्रह के बाद भी निराला ने दूसरा विवाह नहीं किया। अब उनके जीवन की एक मात्र आधार उनकी पुत्री सरोज ही थी।

निराला परिवार, समाज और साहित्य सभी मोर्चों पर एक साथ संघर्ष करते रहे। जीवन संघर्षों ने पीड़ा तो बहुत दी किन्तु उनसे लड़ते हुए, उनका सामना करते हुए एक नये निराला का उदय हो रहा था। जो अदम्य साहस, विराट पौरुष और ओजस्वी व्यक्तित्व

अपनी प्रगति जांचिए

4. सुमित्रानंदन पन्त का बचपन का क्या नाम था?
5. सुमित्रानंदन पन्त को साहित्य अकादमी पुरस्कार कब व किस कृति को मिला था?
6. सही–गलत बताइए–
   (क) सुमित्रानंदन पन्त को 1968 में उनके उपन्यास 'हार' को भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार दिया गया।
   (ख) पन्त को उनकी साहित्यिक उपलब्धियों के लिए भारत के राष्ट्रपति ने उन्हें पद्मविभूषण की उपाधि से सम्मानित किया।

वाला था। एक तरह से दर्द ही दवा हो गयी थी। किन्तु विपत्तियां आती रहीं। एकमात्र पुत्री सरोज का 19 वर्ष की उम्र में दुखद निधन हो गया। जिसने निराला को लगभग विरक्त कर दिया। किन्तु यह अपराजेय कवि इन संकटों से टकराता रहा और पहले से अधिक ताकत के साथ खड़ा होता रहा। पुत्री के निधन के बाद निराला कहीं एक जगह स्थिर होकर नहीं रह पाते। लखनऊ, सीतापुर, बनारस, इलाहाबाद जैसे स्थानों पर भटकते रहे। सन् 1950 के आस–पास वे इलाहाबाद के दारागंज में स्थाई रूप से रहने लगे। वहीं पर 15 अक्टूबर, 1961 को निराला का निधन हुआ।

टिप्पणी

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' की रचनाएं

काव्य संग्रह– अनामिका, परिमल, गीतिका, कुकुरमुत्ता, अणिमा, अपरा, बेला, नये पत्ते, अर्चना, आराधना, गीत–गूंज, सांध्यकाकली।

लम्बी कविताएं– राम की शक्तिपूजा, तुलसीदास, सरोज स्मृति।

उपन्यास– अप्सरा, अलका, प्रभावती, निरुपमा, चोटी की पकड़, काले कारनामे, कुल्ली भाट, बिल्लेसुर बकरिहा।

कहानी संग्रह– लिली, सखी, सुकुल की बीबी, चतुरी चमार, देवी।

निबंध संग्रह– प्रबंध–पद्य, चाबुक, प्रबंध प्रतिमा, प्रबंध परिचय।

आलोचना– पंत और पल्लव, रवीन्द्र कविता कानन।

नाटक– शकुंतला, उषा अनिरुद्ध।

जीवनी– ध्रुव, भीष्म, प्रहलाद, राणा प्रताप।

2.4.1 सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' : पाठ्यांश – तोड़ती पत्थर, भारति! जय विजय करे!

1. तोड़ती पत्थर

वह तोड़ती पत्थर,
देखा मैंने उसे इलाहाबाद के पथ पर–
वह तोड़ती पत्थर।
कोई न छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार,
श्याम तन, भर बंधा यौवन,
नत नयन, प्रिय–कर्म–रत मन,
गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार–बार प्रहार :
सामने तरु–मालिका अट्टालिका, प्राकार।

शब्दार्थ : तले– नीचे, श्याम– सांवला, नत नयन– झुकी हुई आंखें, कर्म–रत– कर्म में लीन, गुरु– भारी, तरु–मालिका– वृक्षों की कतार, अट्टालिका– महल, विशाल भवन, प्राकार– चहारदीवारी, घेरा

टिप्पणी

सन्दर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां हिन्दी के महाप्राण सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की प्रसिद्ध कविता 'तोड़ती पत्थर' से ली गई हैं। इस कविता की रचना निराला ने सन् 1936 में की थी। इस कविता में कवि सड़क के किनारे पत्थर तोड़ती एक स्त्री की यातना की मार्मिक प्रस्तुति के द्वारा समाज में विद्यमान आर्थिक विषमता पर प्रहार करता है।

प्रसंग : गुलाम भारत की राजनीतिक, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक नगरी इलाहाबाद की एक सड़क के किनारे (जो संभवतः जवाहर लाल नेहरू के घर आनन्द भवन के सामने की सड़क थी) बैठ कर पत्थर तोड़ती एक युवती की मनोदशा और देह–दशा का वर्णन कवि ने इन पंक्तियों में किया है।

व्याख्या : कवि कहता है कि इलाहाबाद के रास्ते पर मैंने एक मजदूर स्त्री को पत्थर तोड़ते हुए देखा है। यहां इलाहाबाद नगर का उल्लेख सोच समझकर किया गया है। यह नगर आजादी के पहले भारत की राजनीतिक दिशा को निर्धारित कर रहा था। तत्कालीन राजनीतिज्ञ समस्त भारत को शोषण मुक्त करने का दावा कर रहे थे, जबकि विडम्बना यह थी कि उनके ठीक सामने एक स्त्री पत्थर तोड़ रही है और उसकी ओर उनका ध्यान तक नहीं जाता। औरत संसार की सबसे कोमल प्राणी है और वह जो काम कर रही है वह संसार का सबसे अधिक मुश्किल काम है। वह स्त्री ईंट न तोड़कर पत्थर तोड़ रही है। यह तथ्य उसकी पीड़ा को और अधिक कारुणिक बना देता है। कविता की अगली पंक्ति एक नकार के साथ शुरू होती है। 'कोई न छायादार' के माध्यम से कवि उस स्त्री की विवशता और पीड़ा की प्रभावी अभिव्यक्ति करता है। वह कहता है कि वह अपनी मजबूरियों की वजह से सड़क के किनारे एक ऐसी जगह पर बैठना स्वीकार करती है जहां कोई भी छायादार पेड़ नहीं है। इस वर्णन के साथ ही अचानक कवि का ध्यान उस स्त्री के सांवले शरीर की ओर जाता है और वह कहता है कि उस स्त्री का शरीर सांवला है, वह युवती है और उसके शरीर में एक कसाव है। वह अपनी आंखें झुका कर पत्थर तोड़ रही है लेकिन उसका मन अपने प्रिय कर्म अर्थात अपने परिवार में लगा हुआ है। निराला स्त्री की युवावस्था की सूचना के साथ यह कहना चाहते हैं कि इस उम्र में उसका जीवन किसी परिवार के भरण–पोषण और पति–पुत्र के साहचर्य में गुजरना चाहिए जबकि वह पत्थर तोड़ने के लिए अभिशप्त है। कवि आगे कहता है कि वह स्त्री एक भारी हथौड़ा लेकर पत्थर पर बार–बार प्रहार कर रही है। पत्थर पर बार–बार किए जाने वाले इस प्रहार में केवल उसके पत्थर तोड़ने की कार्य की सूचना मात्र नहीं बल्कि इसके माध्यम से उसके भीतर अपनी स्थिति को लेकर पनप रहे आक्रोश की व्यंजना भी है। कविता की अगली पंक्ति स्त्री के मन के इस आक्रोश को नई ऊंचाई प्रदान करता है। इस पंक्ति में कवि कहता है कि वह स्त्री जहां बैठकर पत्थर तोड़ रही उसके ठीक सामने ऊंची–ऊंची दीवारों के भीतर वृक्षों की कतारों से सुसज्जित एक आलीशान भवन खड़ा है। यह भवन संभवतः 'आनन्द भवन' है, जहां से उस समय आजादी की लड़ाई संचालित हो रही थी। एक तरफ एक पत्थर तोड़ने वाली स्त्री है जिसके बैठने के लिए कोई छायादार पेड़ नहीं है दूसरी तरफ एक निर्जीव भवन है जो पेड़ों की कतार

की छाया का आनन्द ले रहा है। एक तरफ एक स्त्री सड़क के किनारे बैठी है, उसे किसी प्रकार की सुरक्षा उपलब्ध नहीं है और दूसरी तरफ एक भवन बड़ी–बड़ी दीवारों के भीतर सुरक्षित है। इस विडम्बना के सृजन के द्वारा कवि इन अंतिम पंक्तियों में उस स्त्री की पीड़ा की घनीभूत व्यंजना करता है। इस विषमता का बोध उस स्त्री के भीतर भी है, यही कारण है कि उस स्त्री का भारी हथौड़ा जहां एक ओर पत्थर पर पड़ता है वहीं लेखक की विशिष्ट वर्णन शैली की वजह से उसकी चोट उस भवन और उसके भीतर रहने वाले प्राणियों को भी लगती है।

चढ़ रही थी धूप,
गर्मियों के दिन,
दिवा का तमतमाता रूप,
उठी झुलसाती हुई लू
रुई ज्यों जलती हुई भू,
गर्द चिनगीं छा गई,
प्रायः हुई दुपहर–
वह तोड़ती पत्थर।

शब्दार्थ : दिवा– दिन, लू– गर्मी के दिन में चलने वाली गर्म हवा, भू– पृथ्वी, गर्द– धूल, चिनगीं– चिंगारी, दुपहर– दोपहर

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां हिन्दी के महाप्राण सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की प्रसिद्ध कविता 'तोड़ती पत्थर' से ली गई हैं। इस कविता की रचना निराला ने सन् 1936 में की थी। इस कविता में कवि सड़क के किनारे पत्थर तोड़ती एक स्त्री की यातना की मार्मिक प्रस्तुति के द्वारा समाज में विद्यमान आर्थिक विषमता पर प्रहार करता है।

प्रसंग : इन पंक्तियों के द्वारा कवि गर्मी के दिन में बदलते मौसम के द्वारा पत्थर तोड़ती स्त्री के मन में पनप रहे आक्रोश की व्यंजना करता है।

व्याख्या : कवि निराला बताते हैं कि गर्मियों के दिन थे और धूप लगातार तेज हो रही थी। दिन गर्मी की अधिकता से जलता हुआ मालूम पड़ता था। दिन को देखकर ऐसा लग रहा था जैसे वह क्रोध के मारे तमतमा रही हो। इसी बीच पृथ्वी को झुलसाने वाली लू चलने लगी और पूरी पृथ्वी रुई के समान जलने लगी। पृथ्वी पर पड़े कंकड़ इस भयावह गर्मी की वजह से गर्म हो गये। और लू के कारण चलने वाली हवाओं ने धूल के कणों को चिंगारियों में बदल दिया। इस प्रकार धीरे–धीरे दोपहर हुई। 'प्रायः' शब्द के द्वारा कवि गर्मी की लम्बी दोपहर के धीरे–धीरे बीतने की ओर इशारा कर रहा है और अंतिम पंक्ति के साथ इसे जोड़ते हुए कहता है कि इस भयानक दोपहर में भी वह स्त्री पत्थर तोड़ती रही।

देखते देखा मुझे तो एक बार
उस भवन की ओर देखा, छिन्नतार,
देखकर कोई नहीं,

देखा मुझे उस दृष्टि से
जो मार खा रोई नहीं,
सजा सहज सितार,
सुनी मैंने वह नहीं जो थी सुनी झंकार।
एक क्षण के बाद वह कांपी सुघर,
ढुलक माथे से गिरे सीकर,
लीन होते कर्म में फिर ज्यों कहा–
'मैं तोड़ती पत्थर।'

शब्दार्थ : छिन्नतार– जिसके ध्यान का तार टूट गया हो, सितार– एक वाद्ययंत्र, सुघर– सुंदर, सीकर– पसीना

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां हिन्दी के महाप्राण सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की प्रसिद्ध कविता 'तोड़ती पत्थर' से ली गई हैं। इस कविता की रचना निराला ने सन् 1936 में की थी। इस कविता में कवि सड़क के किनारे पत्थर तोड़ती एक स्त्री की यातना की मार्मिक प्रस्तुति के द्वारा समाज में विद्यमान आर्थिक विषमता पर प्रहार करता है।

प्रसंग : यह कविता की अंतिम पंक्तियां हैं। इन पंक्तियों में कवि और स्त्री के बीच घटे मौन संवाद की सुंदर व्यंजना है। 'वह तोड़ती पत्थर' से शुरू हुई कविता 'मैं तोड़ती पत्थर' पर आकर समाप्त होती है। रचना प्रक्रिया के क्रम में कवि और काव्य–विषय के बीच की समाप्त होती दूरी की ओर भी इन पंक्तियों में संकेत किया गया है।

व्याख्या : कवि कह रहा है कि पत्थर तोड़ती हुई वह स्त्री अपने काम से उबकर थकान मिटाने के लिए अपनी गर्दन उठाती है और आसपास की चीजों को देखते हुए मेरी तरफ एक बार देखती है, और फिर उस आलीशान भवन की ओर उखड़ी हुई दृष्टि से देखती है। यहां कवि उसके देखने की अलग–अलग स्थितियों का बेहद सूक्ष्म वर्णन करता है। 'देखते देखा' के माध्यम से वह कहता है कि उसने आसपास की चीजों को सरसरी निगाह से देखा, 'मुझे तो एक बार' के द्वारा वह कहना चाहता है कि मेरी ओर गहरी दृष्टि से देखा और 'छिन्नतार' से वह भवन के प्रति उसकी उपेक्षित निगाह की ओर संकेत करता है। कवि की ओर स्त्री ने जिस तरह से देखा था उसके विषय में कवि कहता है कि उस नजर में इतनी असहाय और मजबूरी प्रकट हो रही थी जैसे किसी व्यक्ति को मारा तो गया हो पर उसे रोने नहीं दिया गया हो। इस नहीं रोने में जहां उसकी मजबूरी का पता चलता है वहीं उसकी दृढ़ता का भी पता चलता है। उसकी नजर कह रही थी कि चाहे जितनी मुश्किल हो लेकिन उसको बिना रोए ही सहन करूंगी। स्त्री की इस मनोदशा को अगली पंक्तियों में विस्तार देते हुए कवि कहता है कि उसकी नजर ने मेरे भीतर सितार से पैदा होने वाली ऐसी झंकृति पैदा की जैसी झंकार अब के पहले मैंने कभी नहीं सुनी थी। यह झंकृति ऐसे ही सितार से निकल सकती है जिसके तार अच्छी तरह सजे हुए हों। यह झंकार कवि के व्यक्तित्व में एक बदलाव लाती है। वह सामाजिक विषमता को देखने की एक नई दृष्टि प्राप्त करती है। इस क्रम में अचानक वह सुंदर स्त्री एक क्षण के लिए कांप उठती है और उसके

माथे से पसीने की बूंदें ढुलक जाती हैं, शायद उसे अपने काम से विचलन का अहसास होता है। उसके इस कंपन में एक भय है कि कहीं काम के इस विचलन की वजह से उसका मालिक उसे काम से न निकाल दे। एक ऐसे काम के चले जाने का भयानक भय उसके भीतर विद्यमान है जो उसकी प्रकृति के बिल्कुल अनुरूप नहीं है। यहां आकर उस स्त्री की विवशता का वर्णन अपने चरम पर पहुंच जाता है, जिसकी समाप्ति कवि कविता की अंतिम पंक्तियों में बेहद सधे अंदाज में करता है। अंत में कवि कहता है कि अपने काम से विचलन का अहसास जैसे ही उसे होता है वह तुरंत अपने काम में लीन हो जाती है। जिस तत्परता से वह काम में लीन होती है उससे कवि को ऐसा लगता जैसे वह कह रही हो कि आप चाहे मेरे प्रति जितनी भी सहानुभूति रखें मेरी अवस्था यही रहेगी कि मैं पत्थर तोड़ती रहूंगी। अंत का 'मैं तोड़ती पत्थर' कवि सहित तमाम पाठक वर्ग को एक चुनौती भी प्रस्तुत करता है कि एक स्त्री पत्थर तोड़ रही है और हम उसके लिए कुछ भी नहीं कर पा रहे हैं।

2. भारति! जय विजय करे

भारति, जय, विजय करे
कनक–शस्य–कमलधरे!
लंका पदतल शतदल
गर्जितोर्मि सागर–जल
धोता–शुचि चरण युगल
स्तव कर बहु–अर्थ–भरे।

शब्दार्थ : भारति– भारतमाता, कनक– सोना, शस्य– कोमल घास, प्रशंसनीय, पद– पैर, शत– सैकड़ों, गर्जितोर्मि– गरजती हुई लहरें, शुचि– पवित्र, युगल– दो, स्तव– प्रशंसा, स्तुति

सन्दर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां राष्ट्रवादी चेतना से ओतप्रोत छायावादी कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कविता 'भारति! जय विजय करे' से ली गई है। यह कविता निराला के काव्यसंग्रह 'गीतिका' में संकलित है। पहली बार इसका प्रकाशन 'माधुरी' पत्रिका के फरवरी, 1936 अंक में हुआ था। प्रस्तुत कविता में निराला श्रीधर पाठक से राष्ट्र–वंदना की चली आ रही परंपरा का पालन करते हुए भारतभूमि की वंदना की है।

प्रसंग : कविता के इस आरंभिक अंश में निराला ने भारतवर्ष के भौगोलिक वैभव का वर्णन चित्रात्मक शैली में किया है। यह कविता बारह मात्राओं वाले लीला नामक छोटे छंद में रची गई है।

व्याख्या : कवि भारतमाता की जयकार करते हुए कहता है कि यह विजय को धारण करने वाली माता हैं। भारत भूमि वीरों एवं विजयी लोगों की भूमि है। कवि भारतमाता की कल्पना लक्ष्मी के रूप में करते हुए कहता है कि जिस प्रकार लक्ष्मी के हाथों में कमल का फूल होता है वैसे ही भारतमाता के हाथों में सोने जैसी पकी हुई बालियां हैं। खेतों में धान एवं गेहूं की पकी हुई बालियां दूर से सोने जैसी लगती हैं। प्राचीन काल में भारत का वैभव उसकी उपजाऊ जमीन और बेशुमार पैदावार की वजह से था। उसको याद करते हुए कवि भारतमाता की तुलना लक्ष्मी से कर रहा है और इसके द्वारा भारत के प्राचीन वैभव की याद दिला रहा है।

टिप्पणी

आगे की पंक्तियों में भारतमाता का नख–शिख वर्णन किया गया है। सन् 36 में भारतभूमि की परिकल्पना में श्रीलंका भी शामिल था। कवि ने यहां श्रीलंका की कल्पना सैकड़ों पत्तों वाले एक कमल के रूप में की है। भारतमाता के चरणों में सैकड़ों पत्तों वाले कमल के समान लंका अवस्थित है। इसको देखकर ऐसा लगता है जैसे भारतमाता श्रीलंका रूपी कमल के ऊपर खड़ी हैं। यह कमल रूपी लंका विशाल समुद्र के ऊपर तैर रही है। इस समुद्र के जल में ऊंची–ऊंची गरजती हुई लहरें उठ रही हैं। समुद्र की गरजती–उछलती हुई लहरों को देखकर कवि कल्पना कर रहा है कि कोई अज्ञात शक्ति भारतमाता के दोनों पवित्र चरणों को सागर के जल द्वारा धो रही है और साथ ही अनेकानेक अर्थों से भरे मंत्रों द्वारा उनकी प्रार्थना भी कर रहा है। यहां कवि सागर की उठती लहरों में वंदना के स्वर सुन रहा है और सागर में उठती लहरों को किसी अज्ञात शक्ति द्वारा भारतमाता के चरणों को धोने के प्रयास के रूप में देख रहा है।

विशेष : इन पंक्तियों की शब्द–योजना और लय–योजना लाजवाब है। तीसरी और चौथी पंक्ति में 'ल' वर्ण के द्वारा मोहक अनुप्रास की योजना की गई है। 'ध' और 'श' जैसी महाप्राण ध्वनियों द्वारा ओज भाव का सृजन किया गया है।

तरु–तृण–वन–लता वसन
अंचल में खचित सुमन
गंगा ज्योतिर्जल–कण
धवल धार हार गले।
मुकुट शुभ्र हिम–तुषार
प्राण प्रणव ओंकार,
ध्वनित दिशाएं उदार,
शतमुख–शतरव–मुखरे!

शब्दार्थ : तरु– पेड़, तृण– घास, वसन– वस्त्र, सुमन– फूल, धवल– सफेद, निर्मल, शुभ्र– श्वेत, हिम–तुषार– बर्फ की फुहारें, प्रणव– ईश्वरीय ध्वनि, ओंकार– ओम की पवित्र ध्वनि, शत– सौ, रव– ध्वनि, मुखरे– उच्चरित होना।

सन्दर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां राष्ट्रवादी चेतना से ओतप्रोत छायावादी कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कविता 'भारति! जय विजय करे' से ली गई है। यह कविता निराला के काव्यसंग्रह 'गीतिका' में संकलित है। पहली बार इसका प्रकाशन 'माधुरी' पत्रिका के फरवरी, 1936 अंक में हुआ था। प्रस्तुत कविता में निराला श्रीधर पाठक से राष्ट्र–वंदना की चली आ रही परंपरा का पालन करते हुए भारतभूमि की वंदना की है।

प्रसंग : कविता की इन पंक्तियों में कवि भारतमाता के वक्षस्थल और शिरोभाग के सौंदर्य का वर्णन कर रहा है।

टिप्पणी

व्याख्या : कवि इन पंक्तियों में कह रहा है कि भारतमाता के वस्त्र यहां के वृक्ष, विभिन्न प्रकार की घास और वन की लताएं हैं, और उनके आंचल में विविध प्रकार के फूलों का सौंदर्य अंकित है। यहां ध्यान देने वाली बात है कि भारतमाता साड़ी पहने हुए हैं और साड़ी का आंचल उसके शेष भाग से ज्यादा खूबसूरत होता है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कवि कह रहा है कि भारतमाता की साड़ी का निर्माण तो वृक्ष, घास और जंगली लताओं से हुआ है लेकिन उनका आंचल विभिन्न प्रकार के फूलों से बना है। साड़ी की तुलना जंगली लताओं से सोच–समझ कर ही की गई है। जैसे लताएं वृक्षों के ऊपर लटकती रहती हैं वैसे ही साड़ी किसी स्त्री के बदन पर झूलती रहती है। गंगा के प्रकाश सदृश्य स्वच्छ जल और उनके भौगोलिक विस्तार को देखकर निराला को लगता है कि भारतमाता के गले का हार है। ऐसा वे गंगा–जल के वैशिष्ट्य और भारतवर्ष के वैभव के विस्तार के इतिहास को ध्यान में रखकर भी कह रहे हैं। भारत की सबसे अधिक उपजाऊ जमीन गंगा के जल द्वारा सिंचित प्रदेश ही रहा है। इसलिए कवि कहता है कि भारतमाता के गले में मोतियों सा उज्ज्वल गंगा रूपी हार झूल रहा है। गंगा का जल इतना साफ और सफेद है कि उसके जल के कणों की तुलना कवि ने मोतियों से की है और गंगा के सफेद जल धारा की तुलना मोतियों की माला से की है।

भारतमाता के शिरोभाग का वर्णन करते हुए निराला कविता के अंतिम बंद में कहते हैं कि उनका मुकुट श्वेत हिम के कणों से बना हुआ है और उनकी सांसों में ओंकार नामक ईश्वरीय ध्वनि का वास है। भारत के उत्तर में विशाल हिमालय पर्वत स्थित है। यह भगवान शिव का निवास स्थल भी माना जाता है। ऐसी मान्यता है कि हिमालय पर्वत पर निरंतर ओंकार की ध्वनि गुंजायमान होती रहती है। भारतमाता मूक नहीं है। उनकी सभी उदार दिशाओं से ध्वनियों का गुंजन हो रहा है और गुंजन किसी एक मुख से नहीं बल्कि सैकड़ों मुखों और सैकड़ों आवाजों के द्वारा हो रहा है। इसका तात्पर्य यह है कि भारतमाता का आंचल उदार है, वह अपने आंचल में सबको उदार भाव से स्थान देती हैं। भारतीय संस्कृति और समाज किसी एक जाति का समाज नहीं है। इसका निर्माण भिन्न–भिन्न संस्कृतियों से मिलकर हुआ है और उन सबकी सम्मिलित आवाज ही भारतमाता की आवाज है।

विशेष : भारत के नक्शे पर यदि भारतमाता की तस्वीर बनाई जाए तो वह इस कविता में वर्णित भारतमाता के स्वरूप के अनुरूप ही होगी। भारत के उत्तर में हिमालय, मध्य से थोड़ा ऊपर गंगा, मध्य में वनप्रांतर और पैरों के पास सागर स्थित है।

पूरी कविता में महाप्राण ध्वनियों का प्राधान्य है, जिसके द्वारा ओज गुण का सृजन करना कवि का लक्ष्य है। यह कविता आजादी के दौरान मंत्र की तरह पढ़ा जाता था।

2.4.2 छायावाद और निराला

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' छायावाद ही नहीं समूची हिन्दी कविता में अपना एक खास स्थान और महत्व रखने वाले कवि हैं। छायावादी कवियों में जितनी अधिक चर्चा निराला की हुई है, उतनी शायद ही किसी अन्य कवि की हुई हो। निराला का लेखन–काल छायावाद से लेकर नई कविता के बाद तक विस्तृत है। उनकी कविता में विकास की

टिप्पणी

निरन्तरता को आसानी से लक्षित किया जा सकता है। वे किसी धारा या वाद के बंधन में बंधने वाले कवि नहीं थे, फिर भी उनकी कविता में छायावादी काव्य तत्वों की पूर्ण प्रतिष्ठा हुई है।

देश प्रेम एवं स्वातंत्र्य चेतना– देश प्रेम और स्वातंत्र्य की भावना छायावादी काव्य का केन्द्रीय भाव है। छायावाद की राष्ट्रीयता राजनीतिक नहीं सांस्कृतिक है। इसीलिए वह छायावादी कवियों की रचनाओं में सतह पर नहीं बल्कि अंतर्धारा की तरह बहती है। निराला एक ऐसे कवि हैं जिनकी कविताओं में देशप्रेम और स्वातंत्र्य चेतना प्रत्येक प्रकार के बंधनों से मुक्ति के रूप में प्रकट हुई है–

तोड़ो–तोड़ो तोड़ो कारा,
निकले भी गंगाजल धारा।

निराला के लिए देश सिर्फ भौगोलिक इकाई नहीं बल्कि एक जीवित रागात्मक लगाव और सत्ता है। जो प्रतिदिन प्राणों में नूतन संगीत भरता है। वे भारत माता के यश की आराधना और महिमा का वर्णन करते हुए कहते हैं–

भारति, जय विजय करे! कनक–शास्य–कमल धरे।
लंका पदतल शतदल, गर्जितोर्मि सागर जल
धोता शुधि धरण–युगल, स्तव कर बहु अर्थ भरे।

वैयक्तिकता : वैयक्तिकता छायावाद की महत्वपूर्ण प्रवृत्ति है। छायावादी कवि व्यक्ति की स्वतंत्रता का पक्षधर है। निराला भी अपनी कविताओं में समाज में व्यक्ति स्वातंत्र्य की बात करते हैं। किन्तु सामाजिक बंधन इतने कठोर हैं कि व्यक्ति की स्वतंत्रता के लिए उससे टकराना पड़ता है, और उस टकराहट में व्यक्ति दुख पाता है। निराला 'राम की शक्ति पूजा' कविता में राम के माध्यम से अपने ही जीवन की व्यथा कहते हैं–

धिक जीवन जो पाता ही आया है विरोध।
धिक साधन जिनके लिए सदा ही किया शोध।

रहस्यानुभूति : छायावादी कवियों की तरह ही रहस्यानुभूति निराला की भी कविता की विशेषता है। अलौकिक सत्ता के प्रति जिज्ञासा और आत्मनिवेदन का भाव ही रहस्यवाद है। निराला की कविता में इस रहस्यवाद की अभिव्यक्ति खूब हुई है। निराला पर अद्वैतवाद, उपनिषदिक चेतना और विवेकानन्द का प्रभाव है। उनकी कविता में रहस्यवाद की भावना वहीं से आयी है। 'तुम और मैं' कविता में वे कहते हैं कि–

तुम तुंग हिमालय श्रृंग
और मैं चंचल गति सुरि–सरिता
तुम विमल उदय उच्छ्वास
और मैं कान्त–कामिनी कविता।

प्रकृति का मानवीकरण : प्रकृति निराला की सहचरी है। निराला का पूरा जीवन कई प्रकार के संकटों और दुखों से घिरा रहा है। उसमें यदि कहीं कुछ सुन्दर है तो वह प्रकृति

टिप्पणी

ही है। उन्होंने अपनी कविता में प्रकृति को कई रूपों में चित्रित किया है। प्रकृति का मानवीकरण कर उन्होंने उसे अद्वितीय स्वरूप दिया है। उनकी प्रसिद्ध कविता 'जूही की कली' जो पहले प्रकाशन योग्य नहीं मानी गयी थी, वह बाद में प्रकृति पर लिखी गयी श्रेष्ठ कविता मानी गयी। उक्त कविता में निराला ने मलय समीर (हवा) और जूही की कली के प्रेम का अप्रतिम वर्णन किया है–

सोती थी

जाने कहां कैसे प्रिय आगमन वह

नायक ने चूमे कपोल

डोल उठी बल्लरी की लड़ी जैसे हिंडोल

स्त्री का गरिमापूर्ण चित्रण : निराला के काव्य में स्त्री के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त की गयी है। निराला के लिए स्त्री सहचरी, प्रेमिका और मां है। निराला के लिए स्त्री भोग नहीं प्रेरणा की स्रोत है। 'यामिनी जागी' कविता में वे स्त्री को प्रेयसी के रूप में चित्रित करते हैं–

प्रिय यामिनी जागी।

अलस पंकज दृग अरुण–मुख।

तरुण अनुरागी।

खुले केश अवशेष शोभा भर रहे।

पृष्ठ ग्रीवा–बाहु उर पर धिर रहे।

'राम की शक्ति पूजा में' निराला के राम अधर्म पर विजय के लिए शक्ति की आराधना करते हैं। वहां महाशक्ति स्त्री स्वरूप में आकर राम के विजय का मार्ग प्रशस्त करती हैं। निराला ने 'राम की शक्ति पूजा' में स्त्री का गरिमापूर्ण चित्रण कर उसे जीवन की प्रेरणा के रूप में स्वीकृति दी है–

श्री राघव हुए प्रणत मन्द–स्वर–वन्दन कर,

होगी जय होगी जय हे पुरुषोत्तम नवीन।

कह महाशक्ति राम के वदन में हुई लीन।

मानवतावादी जीवन दर्शन : छायावादी काव्य पर उसके समकालीन वैचारिक दर्शनों का प्रभाव स्पष्ट है। छायावाद का समय भारतीय स्वाधीनता का समय है। प्रमुख छायावादी कवि अपने समय में चलने वाले आंदोलनों, वैचारिक परिवर्तनों से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े थे। निराला स्वयं गांधीजी, रवीन्द्रनाथ टैगोर जैसे महापुरुषों के विचारों से परिचित थे। साथ ही वे दुनिया भर के तमाम दूसरे विचारकों की भावना को देख समझ रहे थे। इन सभी विद्वानों के विचारों के साथ उनका कभी सहमति तो कभी असहमति का भाव चलता रहता था। अपने समय की प्रखर चेतना से जुड़ने के कारण निराला के भीतर एक नये वैचारिक जीवन दर्शन का सूत्रपात हुआ जिसे नया मानवतावादी दर्शन कहा जा सकता है। वैसे यह नवीन मानवतावादी दर्शन पूरे छायावादी काव्य का ही है। जो सबके हित की कामना, प्रत्येक प्रकार की शोषण से मुक्ति की बात करता है। निराला 'भिक्षुक' कविता में कहते हैं कि–

टिप्पणी

ठहरो अहो मेरे हृदय में है अमृत, सींच दूंगा।

अभिमन्यु–जैसे हो सकोगे तुम।

भाषा, छंद, और बिम्ब : छायावादी काव्य ने कविता की भाषा का नया संस्कार किया। कविता की भाषा जो अब तक व्याकरण के शुष्क नियमों, तथाकथित मर्यादा में बंधी हुई थी, उसे छायावादी कवियों ने आजाद करा उसे नई संभावनाओं से भर दिया। स्वयं निराला ने अपनी कविता में भाषा को एक नये रूप में बरता है। उनकी कविता में एक ओर देशज भाषा का तेवर है तो दूसरी ओर संस्कृतनिष्ठ शब्दावली का वैभव। देशज भाषा का तेवर 'कुकुरमुत्ता' कविता में तो संस्कृतनिष्ठ शब्दावली का वैभव 'राम की शक्ति पूजा' की भाषा में देखा जा सकता है।

छायावादी कविता ने मुक्त छंद को अपनाकर कविता में छन्दों के परम्परागत ढांचे को तोड़ा। मुक्त छंद की अवधारणा निराला ने की। आज की हिन्दी कविता भी मुक्त छंद में ही लिखी जा रही है। इसी तरह काव्य में बिम्बों के प्रयोग को लेकर भी छायावादी कवियों ने महत्वपूर्ण कार्य किया। निराला ने संश्लिष्ट और सुकुमार दोनों तरह के बिम्बों का प्रयोग किया है। इन दोनों प्रकार के बिम्बों के उदाहरण उनकी प्रसिद्ध कविता 'राम की शक्ति पूजा' में देखे जा सकते हैं–

संश्लिष्ट बिम्ब : है अमानिशा उगलता गगन घन अंधकार,

खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन चार।

अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल,

भूधर ज्यों ध्यान मग्न केवल जलती मशाल।

सुकुमार बिम्ब : नयनों का नयनों से गोपन प्रिय संभाषण,

पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान–पतन।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि निराला प्रमुख छायावादी कवि हैं। उनकी कविता में छायावाद की सभी विशेषताएं उपलब्ध हैं। कई स्थानों पर वे छायावाद की सीमा का अतिक्रमण भी करते थे। किन्तु उनका मुख्य काव्य संस्कार छायावादी ही रहा।

2.4.3 निराला के काव्य में प्रगति और विद्रोह के स्वर

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला का व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों प्रगति और विद्रोह के प्रतीक हैं। निराला जीवन, समाज और रचना सभी स्तरों पर संघर्ष करते रहे। किन्तु कहीं भी किसी प्रकार के बंधन को स्वीकार नहीं किया। वे सत्य के अन्वेषक थे। इसीलिए वे सामान्यतः प्रगति और विद्रोह के पक्षधर थे। आलोचक बच्चन सिंह ने अपनी पुस्तक 'क्रान्तिकारी कवि निराला' में निराला के विद्रोही व्यक्तित्व के सम्बन्ध में लिखा है कि "निराला के जीवन को आद्यंत देखने पर इनका व्यक्तित्व अतिशय क्रान्तिकारी सिद्ध होता है। साहित्य और समाज दोनों स्थानों में इन्होंने क्रान्ति की है। अनावश्यक रूढ़ियों के विरोध में खुलकर विद्रोह किया है। इनका सारा साहित्यिक तथा सामाजिक जीवन विद्रोह से भरा हुआ है। मुक्तछंद का विधान सबसे पहले इन्होंने किया। इनकी इस शैली का विरोध हुआ...। किन्तु इन्हें अपने मार्ग से विचलित करने में कोई शक्ति भी सफल न हुई। निरपेक्ष गीतों का निर्माण, सटीक

और चुभते व्यंग्यों की सृष्टि, कजली और गजलों के विधान में–सर्वत्र इनकी स्वच्छंद–प्रियता परिलक्षित होती है। इन्हें किसी प्रकार का बंधन स्वीकार नहीं। किसी की रोक–टोक से ये रुकने वाले नहीं हैं।''

टिप्पणी

निराला के काव्य में प्रगति और विद्रोह का आगमन 'बेला', 'नये पत्ते', 'कुकुरमुत्ता' जैसी रचनाओं के साथ हुआ। निराला ने सामाजिक रूढ़ियों, असमानता, गरीबी, शोषण, आर्थिक संकटों, भूख और दरिद्रता, स्वार्थ, छल–कपट आदि का पूरी ताकत से विरोध किया है। साथ ही वे इन समस्याओं से मुक्ति पाने और एक प्रगतिशील समाज के निर्माण के लिए प्रयत्नशील थे। निराला के काव्य में उपस्थित प्रगति और विद्रोह को निम्नलिखित शीर्षकों द्वारा समझ सकते हैं–

सामाजिक प्रगति और विद्रोह : निराला ने अपनी कविता में सामाजिक प्रगति और विद्रोह के कई आयामों का चित्रण किया है। निराला ने सामाजिक प्रगति में पूंजी का दुष्चक्र, आर्थिक असमानता और किसान–मजदूरों की दयनीय स्थिति का वर्णन किया है। निराला एक सक्षम और समतामूलक समाज की स्थापना के हिमायती थे। 'वह तोड़ती पत्थर' कविता में वे सड़क पर पत्थर तोड़ रही मजदूर स्त्री का चित्रण करते हैं–

वह तोड़ती पत्थर

देखा मैंने उसे इलाहाबाद के पथ पर–

वह तोड़ती पत्थर।

कोई न छायादार

पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार,

श्याम तन, भर बंधा यौवन,

नत नयन, प्रिय–कर्म–रत मन,

गुरु हथौड़ा हाथ,

करती बार–बार प्रहार।

तो वहीं 'बेला' संग्रह की गजलों, कविताओं में वे पूंजीपति मिल मालिकों की सम्पत्ति को देश हित में लगाने की बात करते हैं। वे सामाजिक विषमता को दूर कर एक समता मूलक समाज की ओर संकेत करते हैं। निराला शिक्षा को सबके लिए सुलभ कराना चाहते हैं। 'बेला' संग्रह की ही एक कविता में वे पाठशाला को समाज के वंचित तबकों के लिए खोलने की बात करते हैं।

पारिवारिक प्रगति और विद्रोह : निराला की प्रगति और विद्रोह की चेतना पारिवारिक स्तर पर भी देखने को मिलती है। यह सर्वविदित है कि निराला की आर्थिक स्थिति अत्यंत खराब हो गयी थी। अभाव और दुख की स्थिति में निराला ने अपनी पुत्री सरोज का विवाह किया। पुत्री का विवाह उन्होंने परिवार, कुल–खानदान की परम्परा को तोड़ते हुए लीक से हट कर किया। 'सरोज स्मृति' कविता में वे कहते हैं कि–

मैं मूर्ख बनूं यह नहीं सुघर

बारात बुलाकर मिथ्या व्यय

मैं करूं नहीं ऐसा सुसमय

तुम करो ब्याह, तोड़ता नियम

मैं सामाजिक योग के प्रथम,

लग्न के; पढूंगा स्वयं मंत्र

यदि पंडितजी होंगे स्वतंत्र।

टिप्पणी

साम्राज्यवादी नीतियों के प्रति विद्रोह : निराला के लिए भारत का स्वधीनता संघर्ष अन्ततः साम्राज्यवाद–विरोधी संघर्ष था। वे इस बात को भली–भांति समझ गये थे कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद की नीतियां भारत के स्वत्व–बोध के दमन के साथ–साथ पूरे देश को आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक रूप से कमजोर कर रही थीं। निराला अपने रचना–कर्म के माध्यम से साम्राज्यवादी नीतियों के प्रति खुला विद्रोह कर रहे थे। निराला के इस विद्रोही व्यक्तित्व के सन्दर्भ में रामविलास शर्मा ने लिखा है कि "उनकी क्रांति का लक्ष्य था–ब्रिटिश साम्राज्यवाद से मुक्ति, जाति, वर्ण, धर्म आदि की सीमायें तोड़कर मानव समानता के आधार पर रचा हुआ समाज।" निराला ने अपनी प्रसिद्ध कविता 'महाराज शिवाजी का पत्र' में औरंगजेब के विरुद्ध शिवाजी के युद्ध को अपनी शैली में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध भारतीय जनता के युद्ध का रूप दे देते हैं–

जितने विचार आज

मारते तरंगें हैं साम्राज्यवादियों की भोग–वासनाओं में,

नष्ट होंगे चिरकाल के लिए।

आएगी भाल पर

भारत की ज्योति,

हिन्दुस्तान मुक्त होगा घोर अपमान से,

दासता के पाश कट जायेंगे।

नारी मुक्ति का स्वप्न और पुरुषप्रधान व्यवस्था से विद्रोह : निराला के काव्य की प्रेरणा स्त्री का प्रेम है। स्वयं निराला के अपने जीवन में भी हिन्दी भाषा के प्रति लगाव और आकर्षण पत्नी मनोहरा देवी के कारण हुआ। इसलिए निराला एक श्रेष्ठ और समरस समाज की स्थापना के लिए स्त्रियों को प्रत्येक प्रकार के शोषण से मुक्ति की बात करते हैं। पुरुष प्रधान भारतीय समाज–व्यवस्था में वे स्त्रियों की बदहाल स्थिति का चित्रण करते हैं साथ ही स्त्री को उसकी गरिमा वापस दिये जाने का प्रस्ताव देते हैं। 'मुक्ति' शीर्षक कविता में वे भारतीय स्त्रियों का आह्वान करते हुए कहते हैं कि–

तोड़ो, तोड़ो, तोड़ो कारा

पत्थर की, निकलो फिर,

गंगा जल धारा।

गृह–गृह की पार्वती!

पुनः सत्य–सुन्दर–शिव को संवारती

उर–उर की बनो आरती।

भ्रान्तों की निश्चल ध्रुवतारा।

तोड़ो, तोड़ो, तोड़ो कारा।

टिप्पणी

निराला अपने जीवन के कठिनतम क्षणों में स्त्री से ही प्रेरणा प्राप्त करते हैं। यह युक्ति उनकी स्त्री–चेतना का महानतम उदाहरण है साथ ही यह बरसों से पुरुषप्रधान समाज व्यवस्था द्वारा गढ़ी गयी स्त्री की हीन, कमजोर और पददलित छवि के विरुद्ध निराला का विद्रोह है। निराला अपनी प्रसिद्ध कविता 'राम की शक्ति पूजा' में राम को सीता की स्मृति से प्रेरणा प्राप्त करते हुए दिखाते हैं–

सिहरा तन, क्षण–भर भूला मन, लहरा समस्त,
हर धनुर्भंग को पुनर्वार ज्यों उठा हस्त,
फूटी स्मिति सीता–ध्यान–लीन राम के अधर,
फिर विश्व–विजय–भावना हृदय में आयी भर।

पूंजीगत शोषण के प्रति विद्रोह और वंचितों की प्रगति की पक्षधरता : निराला अपनी कविता में पूंजीवाद के संस्थानिक रूपों, जो जमींदारों, मील मालिकों, सेठों–व्यापारियों के रूप में आम जनता का शोषण कर रहे हैं, उनके प्रति विद्रोह का भाव रखते हैं। निराला सच्चे अर्थों में जन–सामान्य के प्रति सहानुभूति रखते हैं। वे अपनी कविता 'किनारा वह हमसे' में पूंजीपति वर्ग के वास्तविक चरित्र को बेनकाब करते हुए कहते हैं कि–

भेद कुल खुल जाय वह सूरत हमारे दिल में है।
देश को मिल जाय जो पूंजी तुम्हारी मिल में है।

या

जन खींची खानों से
कल और कारखानों से।
रामराज के पहले के दिन आये।
वनिज के राज ने लक्ष्मी को हर लिया
टापू में ले जाकर रखा और कैद कर लिया।

इसी तरह वे समाज के शोषित–पीड़ित दलित–वंचित जनों के जीवन की वास्तविक स्थितियों का चित्रण करते हुए उनकी प्रगति की कामना करते हैं।

मानव जहां बैल–घोड़ा है,
कैसा तन–मन का जोड़ा है?
किस साधन का स्वांग रचा यह,
किस बाधा की बनी त्वचा यह,
देख रहा है विज्ञ आधुनिक
वन्य भाव का कोड़ा है।

इस तरह से देखा जा सकता है कि निराला अपने काव्य में प्रत्येक प्रकार की रूढ़ियों, जड़ता, शोषण के प्रति विद्रोह और सामाजिक प्रगति की कामना करते हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

7. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' किस युग के कवि माने जाते हैं?
8. निराला जी की पत्नी का क्या नाम था?
9. सही–गलत बताइए–
   (क) 'राम की शक्तिपूजा' सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की लंबी कविता है।
   (ख) 22 वर्ष की उम्र में विधुर होने पर निराला जी ने दूसरा विवाह किया था।

टिप्पणी

2.5 महादेवी वर्मा : सामान्य परिचय

महादेवी वर्मा को आधुनिक युग की मीरा कहा जाता है। इनका जन्म 1907 में उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद में हुआ था। महादेवी के पिता का नाम श्री गोविन्द प्रसाद एवं माता का नाम हेमरानी देवी था। महादेवी के घर का संस्कार सात्विक और शिक्षा के प्रति अनुराग रखने वाला था। पिता गोविन्द प्रसाद ने एम.ए., एल.एल.बी. तक की शिक्षा प्राप्त की थी। माता हेमरानी भी शिक्षित और उच्च संस्कारों वाली थीं। माता–पिता के उच्च संस्कारों के बीच बालिका महादेवी का पालन–पोषण हुआ। महादेवी के भीतर शिक्षा, संगीत और चित्रकला के प्रति गहरी जिज्ञासा थी। जिसके चलते वे इन विधाओं में अधिकार हासिल कर सकीं। नौ वर्ष की अवस्था में महादेवी का विवाह इलाहाबाद के श्री रूपनारायण वर्मा से हुआ। विवाह के बाद वे इलाहाबाद आ गयीं। इलाहाबाद आने के बाद महादेवी जी की औपचारिक शिक्षा हुई। संस्कृत विषय में एम.ए. करने के बाद उनकी नियुक्ति प्रयाग महिला विद्यापीठ में प्राचार्य के पद पर हुई।

महादेवी का स्थान छायावादी काव्य में विशिष्ट है। जीवन के तमाम झंझावातों के बीच उनका सृजन विकसित होता रहा। पति श्री रूपनारायण वर्मा के असमय निधन होने के बाद उनके जीवन में एक खास तरह का वैराग्य उत्पन्न हुआ। किन्तु यह वैराग्य उन्हें दुनिया से विलग नहीं करता बल्कि समभाव के साथ जीवन–जगत से जोड़ता है। उनका उदार, मानवतावादी और मिलनसार व्यक्तित्व बनकर रचनाओं में व्यक्त हुआ। वे अब जीवन को कर्ताभाव से नहीं साक्षी भाव के साथ जीने में विश्वास करने लगी थीं। उनके भीतर पीड़ित मानवता के प्रति, स्त्री जीवन के दुखों के प्रति, गरीब, शोषित लोगों के प्रति उनके भीतर अपार करुणा प्रवाहित होती रहती।

महादेवी वर्मा को उनके विशिष्ट साहित्य लेखन के लिए मंगलाप्रसाद पारितोषिक, भारत भारती, पद्म भूषण, पद्म विभूषण और भारतीय ज्ञानपीठ सम्मान प्राप्त हुए। 11 सितम्बर, 1987 को महादेवी वर्मा का निधन हो गया।

महादेवी वर्मा की रचनाएं

कविता संग्रह : नीहार, रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत, दीपशिखा, गीतपर्व, नीलांबरा, आत्मिक, सप्तपर्णा, प्रथम आयाम, अग्निरेखा

रेखाचित्र : अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखाएं

संस्मरण : पथ के साथी, मेरा परिवार

चुने हुए भाषणों का संकलन : संभाषण

निबंध : शृंखला की कड़ियां, विवेचनात्मक गद्य, साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध, संकल्पिता, हिमालय, क्षणदा

अनुवाद : सप्तपर्णा (वेद और गीत गोविन्द के महत्वपूर्ण अंशों का संस्कृत से हिन्दी में अनुवाद)

संपादन : चांद, साहित्यकार

2.5.1 महादेवी वर्मा : पाठ्यांश – विरह का जलजात जीवन, रुपसि तेरा घन केशपाश

टिप्पणी

1. विरह का जलजात जीवन

विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात!
वेदना में जन्म करुणा में मिला आवास,
अश्रु चुनता दिवस इसका, अश्रु गिनती रात!
जीवन विरह का जलजात!
आंसुओं का कोष उर, दृगु अश्रु की टकसाल,
तरल जल–कण से बने घन सा क्षणिक मृदु गात!
जीवन विरह का जलजात!

सन्दर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां प्रसिद्ध छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा की कविता 'विरह का जलजात जीवन' से ली गई हैं। महादेवी वर्मा बुद्ध के दुखवाद से प्रभावित हैं और उनकी मान्यता है कि संसार का चरम सत्य दुख है। सुख जहां हमें जगत से दूर करता है वहीं दुख समस्त मानवता से हमें जोड़ता है। महादेवी जी के लिए वेदना जीवन का सबसे सुंदर काव्य है। महादेवी के दुख का लौकिक पक्ष भी है और अलौकिक पक्ष भी है। वेदना उन्हें इसलिए भी प्रिय है क्योंकि यह परमात्मा से मिलन की राह बताती है। महादेवी का दुख जितना जीवन के सुखों से दूरी की वजह से है उससे अधिक परमात्मा से अलगाव के कारण। महादेवी परमात्मा के अलगाव से जन्मे विरह के कारण दुखी हैं, लेकिन यह दुख उन्हें बेचैन नहीं करता। वेदना महादेवी को उस करुणा से जोड़ती है जो जीवन को सब ओर स्पर्श कर स्निग्ध उज्ज्वलता प्रदान करती है।

शब्दार्थ : जलजात– कमल, आवास– घर, दिवस– दिन, उर– हृदय, दृगु– नेत्र, कोष– खजाना, टकसाल– जहां मुद्रा की छपाई होती है, मृदु– कोमल, गात– शरीर।

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियों में महादेवी वर्मा अपने जीवन को विरह का रूप बता रही हैं। उनका मानना है कि मनुष्य का जीवन दुख और वेदना से घिरा रहता है।

व्याख्या : कवयित्री महादेवी का कहना है कि मेरा संपूर्ण जीवन विरह का कमल है। जीवन को विरह का कमल कहने का मतलब यह है कि उस परमात्मा के अलगाव से पैदा हुए विरह के कारण मेरा जीवन कमल की तरह खिल उठा है। महादेवी के लिए विरह पीड़ा का नहीं आनन्द का विषय है। विरह और वेदना उन्हें काम्य है। वे आगे कहती हैं कि इस विरह का जन्म वेदना से हुआ है, जो मनुष्य का अनुभूति या आंतरिक पक्ष है। इसका बाह्य या अभिव्यक्ति पक्ष– आंसू है। इस वेदना का घर करुणा है, अर्थात वेदना करुणा के भीतर विश्राम पाती है। वेदना व्यक्तिगत होती है जबकि करुणा समष्टिगत। वेदना भले ही जन्म लेती है व्यक्तिगत पीड़ा से पर उसकी परिणति करुणा के भीतर होती है। कवयित्री कहना चाहती हैं कि मेरा व्यक्तिगत दुख विस्तृत होकर अपने भीतर समस्त संसार की पीड़ा को समाहित कर लेता है। दिन एक–एक आंसुओं को इकट्ठा करता रहता है और रात उन आंसुओं को गिनती रहती है। तात्पर्य यह कि दिन में संसार की पीड़ा को देख–देख मेरा

हृदय उसे एकत्रित करता रहता है और रात्रि के एकांत में एक–एक कर मैं उन पर विचार करती रहती हूं। इसका परिणाम यह हुआ है कि मेरा निर्मल हृदय उन आंसुओं को संचित करने वाला खजाना हो गया है और मेरी आंखें उन आंसुओं को सृजित करने वाली टकसाल हो गयी हैं। मेरा जो कोमल शरीर है, वह क्षणिक अस्तित्व वाले बादल की तरह अश्रु–जल से बना है। महादेवी वर्मा कहना चाहती हैं कि मेरा समस्त अस्तित्व वेदना और विरह के भीतर ही सृजित हुआ है। सांसारिक स्तर पर यह पति द्वारा परित्यक्त एक नारी के वेदनामय जीवन का बिम्ब है जबकि आध्यात्मिक स्तर पर यह परमात्मा के बिछुड़न से पीड़ित जीवात्मा की अंतरात्मा की आवाज है।

टिप्पणी

अश्रु से मधुकण लुटाता आ यहां मधुमास!
अश्रु ही की हाट बन आती करुण बरसात!
जीवन विरह का जलजात!
काल इसको दे गया पल–आंसुओं का हार;
पूछता इसकी कथा निश्वास ही में वात!
जीवन विरह का जलजात!
जो तुम्हारा हो सके लीलाकमल यह आज,
खिल उठे निरुपम तुम्हारी देख स्मित का प्रात!
जीवन विरह का जलजात!

शब्दार्थ : मधुमास– वसंत ऋतु, हाट– बाजार, वात– हवा, निरुपम– सुंदर, स्मित– मुस्कान।

सन्दर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियों में कवयित्री ने अपनी वेदना को व्यापक आयाम दिया है। उनका कहना है कि मेरा विरह और उससे जन्मी वेदना अंततः करुणा में विश्राम पाती है। अर्थात मेरा व्यक्तिगत दुख संसार की पीड़ा को हरने का उपादान बन जाता है।

व्याख्या : जिस प्रकार फूलों के पराग कण के बिखरने से प्रकृति में वसंत ऋतु का आगमन होता है वैसे ही मेरे जीवन में आंसुओं के मधुकण को लुटाता हुआ वसंत आता है। यहां महादेवी जी वेदना में ही आनंद की तलाश करती हैं। उनका मानना है कि जीवन का वास्तविक सौंदर्य वेदना में ही है। इस तथ्य को तार्किक परिणति तक पहुंचाते हुए महादेवी कहती हैं कि मेरे जीवन में आंसुओं का बाजार लगा हुआ है जिससे संसार में करुणा की बरसात हो रही है। महादेवी जी की कविताओं में वेदना का चरम–रूप करुणा में मिलता है, या यह कहें कि उनकी वेदना करुणा में विश्राम पाती है। वे आगे कहती हैं कि प्रत्येक क्षण समय ने मुझको आंसुओं का हार पहना रखा है और मेरे जीवन की कहानी हवा मेरी ही सांसों से जानना चाहती है। कविता की अंतिम पंक्तियों को आध यात्मिक रंग देते हुए महादेवी कहती हैं कि तुम्हारी वेदना से द्रवित होकर यदि आज वह परमात्मा तुम्हें अपना ले तो तुम्हारी मुस्कान से यह सारा जगत खिल उठेगा। इसका एक

टिप्पणी

अर्थ यह भी है कि यदि तुम्हारी वेदना ईश्वरीय आभा से मंडित हो जाए तो वह संसार की पीड़ा हर सकने में समर्थ होगा।

2. रुपसि तेरा घन–केश पाश!

रुपसि तेरा घन–केश पाश!
श्यामल श्यामल कोमल कोमल,
लहराता सुरभित केश–पाश!
नभगंगा की रजत धार में,
धो आई क्या इन्हें रात?
कम्पित हैं तेरे सजल अंग,
सिहरा सा तन हे सद्यस्नात!
भीगी अलकों के छोरों से
चूती बूंदें कर विविध लास!
रुपसि तेरा घन–केश पाश!

शब्दार्थ : रुपसि– सुंदर स्त्री, श्यामल– सांवला, सुरभित– सुगंधित, पाश– जाल, रजत– चांदी, सद्यःस्नात– अभी अभी नहाकर आया हुआ, नभगंगा– आकाशगंगा, अलक– पलक, लास– नृत्य।

सन्दर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां महादेवी वर्मा की कविता 'रुपसि तेरा घन–केश पाश!' से ली गई हैं। इस कविता में उषाकालीन प्राकृतिक सौंदर्य का सूक्ष्म अंकन किया गया है। सूर्योदय के पहले के समय को उषा कहते हैं। कवयित्री ने इस कविता में उषा का मानवीकरण करते हुए उसकी कल्पना एक स्त्री के रूप में की है। उषाकाल में प्रकृति के सौंदर्य को देखकर महादेवी जी को लगता है जैसे अभी–अभी कोई स्त्री नदी में स्नान कर अपने काले लम्बे खुले सुगंधित बालों को सुखाने के लिए लहराते हुए आ रही है।

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियों में प्रातःकालीन आलोक मिश्रित धुंधलेपन के सौंदर्य का चित्रण किया गया है।

व्याख्या : उषाकाल का मानवीकरण करते हुए महादेवी जी कहती हैं कि प्रातःकाल की प्रकृति को देखकर लगता है जैसे कोई सुंदर स्त्री अपने काले घने बालों के जाल में समस्त संसार को बांधने के लिए निकल पड़ी है। सूर्योदय के पहले के समय को यदि हम स्मरण करें तो उस समय पूरी तरह उजाला नहीं होता और न ही अंधेरा रहता है। रात के अंधेरे की छाया की तुलना कवयित्री ने उषा रूपी स्त्री के काले घने केशों से की है जबकि उसके मुख की कल्पना धीरे–धीरे हो रहे प्रकाश से की है। महादेवी जी कविता की आरंभिक पंक्तियों में उषा को संबोधित करते हुए कहती हैं कि ऐ सुंदर स्त्री तुम्हारे घने काले बालों के सुंदर जाल में कौन नहीं बंध जाएगा। उषाकाल का सौंदर्य ऐसा होता है कि वह मृत हृदयों में नई जान डाल दे। समस्त प्रकृति उसके सम्मोहन से सम्मोहित होती है। कवयित्री कह रही हैं कि तुम्हारे केश काले और कोमल हैं। तुम्हारे बालों का जाल सुगंध से भरा हुआ

टिप्पणी

है और लहरा रहा है। उषाकाल में रात की गहरी कालिमा कम हो जाती है और वातावरण में एक किस्म की कोमलता आ जाती है। हल्की हल्की हवा चलने लगती है और उसमें अभी–अभी खिले फूलों की खुशबू भरी होती है। उषा से प्रश्न करते हुए कवयित्री कहती हैं कि क्या तुम अपने बालों को रात में आकाशगंगा की चांदी जैसी सफेद धारा में धो कर आ रही हो। शायद इसीलिए तुम्हारे भीगे हुए अंगों में ठंड की वजह से कंपन है और ऐ सद्यःस्नाता इसीलिए शायद तुम्हारे तन में एक किस्म की सिहरन है। तुम्हारे बालों के भीगे हुए किनारों से आकाशगंगा का जल विविध प्रकार का नृत्य करते हुए चू रहा है। उषाकाल में रात की ओस समस्त पृथ्वी को भिगोए रहती है। उस समय हल्की हल्की ठंड भी रहती है। इस प्राकृतिक स्थिति का सूक्ष्म और मनोरम चित्रण महादेवी जी ने उपर्युक्त पंक्तियों में किया है।

सौरभ भीना झीना गीला
लिपटा मृदु अंजन सा दुकूल,
चल अञ्चल से झर झर झरते
पथ में जुगनू के स्वर्ण–फूल,
दीपक से देता बार बार
तेरा उज्ज्वल चितवन–विलास!
रुपसि तेरा घन–केश पाश!

शब्दार्थ : सौरभ– सुगंध, दुकूल– रेशमी कपड़ा, अंजन– काजल, झीना– बारीक, मृदु– कोमल, स्वर्ण– सोना, चितवन– प्रेमपूर्वक देखने का ढंग।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियों में उषा रूपी स्त्री के मुख के आकर्षक सौंदर्य का चित्रण किया गया है।

व्याख्या : इन पंक्तियों में महादेवी जी कहती हैं कि सुंदर स्त्री की तरह दिखने वाली उषा का रेशमी कपड़ों से बना हुआ आंचल उसके शरीर पर कोमल काजल की तरह लिपटा हुआ है। वह आंचल भीनी–भीनी सुगंध से भरा हुआ है। वह झीना–झीना है जिसमें से कुछ दिखता है और कुछ नहीं दिखता है और वह हल्का गीला है। सुबह के समय रहने वाले हल्के अंधेरे की कल्पना कवयित्री ने उषा के आंचल के रूप में की है जिसमें से कुछ दिखाई पड़ता है और कुछ नहीं दिखाई देता है। जब उषा रूपी स्त्री रास्ते में चलती है तो उसके हिलते हुए आंचल से रात के जुगनू रूपी फूल झरते रहते हैं। उषाकाल में रात में उड़ने वाले जुगनू जमीन पर गिरने लगते हैं। तुम्हारे उज्ज्वल मुख के आकर्षित करने वाले अनेकानेक मनोभाव ऐसे दीपक की तरह प्रतीत हो रहे हैं जो सांसारिक मनुष्य रूपी परवानों को बार–बार अपनी ओर आकर्षित कर रहे हैं।

उच्छ्वसित वक्ष पर चंचल है
बक–पांतों का अरविन्द–हार,

टिप्पणी

तेरी निश्वासें छू भू को
बन बन जाती मलयज बयार,
केकी–रव की नूपुर–ध्वनि सुन
जगती जगती की मूक प्यास!
रूपसि तेरा घन–केश पाश!

शब्दार्थ : उच्छवसित– गहरी सांस लेना और छोड़ना, वक्ष– हृदय, बक– बगुला, अरविन्द– कमल, भ्रू– भौंह, मलयज– चंदन, केकी रव– मोर के बोलने की ध्वनि, जगती– जीवन, जगत।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियों में प्रातःकाल में प्रकृति के बीच होने वाली हलचलों का मनोरम वर्णन किया गया है।

व्याख्या : महादेवी वर्मा कह रही हैं कि उषा रूपी नारी अपने सौंदर्य की ऊर्जा से आनंदित है और जब वह उत्साह में भरकर चलती है तो उसके गले की कमल की माला चंचल हो उठती है। उषाकाल में आसमान में उड़ रही सफेद बगुले की पंक्ति को देखकर कवयित्री को महसूस होता है कि यह उषा रूपी नारी के गले में झूलने वाले कमल की माला है। उसको संबोधित करते हुए आगे कहती हैं कि ऐ उषा तुम्हारी सांसें जब इस पृथ्वी को छूती हैं तो चारों तरफ चंदन की खुशबू वाली हवा चल पड़ती है। तुम्हारे आगमन के अहसास से उठने वाली मोर की आवाज को सुनकर इस संसार के लोगों के भीतर छुपी हुई जीने की प्यास एक बार फिर से जग जाती है। रात के घने अंधेरे में निराशा का जो एक बादल संसार की चेतना पर छा जाता है उषा के आगमन से उसमें फिर से एक चैतन्यता आ जाती है।

इन स्निग्ध लटों से छा दे तन,
पुलकित अंगों से भर विशाल,
झुक सस्मित शीतल चुम्बन से
अंकित कर इसका मृदुल भाल,
दुलरा देना बहला देना,
यह तेरा शिशु जग है उदास!
रूपसि तेरा घन–केश पाश!

शब्दार्थ : स्निग्ध– कोमल, मुलायम, लट– बाल, तन– शरीर, पुलकित– रोमांचित, सस्मित– मुस्कराना, मृदुल– कोमल, भाल– ललाट, दुलारा– वात्सल्य भरा प्यार।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियों में महादेवी वर्मा उषा से उदास जग रूपी शिशु को अपने चुंबन से प्यार कर उसे आनंदित करने का आग्रह करती हैं। इन पंक्तियों में मनुष्य और उषा के बीच बेटे और मां के रिश्ते को जोड़ा गया है।

टिप्पणी

व्याख्या : महादेवी वर्मा उषा से कहती हैं कि तुम मां की तरह हो। यह संसार तुम्हारे बेटे की तरह है। जीवन की विपदा रूपी अंधेरी रात में यह बहुत रोया है और बहुत उदास है, अतः मैं तुमसे आग्रह करती हूं कि तुम अपने मुलायम बालों को उसके शरीर पर बिखेर कर अपने रोमांचित अंगों में इस विशाल संसार को भर लो। फिर थोड़ा झुककर मुस्कुराते हुए एक ठंडा चुंबन इस संसार रूपी शिशु के माथे पर अंकित कर दो। थोड़ी देर के लिए ही सही इसको प्यार कर जरा बहला दो ताकि कुछ समय के लिए ही सही यह अपनी पीड़ा भूल जाए। उषाकाल का समय ऐसा होता है जब मनुष्य तमाम दुखों को भूलकर प्रकृति की गोद में आनंद का अनुभव करता है। कवयित्री इसी मनोभाव का चित्रण इन पंक्तियों में किया है।

2.5.2 विरह वेदना

आधुनिक युग की मीरा के नाम से विख्यात महादेवी वर्मा का जीवन करुणा और वेदना से भरा रहा है। छायावाद की काव्य–धारा प्रवाहित करते रहने में, न सिर्फ प्रवाहित करने में बल्कि श्रेष्ठ काव्यात्मकता और गहरी संवेदना के साथ आगे बढ़ाने में महादेवी वर्मा का अहम् योगदान रहा है। अज्ञात लालसा, उससे विरह और उससे न मिल पाने की पीड़ा उनकी कविता में अनेक रूपों में विद्यमान है। सम्भव है कि उस पीड़ा के कारण–तत्वों में तत्कालीन परिस्थितियों और स्वयं की जीवन–स्थितियों का भी हाथ रहा हो।

महादेवी वर्मा के काव्य में मौजूद विरह–वेदना के कारण ही उन्हें 'आधुनिक युग की मीरा' कहा जाता है। महादेवी वर्मा के काव्य पर बौद्ध–दर्शन का प्रभाव भी देखा जा सकता है। जो आदि से अन्त तक उनकी काव्य–चेतना को संचालित करता रहा है। महादेवी वर्मा की विरह–वेदना केवल वाणी का आयोजन नहीं है, वह उनके हृदय का स्थायी–भाव है। उनका विरह एक ओर प्रेम का उज्ज्वल स्वरूप है तो वहीं दूसरी ओर वह प्रेम की कसौटी भी है। महादेवी वर्मा के काव्य में चित्रित विरह–वेदना हिन्दी साहित्य की उस महान परम्परा का विकास है, जिसमें विद्यापति, कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, मीरा, मतिराम, बिहारी, घनानंद और भारतेंदु जैसे रचनाकार हैं।

महादेवी वर्मा की विरह–वेदना को निम्नलिखित शीर्षकों के माध्यम से समझ सकते हैं–

प्रेम के विरह की अधिकता– महादेवी वर्मा के काव्य में प्रेम तत्व की गहनता सर्वत्र दिखाई पड़ती है। किन्तु उनका प्रेम बांधता नहीं मुक्त करता है। महादेवी वर्मा ने जिस प्रेम को अपने जीवन की निधि की तरह संवारा और अभिव्यक्त किया है, उससे बिछुड़ने के बाद वह पीड़ा देता। महादेवी उसी पीड़ा के मध्य से जीने की राह निकालती हैं। उन्हें उस वेदना के अतिरिक्त और कुछ पाने की लालसा नहीं बल्कि उसे ही अपने जीवन का क्रम बनाना चाहती हैं–

पर शेष नहीं होगी यह मेरे प्राणों की क्रीड़ा,
तुमको पीड़ा में ढूंढा तुममें पीड़ा ढूंढूंगी।

निरंतर विरहानुभूति– महादेवी की विरह–वेदना क्षणिक नहीं है। वह उनके जीवन–काव्य का निरंतर सत्य है। उनके काव्य में चित्रित विरह कोई ठहरी हुई चीज न होकर उनके मन

टिप्पणी

की विकसित और शाश्वत स्थिति है। महादेवी वर्मा के काव्य की विरहानुभूति में नदी के प्रवाह की तरह निरंतरता तथा समुद्र की गहराई जैसा उद्वेलन है। उनका विरह बनावटी नहीं बल्कि स्वाभाविक है। जितना स्वाभाविक महादेवी वर्मा की विरहानुभूति है उतना ही स्वाभाविक उसका चित्रण है। महादेवी वर्मा की विरहानुभूति इतनी निर्दोष और पवित्र है कि वे उसको अपने जीवन का स्थायी छंद बना देती हैं। वह स्वयं दीपक की तरह तिल–तिल जलकर भी अपने प्रियतम का पथ प्रकाशवान बनाए रखने की इच्छा रखती हैं–

मधुर–मधुर मेरे दीपक जल
युग–युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिपल,
प्रियतम का पथ आलोकित कर।

या

मिलन का नाम मत लो,
मैं विरह मैं चिर हूं।

अस्तित्व के विसर्जन का भाव– महादेवी वर्मा के लिए जीवन का सबसे बड़ा सुख और चाह विरह की अनिवार्यता है। वह विरह जो उन्हें पीड़ित करता है। महादेवी वर्मा के लिए वह विरह प्रिय है, क्योंकि वह उनके प्रिय का विरह है। इसीलिए महादेवी वर्मा उस विरह से स्वयं को मुक्त नहीं करना चाहती। वे उस विरह के लिए अपने अस्तित्व को भी विसर्जित कर देने के लिए तत्पर हैं। उनके लिए यह भौतिक जगत ही महत्वपूर्ण है, जहां उन्हें उनके प्रिय के विरह से साक्षात्कार हो सका। उन्हें अमरत्व की चाह नहीं है, और न ही वे किसी ऐसे अमर लोक की कल्पना करतीं जहां प्रिय पर मर मिटने का सुख न हो, वेदना न हो, अवसाद न हो बल्कि वे अपने अस्तित्व को विसर्जित करने का अधिकार भी अपने पास रखना चाहती हैं–

क्या अमरों का लोक मिलेगा
तेरी करुणा का उपहार
रहने दो हे देव मुझे! अरे
यह मिटने का अधिकार।

मिलन की अभिलाषा– महादेवी वर्मा के काव्य में विरह की निरतंर प्रवाहित होती स्थितियां हैं। विरह पीड़ा का कारण है। फिर भी महादेवी वर्मा को वह विरह जनित पीड़ा प्रिय है क्योंकि उसी में प्रिय से मिलने की उत्कट अभिलाषा है। प्रिय से मिलने की अपनी स्वाभाविक इच्छा को वे कभी सपनों में तो कभी कल्पना में पूरी करना चाहती हैं। जैसे समुद्र की स्वाभाविक इच्छा चांद को छूने की होती है, और वह अपनी लहरों के माध्यम से हमेशा उसकी कोशिश करता रहता है। पर इसमें वह कभी सफल नहीं हुआ। उसी तरह महादेवी वर्मा के भीतर अपने प्रिय से मिलने की गहरी अभिलाषा, किन्तु वह कभी सम्भव नहीं हो पाता। महादेवी वर्मा के लिए यथार्थ और स्वप्न दोनों प्रिय–मिलन की अधूरी पंक्तियों की तरह हैं–

तुम्हें बांध पाती सपने में
तो चिरजीवन प्यास बुझा लेती उस छोटे से क्षण में।

टिप्पणी

करुणा की प्रधानता– महादेवी वर्मा की विरह–वेदना में करुणा की प्रधानता है। पहले ही कहा गया था उनके ऊपर बुद्ध की करुणा का विशिष्ट प्रभाव है। महादेवी वर्मा की करुणा उन्हें जीवन–जगत से अलगाती नहीं बल्कि उन्हें इनसे और मजबूती से जोड़ती है। विरह के आवेग में हृदय के भीतर से करुणा का भाव प्रकट होता है। वह करुणा–भाव अत्यन्त पवित्र है, मार्मिक है। जैसे आग में तपकर सोना शुद्ध होता है, उसी प्रकार विरह की ज्वाला में जल कर महादेवी वर्मा की करुणा मनुष्यता के लिए वरदान बन जाती है–

शून्य मंदिर में बनूंगी आज मैं प्रतिमा तुम्हारी,
आज करुणा स्नात उजला दुख ही मेरा पुजारी।

अगाध समर्पण– महादेवी वर्मा की कविताओं में अपने प्रियतम के प्रति अगाध समर्पण का भाव विद्यमान है। अगाध समर्पण का भाव प्रेम की उच्चतर स्थिति है तो वहीं प्रेम की अनिवार्य शर्त भी है। अगाध समर्पण के लिए आत्म–विसर्जन आवश्यक है। आत्म–विसर्जन के अभाव में प्रिय से साक्षात्कार सम्भव नहीं है। इसीलिए महादेवी वर्मा अपनी कविताओं में प्रिय से साक्षात्कार के लिए अगाध समर्पण के लिए स्वयं को प्रस्तुत करती हैं। आत्म समर्पण का यह भाव उन्हें कबीर, सूर, तुलसी और मीरा से जोड़ता है। किन्तु युग–काल के दबाव में हुए महादेवी वर्मा का आत्म समर्पण का भाव रहस्य के झीने पर्दे में हमारे सामने आता है–

बीन भी हूं मैं तुम्हारी रागिनी भी हूं।
नयन में जिसके जलद वह तृषित चटक हूं।

सारांशतः कहा जा सकता है कि महादेवी वर्मा की कविता में विरह और वेदना स्थायी–भाव की तरह है। महादेवी का विरह–तत्व उनके मनोजगत का आत्यांतिक भाव है, जो उनकी कविता में आरम्भ से अन्त तक विद्यमान रहता है। यहां यह ध्यान रखना होगा कि महादेवी वर्मा की कविता में चित्रित विरह–तत्व जीवन और कर्म विरोधी न होकर जीवन की प्रेरणा बन जाता है, इसीलिए वह वरेण्य है।

2.5.3 महादेवी वर्मा की कविता में छायावादी तत्त्व

छायावादी कविता का जन्म द्विवेदी युग में प्रतिपादित काव्य–मान्यताओं की प्रतिक्रिया में हुआ था। वैसे द्विवेदी युग के अंतिम हिस्से में बदलते समय और युग–चेतना के कारण काव्य के स्वरूप में बदलाव होने लगा था। यह द्विवेदी युग की काव्य सम्बन्धी नैतिकता का ही दबाव ही था कि निराला की प्रसिद्ध कविता 'जूही की कली' को अश्लील, अशालीन और काव्य–परम्परा के प्रतिकूल मानते हुए 'सरस्वती' प्रत्रिका में प्रकाशित करने से मना कर दिया गया। किन्तु बाद में जब यह कविता प्रकाशित हुई तब वह न सिर्फ लोकप्रिय हुई, बल्कि उसे छायावादी कविता के उद्घोष की तरह देखा–समझा गया। समय के साथ साहित्य में 'जूही की कली' की स्वीकारोक्ति और महत्ता बढ़ती गयी। यह कविता सम्बन्धी बदलती हुई मान्यताओं के कारण सम्भव हो सका।

'छायावाद' हिन्दी का पहला व्यवस्थित काव्य आंदोलन है। 'छायावाद' शब्द का सबसे पहला प्रयोग मुकुटधर पांडेय ने किया। आरम्भ में 'छायावाद' के वस्तु और शिल्प को लेकर बहुत आलोचना हुई। किन्तु कालान्तर में इसे आधुनिक हिन्दी कविता की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि माना गया। इस तरह देखा जा सकता है कि 'छायावाद' एक ऐसी काव्य–धारा

टिप्पणी

है जो कटु आलोचना से प्रतिष्ठित हुई है। छायावाद की समय–सीमा 1918 ई. से 1936 ई. तक मानी जाती है। इसमें दो–एक साल आगे–पीछे हो सकता है।

छायावादी कविता की एक खास विशेषता यह है कि इसे प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी वर्मा जैसे रचनाकार मिले तो रामचन्द्र शुक्ल और नन्ददुलारे वाजपेयी जैसे आलोचक भी मिले। इसलिए छायावादी कविता को उसके आरम्भिक दिनों में ही आलोचना की श्रेष्ठ कसौटियों पर जांचा–परखा गया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने छायावाद के सन्दर्भ में कहा कि "छायावाद शब्द का प्रयोग दो अर्थों में समझना चाहिए एक तो रहस्यवाद के अर्थ में, जहां कवि उस अनंत और अज्ञात प्रियतम को आलम्बन बनाकर अत्यन्त चित्रमयी भाषा में प्रेम की अनेक प्रकार से व्यंजना करता है। छायावाद शब्द का दूसरा प्रयोग काव्य–शैली या पद्धति विशेष के अर्थ में किया जाता है।" प्रमुख छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद ने छायावाद को परिभाषित करते हुए कहा है कि "जब वेदना के आधार पर स्वानुभूतिमयी अभिव्यक्ति होने लगी तब हिन्दी में उसे छायावाद के नाम से अभिहित किया जाता है।" तो वहीं महादेवी वर्मा ने कहा कि "छायावाद तत्वतः प्रकृति के बीच जीवन का उद्‌गीत है।" इस तरह देखें तो 'छायावाद' की प्रकृति और संवेदना को समझने का प्रयास आलोचक के साथ स्वयं छायावादी कवि भी कर रहे थे।

प्रमुख छायावादी कवियों में प्रसाद, पन्त, निराला, महादेवी वर्मा हैं। सभी विशिष्ट हैं किन्तु इनमें महादेवी वर्मा का स्थान अन्यतम है। महादेवी वर्मा का काव्य छायावादी कविता की कल्पनाशीलता, सूक्ष्मता और वैयक्तिकता के साथ ही अन्य छायावादी तत्वों का दर्पण है। महादेवी वर्मा की कविता में छायावादी तत्त्वों को निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर समझा जा सकता है–

प्रकृति का सौन्दर्य निरूपण : छायावादी कवियों का प्रकृति से बहुत लगाव रहा है। स्वयं महादेवी वर्मा की अनेक कविताओं, निबन्धों में इसकी छाया देखने को मिल जाती है। तभी तो गिल्लू, तोता, मैना आदि अनेक पशु–पक्षी, जीव जन्तुओं पर उन्होंने श्रेष्ठ लिखा है। प्रकृति–जगत उनकी कविता का विषय ही नहीं उनके परिवार का जरूरी हिस्सा भी है। महादेवी वर्मा ने अन्य छायावादी कवियों की ही तरह प्रकृति को जीवंत सत्ता के रूप में प्रस्तुत किया है और उसके विराट सौन्दर्य पर मुग्ध हैं।

मैं बनी मधुमास आली!
आज मधुर विषाद की घिर करुण आई यामिनी,
बरस सुधि के इन्दु से छिटकी पुलक की चांदनी
उमड़ आई री, दृगों में
सजनि, कालिन्दी निराली!

शृंगार चित्रण : छायावादी कविता में शृंगार को उसके श्रेष्ठतम रूप में चित्रित किया है। छायावाद के प्रारम्भिक दिनों में द्विवेदीयुगीन काव्य–नैतिकता के कारण छायावादी कवियों की शृंगारिक चित्रण को लेकर सर्वाधिक विवाद था। किन्तु महादेवी वर्मा की कविता में जहां सौन्दर्य का चित्रण है, वहां भी एक विशिष्ट किस्म की मर्यादा एवं अनोखी शांति झलकती है। उनकी कविता में शृंगार की प्रतिष्ठा और चित्रण सौम्यता के साथ हुआ है–

टिप्पणी

मिलन–मन्दिर में उठा दूं जो सुमुख से सजल गुण्ठन,
मैं मिटूं प्रिय में, मिटा ज्यों तप्त सिकता में सलिल कण,
सजनि! मधुर निजत्व दे
कैसे मिलूं अभिमानिनी मैं!

राष्ट्रीय नवजागरण : छायावादी कविता में देशप्रेम की अलख और अंतर्धारा निरन्तर विद्यमान रही है। छायावादी कवियों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से अपने देश के प्रति अपने भावों को व्यक्त किया है किन्तु छायावादी कवियों की राष्ट्रीयता राजनैतिक न होकर सांस्कृतिक है। महादेवी वर्मा की कविताओं में भी देशप्रेम का प्रखर भाव देखने को मिलता है। जिसमें उन्होंने समकालीन समय के संकट को समझने और उसे देश की जनता को समझाने का प्रयास किया। उन्हें अपने समय और उसमें चलने वाली समस्त गतिविधियों, आन्दोलनों का बोध था। महादेवी वर्मा भी अपनी कविताओं के माध्यम से अपने समय में चलने वाले स्वाधीनता आंदोलन में भाग लेती हैं। उनकी कई कविताएं राष्ट्रीय–भावना को जन–जन तक प्रेषित करने वाले जागरण–गीत की तरह कार्य करती हैं–

चिर सजग आंखें उनींदी,
आज कैसा व्यस्त बाना,
जग तुझको दूर जाना।

सामाजिक जागरण : छायावादी कविता मनुष्यता के जागरण का काव्य है। मनुष्यता के सम्पूर्ण जागरण के लिए आवश्यक है कि मनुष्य जिस समाज में रहता है, उस समाज को जागृत और जीवंत बनाया जाय। छायावाद की इस चेतना को महादेवी वर्मा ने अपनी कविता में स्वर देते हुए सामाजिक पुनरुत्थान में अपनी भूमिका का निर्वाह करती हैं। महादेवी वर्मा ने समाज में व्याप्त कुरीतियों, विषमताओं को दूर करने के लिए अपनी कविताओं के माध्यम से जन–जागृति अभियान चलाया। जिसमें उन्होंने सांकेतिक रूप से बिम्बों का उपयोग करते हुए भी अपनी बात को समाज तक पहुंचाया।

वे मुस्काते फूल, नहीं
जिनको आता है मुरझाना,
वे तारों के दीप, नहीं
जिनको भाता है बुझ जाना!

आत्माभिव्यक्ति : आत्माभिव्यक्ति छायावादी कवियों का विशिष्ट स्वभाव है। सभी छायावादी कवियों ने अपनी कविता में किसी न किसी रूप में आत्माभिव्यक्ति की है। स्वयं महादेवी वर्मा ने काव्य के माध्यम से अपने व्यक्तिगत जीवन को खोजने और अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है। उनकी कविता में स्वयं उनका ही जीवन अपनी तमाम विडंबनाओं, उपेक्षाओं, कमियों और उपलब्धियों के साथ दर्ज हुआ है। अन्य छायावादी कवियों की आत्माभिव्यक्ति से भिन्न महादेवी वर्मा की आत्माभिव्यक्ति में वेदना, पीड़ा और आत्मनिवेदन के स्वर ज्यादा मुखर हैं–

मैं नीर भरी दुख की बदली!
विस्तृत नभ का कोई कोना,

मेरा न कभी अपना होना,

परिचय इतना इतिहास यही

उमड़ी कल थी मिट आज चली!

रहस्यात्मकता : छायावादी कविता में रहस्यवाद अज्ञात सत्ता के प्रति जिज्ञासा का भावबोध है। रहस्य और छायावाद के घनिष्ठ सम्बन्ध के कारण ही आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने छायावाद को रहस्यवाद के अर्थ में भी प्रयुक्त किया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल साहित्य में रहस्य को गैरजरूरी मानते थे, इसीलिए वे छायावाद के मूल्यांकन को लेकर थोड़े कठोर थे। दरअसल छायावादी कविता में मनुष्य एवं प्रकृति के सूक्ष्म सौन्दर्य में अध्यात्म की तलाश की गयी, जो वेदना से युक्त था। महादेवी वर्मा की कविताएं इस बात की प्रमाण हैं। उन्होंने अज्ञात प्रिय के विरह और मिलन की स्थिति को रहस्य के आवरण में प्रस्तुत किया है–

सजनि कौन तम में परिचित सा, सुधि सा, छाया सा, आता?

सूने में सस्मित चितवन से जीवन–दीप जला जाता!

* * * * * *

घन तम में सपने सा आ कर,

अलि कुछ करुण स्वरों में गा कर,

किसी अपरिचित देश बुला कर... ।"

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि महादेवी वर्मा प्रमुख छायावादी रचनाकार रही हैं। उनकी कविता में लगभग सभी छायावादी तत्वों का चित्रण हुआ है। बल्कि कहा जा सकता है कि महादेवी वर्मा की कविता के तत्वों से ही छायावादी काव्य के तत्वों का निर्धारण किया जा सकता है।

अपनी प्रगति जांचिए

10. आधुनिक युग की मीरा किसे कहा जाता है?
11. छायावाद की समय–सीमा कब से कब तक मानी जाती है?
12. सही–गलत बताइए–
    (क) महादेवी वर्मा का जीवन करुणा और वेदना से भरा रहा है।
    (ख) महादेवी वर्मा का निधन 11 सितंबर 1989 को हुआ था।

2.6 सारांश

हिन्दी का छायावादी काव्य प्रथम एवं द्वितीय विश्वयुद्ध के बीच एवं भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के समय में लिखा जा रहा था। इसलिए छायावादी कविता में देश और दुनिया की हलचलें उपस्थित हैं। किन्तु छायावादी कविता की संवेदना सांस्कृतिक है, राजनीतिक नहीं। इसीलिए छायावादी कविता के सरोकार अपनी पूर्ववर्ती साहित्यिक धाराओं की तरह सतह पर नहीं दिखते। छायावादी कविता की व्यंजना स्थूल नहीं सूक्ष्म है। मुख्य रूप से देखें तो छायावाद का समय शक्ति के संधान का समय है। शक्ति की मौलिक कल्पना का समय है। शक्ति का संधान प्रत्येक क्षेत्र में अपने–अपने ढंग से हो रहा था। सामाजिक–राजनीतिक क्षेत्र में जो कार्य गोखले–गाँधी अपने ढंग से कर रहे थे, वही कार्य छायावादी कवि अपनी तरह से कर रहे थे।

छायावादी कविता में राष्ट्रीयता, देश की स्वाधीनता का भाव, गाँधीवादी विचारों के प्रति लगाव, अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीतियों के प्रति आक्रोश का भाव उपलब्ध है। वर्षों की दासता से मुक्ति की आकांक्षा में पूरा देश खड़ा हो गया था। आधुनिक शिक्षा और चेतना ने भारतीय बुद्धिजीवियों के सामने सोच–समझ के नये दरवाजे खोल दिये थे। भारतीय जनमानस में आये इन परिवर्तनों को छायावादी कवियों ने प्रमुख काव्य–स्वर बनाया।

जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रमुख कवि हैं। उनकी कविता में समूची भारतीय परम्परा और संस्कृति के उज्ज्वल पक्ष अपने पूरे वैभव के साथ आये हैं। प्रसाद मुख्यतः सांस्कृतिक चेतना के रचनाकार हैं। वे अपनी कविताओं के माध्यम से आधुनिक मनुष्य की विडम्बना, भटकाव और विचलन की पहचान करते हैं तथा एक प्रखर चेतना से युक्त मानव एवं समरस समाज के निर्माण में अपना योगदान देते हैं। प्रसाद का रचना संसार उनके जीवन–दर्शन की साहित्यिक अभिव्यक्ति है।

प्रसाद के काव्य में स्त्री का स्वायत्त और गरिमापूर्ण चित्रण हुआ है। प्रसाद के काव्य में चित्रित स्त्री शक्ति, शील और सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति है। वह बाह्य रूप में आकर्षक है तो आन्तरिक रूप से वह प्रेम, दया, करुणा, ममता, क्षमा और माधुर्य की स्रोत भी है। प्रसाद स्त्री के उस रूप का चित्रण करते हैं जहां वह पुरुष के अधिकार से अलग अपनी स्वायत्त छवि के साथ खड़ी होती है, और पुरुष को श्रेष्ठ और सुन्दर का मार्ग दिखाती है।

हिन्दी साहित्य में छायावादी काव्य एक नयी दिशा, पहचान और स्वर के लिए जाना जाता है। यह ऐसे समय की कविता है जब प्रथम विश्वयुद्ध की घटना हो चुकी थी तथा भारत में स्वतंत्रता आन्दोलन निरंतर जोर पकड़ रहा था। अतः छायावादी कवि भी अपने युग से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। इस काल के प्रमुख लेखकों प्रसाद, पन्त, निराला तथा महादेवी वर्मा ने आम आदमी के साथ अपनी काव्य यात्रा को शुरू किया।

सुमित्रानन्दन पन्त छायावाद के एक ऐसे कवि हैं जिन्हें प्रकृति चित्रण में सर्वाधिक सफलता मिली है। पन्त का प्रारम्भिक जीवन अल्मोड़ा (उत्तराखंड) के कौसानी के सुरम्य वातावरण में बीता। जिसका प्रभाव उनके जीवन और काव्य सभी पर पड़ा। पन्त की कविता में प्रकृति मनमोहक है एवं उसकी नैसर्गिक सुन्दरता को विशेष रूप से चित्रित किया गया है। पन्त के लिए प्रकृति माधुर्य, सुकुमारता, प्रणय, प्रेरणा और समर्पण आदि का पर्याय है।

भाषा के माध्यम से ही कवि अपने मनोभावों को अभिव्यक्त करता है। काव्य के कथ्य की सम्प्रेषणीयता का आधार भाषा है। इस दृष्टि से देखें तो सुमित्रानन्दन पन्त की कविता में भाषा के प्रयोग को लेकर अत्यंत सजगता लक्षित की जाती है। पन्त की कविता और उसकी कलात्मक सफलता में उनके द्वारा प्रयुक्त काव्य भाषा का सर्वाधिक योगदान है। पन्त ने अपनी अभिव्यंजना प्रधान और स्वाभाविक भाषा के द्वारा द्विवेदीयुगीन व्याकरण के शुष्क बंधनों में जकड़ी खड़ी बोली को समृद्ध किया। वे अपने प्रसिद्ध काव्य–संग्रह 'पल्लव' की भूमिका में कहते हैं कि "खड़ी बोली जागरण की चेतना थी। द्विवेदी युग जिस जागरण का प्रारम्भ था, हमारा युग उसके विकास का समारम्भ था।

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' छायावाद ही नहीं समूची हिन्दी कविता में अपना एक खास स्थान और महत्व रखने वाले कवि हैं। छायावादी कवियों में जितनी अधिक चर्चा निराला की हुई है, उतनी शायद ही किसी अन्य कवि की हुई हो। निराला का लेखन–काल छायावाद से लेकर नई कविता के बाद तक विस्तृत है। उनकी कविता में विकास की निरन्तरता को आसानी से लक्षित किया जा सकता है। वे किसी धारा या वाद के बंधन में बंधने वाले कवि नहीं थे, फिर भी उनकी कविता में छायावादी काव्य तत्वों की पूर्ण प्रतिष्ठा हुई है।

निराला की प्रगति और विद्रोह की चेतना पारिवारिक स्तर भी देखने को मिलती है। यह सर्वविदित है कि निराला की आर्थिक स्थिति अत्यंत खराब हो गयी थी। अभाव और

दुख की स्थिति में निराला ने अपनी पुत्री सरोज का विवाह किया। पुत्री का विवाह उन्होंने परिवार, कुल–खानदान की परम्परा को तोड़ते हुए लीक से हट कर किया।

टिप्पणी

महादेवी का स्थान छायावादी काव्य में विशिष्ट है। जीवन के तमाम झंझावातों के बीच उनका सृजन विकसित होता रहा। पति श्री रूपनारायण वर्मा के असमय निधन होने के बाद उनके जीवन में एक खास तरह का वैराग्य उत्पन्न हुआ। किन्तु यह वैराग्य उन्हें दुनिया से विलग नहीं करता बल्कि समभाव के साथ जीवन–जगत से जोड़ता है। उनका उदार, मानवतावादी और मिलनसार व्यक्तित्व बनकर रचनाओं में व्यक्त हुआ। वे अब जीवन को कर्ताभाव से नहीं साक्षी भाव के साथ जीने में विश्वास करने लगी थीं। उनके भीतर पीड़ित मानवता के प्रति, स्त्री जीवन के दुखों के प्रति, गरीब, शोषित लोगों के प्रति उनके भीतर अपार करुणा प्रवाहित होती रहती।

महादेवी वर्मा के काव्य में मौजूद विरह–वेदना के कारण ही उन्हें 'आधुनिक युग की मीरा' कहा जाता है। महादेवी वर्मा के काव्य पर बौद्ध–दर्शन का प्रभाव भी देखा जा सकता है। जो आदि से अन्त तक उनकी काव्य–चेतना को संचालित करता रहा है। महादेवी वर्मा की विरह–वेदना केवल वाणी का आयोजन नहीं है, वह उनके हृदय का स्थायी–भाव है। उनका विरह एक ओर प्रेम का उज्ज्वल स्वरूप है तो वहीं दूसरी ओर वह प्रेम की कसौटी भी है। महादेवी वर्मा के काव्य में चित्रित विरह–वेदना हिन्दी साहित्य की उस महान परम्परा का विकास है, जिसमें विद्यापति, कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, मीरा, मतिराम, बिहारी, घनानंद और भारतेंदु जैसे रचनाकार हैं।

महादेवी वर्मा की कविता में विरह और वेदना स्थायी–भाव की तरह है। महादेवी का विरह–तत्व उनके मनोजगत का आत्यांतिक भाव है, जो उनकी कविता में आरम्भ से अन्त तक विद्यमान रहता है। यहां यह ध्यान रखना होगा कि महादेवी वर्मा की कविता में चित्रित विरह–तत्व जीवन और कर्म विरोधी न होकर जीवन की प्रेरणा बन जाता है, इसीलिए वह वरेण्य है।

2.7 मुख्य शब्दावली

- **यथार्थ** : सच्चाई।
- **अभिलाषा** : इच्छा।
- **अस्तित्व** : वजूद, सत्ता।
- **विसर्जित** : बहाना, प्रवाहित।
- **विरह** : बिछुड़ना, दुख।
- **शुष्क** : सूखा।
- **विद्यमान** : उपस्थित।
- **अनुराग** : प्रेम।
- **स्निग्ध** : मुलायम।
- **आग्रह** : निवेदन।
- **मृदुल** : कोमल।

टिप्पणी

- **आगमन** : आना।
- **गात** : शरीर।
- **वसन** : वस्त्र।
- **विषमता** : बुराई।
- **वात्सल्य** : ममता।

2.8 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर

1. 30 जनवरी, 1889 को वाराणसी (उ.प्र.) में
2. सन् 1931 को
3. (क) सही, (ख) गलत
4. गोसाईं दत्त
5. सन् 1960 में 'कला और बूढ़ा चांद' काव्य संग्रह के लिए
6. (क) गलत, (ख) सही
7. छायावादी युग के
8. मनोहरा देवी
9. (क) सही, (ख) गलत
10. महादेवी वर्मा को
11. 1918 ई. से 1936 ई. तक
12. (क) सही, (ख) गलत

2.9 अभ्यास हेतु प्रश्न

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. छायावाद के प्रमुख कवियों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
2. जयशंकर प्रसाद की काव्यगत विशेषताएं बताइए।
3. सुमित्रानंदन पंत की प्रमुख रचनाओं का वर्णन कीजिए।
4. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ओर छायावाद पर टिप्पणी कीजिए।
5. महादेवी वर्मा को आधुनिक युग की मीरा क्यों कहा जाता है?

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. प्रमुख छायावादी कवियों की प्रतिनिधि कविताओं का विश्लेषण कीजिए।
2. छायावादी कविता के कथ्य, सौंदर्य और काव्यगत विशेषताओं की समीक्षा कीजिए।
3. जयशंकर प्रसाद का जीवन परिचय देते हुए प्रसाद काव्य में जागरण के स्वर कोन से हैं, उनका उल्लेख कीजिए।

टिप्पणी

4. सुमित्रानंदन पन्त के काव्य में प्रकृति की भूमिका को स्पष्ट करते हुए उनकी प्रमुख रचनाओं का वर्णन कीजिए।
5. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' और महादेवी वर्मा के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए।

2.10 आप ये भी पढ़ सकते हैं

- जयशंकर प्रसाद, *कामायनी* (महाकाव्य), साहित्यसागर, जयपुर संस्करण : 2001
- प्रेमशंकर, *प्रसाद का काव्य*, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1994
- प्रभाकर श्रोत्रिय, *जयशंकर प्रसाद की प्रासंगिकता*, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2004
- नामवर सिंह, *छायावाद*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007
- रामविलास शर्मा, *निराला की साहित्य साधना*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1990
- नन्द दुलारे वाजपेयी, *कवि निराला*, मैकमिलन, नई दिल्ली, 1979
- डॉ. रमेशचन्द्र साह – संपादक, *निराला संचयिता*, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–02, प्रथम संस्करण : 2001
- विजय बहादुर सिंह, *महादेवी की कविता का नेपथ्य*, किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009
- डॉ. केदारनाथ सिंह, *कल्पना और छायावाद*, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
- डॉ. नगेन्द्र, *सुमित्रानन्दन पंत*, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

इकाई 3 आधुनिक कवि

टिप्पणी

इकाई की रूपरेखा

3.0 परिचय
3.1 इकाई के उद्देश्य
3.2 नागार्जुन : सामान्य परिचय
 3.2.1 नागार्जुन : पाठ्यांश – उनको प्रणाम, अकाल और उसके बाद
 3.2.2 जनकवि नागार्जुन की जनपक्षधरता
 3.2.3 काव्यगत चेतना
3.3 अज्ञेय : सामान्य परिचय
 3.3.1 अज्ञेय : पाठ्यांश – सांप, बावरा अहेरी, जनवरी छब्बीस
 3.3.2 प्रयोगवाद और अज्ञेय
3.4 मुक्तिबोध : सामान्य परिचय
 3.4.1 मुक्तिबोध : पाठ्यांश – मुझे कदम–कदम पर
 2.4.2 मुक्तिबोध की काव्यगत विशेषताएं
3.5 सर्वेश्वरदयाल सक्सेना : सामान्य परिचय
 3.5.1 सर्वेश्वरदयाल सक्सेना : पाठ्यांश – सुहागिन का गीत, सौन्दर्य बोध
 3.5.2 सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की काव्यगत विशेषताएं
3.6 सारांश
3.7 मुख्य शब्दावली
3.8 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर
3.9 अभ्यास हेतु प्रश्न
3.10 आप ये भी पढ़ सकते हैं

3.0 परिचय

हिन्दी साहित्य के इतिहास में आधुनिक हिन्दी साहित्य अपने पूर्ववर्ती हिन्दी साहित्य से वर्ण्य, रूप, विधा आदि में भिन्न है। उसमें परिवर्तन की गति भी पूर्ववर्ती साहित्य की गति की अपेक्षा बहुत अधिक रही है। इन परिवर्तनों का कारण आधुनिक काल की भिन्न–भिन्न परिस्थितियां हैं, जो इस देश के पाश्चात्य जगत से संपर्क में आने के कारण उत्पन्न हुईं। साहित्य एक निरंतर गतिशील भावधारा और विचारधारा है, जो प्राचीन परंपराओं से जुड़ी होकर भी आगे बढ़ती रहती है।

'आधुनिक' शब्द कालवाचक 'अधुना' अव्यय से बना है। 'अधुना' का अर्थ है 'इस समय', 'संप्रति', 'वर्तमान काल'। अतः आधुनिक का अर्थ है 'इस समय का', 'हाल का', 'नया', 'वर्तमान समय का'। इस दृष्टि से केवल अपने सामने उपस्थित समय को ही 'आधुनिक काल' कह सकते हैं।

छायावाद के बाद एक सशक्त साहित्यिक आन्दोलन के रूप में प्रगतिवाद का जन्म हुआ। प्रगतिवादी उसे कहा गया जो मार्क्सवादी विचारधारा में विश्वास रखता हो तथा उसी के अनुसार साहित्य रचता हो। प्रगतिवादी काव्यधारा ने हिन्दी कवियों को बहुत प्रभावित किया। नागार्जुन, गजानन माधव मुक्तिबोध, त्रिलोचन शास्त्री, केदारनाथ अग्रवाल, रामविलास शर्मा, शमशेर बहादुर सिंह आदि इसी काव्यधारा की देन थे।

टिप्पणी

समकालीन हिन्दी काव्य परिदृश्य में नागार्जुन को महत्ता प्राप्त है। इनके काव्य में ठेढपन, गहन आंचलिकता, व्यंग्यपूर्ण आक्रामकता पाई जाती है। युगधारा, शपथ प्रेत का ब्यान, चना जोर गरम, सतरंगे पंखों वाली, तालाब की मछलियां, प्यासी पथराई आंखें आदि इनके प्रमुख काव्य संग्रह हैं।

गजानन माधव मुक्तिबोध की दृष्टि मार्क्सवादी रही है। उन्होंने यथार्थ चित्रण के लिए फेंटेसी का प्रयोग किया है। इस प्रकार उनकी रचनाओं में नाटकीयता है। 'चांद का मुंह टेढ़ा है', 'भूरी–भूरी खाक धूल', 'अंधेरे में' उनकी प्रमुख रचनाएं हैं।

अज्ञेय को प्रयोगवाद का प्रवर्तक माना जाता है। प्रगतिवाद के बाद का काल प्रयोगवाद के नाम से जाना जाता है। सन् 1943 में अज्ञेय ने 'तारसप्तक' का प्रकाशन किया। प्रयोगवादी काव्य के समय देश स्वतंत्र हो चुका था। अज्ञेय का प्रथम काव्य संग्रह 'भग्नदूत' है। 'हरी घास पर क्षण भर', 'चिन्ता', 'बावरा अहेरी', 'आंगन के पार द्वार', 'कितनी नावों में कितनी बार' आदि इनकी अन्य प्रमुख रचनाएं हैं। इन्होंने अपनी रचनाओं में काव्य सत्य पर विचार किया है।

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की काव्य यात्रा में अनेक उतार–चढ़ाव देखने को मिलते हैं। आरम्भ में उन पर व्यक्तिवादी धारा का प्रभाव था, बाद में वे प्रगतिशील काव्यधारा की ओर झुके। इनकी कविताओं में निजता व आत्मीयता पाई जाती है। 'काठ की घंटियां', 'जंगल का दर्द' आदि इनकी प्रमुख कृतियां हैं। इनकी कविताएं सहज, सरल और सपाट हैं।

प्रस्तुत इकाई में आधुनिक काल के प्रमुख कवि नागार्जुन, अज्ञेय, मुक्तिबोध एवं सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का जीवन परिचय, उनकी मुख्य कविताओं का पाठ्यांश तथा काव्यगत विशेषताओं का वर्णन किया गया है।

3.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- आधुनिक काल के कवियों के बारे में जान पाएंगे;
- जन कवि नागार्जुन की काव्यगत विशेषताओं को समझ पाएंगे;
- अज्ञेय के प्रयोगवाद की व्याख्या कर पाएंगे;
- मुक्तिबोध के जीवन के मार्क्सवादी दृष्टिकोण को समझ पाएंगे;
- सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की कविता का पाठ्यांश एवं काव्यगत विशेषताओं की समीक्षा कर पाएंगे।

3.2 नागार्जुन : सामान्य परिचय

हिन्दी कविता को सामान्य जन समुदाय के जीवन के समीप लाने और उसे जनता के मुहावरे में बदल देने वाले कवि नागार्जुन का जन्म दरभंगा (बिहार) के तरौनी गांव में 1911 ई. को हुआ था। नागार्जुन के बचपन का नाम वैद्यनाथ मिश्र था। साहित्य और समाज में नागार्जुन को प्यार से 'बाबा नागार्जुन' कहा जाता है। इनके पिता किसान थे और गृहस्थी

टिप्पणी

चलाने के लिए पुरोहिती भी करते थे। नागार्जुन का विवाह बहुत कम उम्र में हो गया था। किन्तु ज्ञान के प्रति इनकी लगन और जिद को घर–गृहस्थी का बंधन रोक नहीं पाया। नागार्जुन ने कलकत्ता और वाराणसी में रहकर शिक्षा अर्जित की।

नागार्जुन फक्कड़ स्वभाव के थे। उनके व्यक्तित्व में एक तरफ ज्ञान के प्रति चरम जिज्ञासा थी तो दूसरी तरफ किसानों–मजदूरों के लिए असीम स्नेह था। नागार्जुन पहले 'यात्री' के नाम से मैथिली और हिन्दी भाषा में कविताएं लिखते थे। बाद के दिनों में महापंडित राहुल सांकृत्यायन के प्रभाव के कारण नागार्जुन की चेतना और जीवन के प्रति दृष्टिकोण में व्यापक बदलाव आया। सांकृत्यायन जी के सम्पर्क में आने के बाद ही नागार्जुन ने बौद्ध धर्म को अपनाया। बौद्ध धर्म में दीक्षित होने के बाद ही उन्होंने 'यात्री' और 'वैद्यनाथ' की जगह अपना नाम 'नागार्जुन' रखा।

नागार्जुन ने बौद्ध धर्म अपनाने के बाद पालि और प्राकृत भाषा का अध्ययन किया। इन भाषाओं के माध्यम से वे बौद्ध साहित्य और दर्शन का विधिवत अध्ययन–विश्लेषण कर सके। सत्य की खोज में उन्होंने लाहौर, श्रीलंका, तिब्बत और बर्मा आदि स्थानों की यात्रा की।

नागार्जुन की चेतना पर मार्क्सवाद का प्रभाव था। उन्होंने भारतीय सामाजिक संरचना की विसंगतियों, आर्थिक विषमता, किसान–मजदूरों के शोषण, जातिवाद का दंश, स्त्री–जीवन के संकटों को बहुत नजदीक से देखा था, इसीलिए उनके भीतर समाज के इन वर्गों के प्रति गहरी सहानुभूति थी। नागार्जुन की प्रतिबद्धता न सिर्फ लेखन के स्तर पर थी बल्कि वे व्यक्तिगत जीवन में भी किसान–मजदूरों के साथ खड़े होते थे। लेखन के अलावा उनकी लोकप्रियता का यह भी एक कारण था। प्रसिद्ध किसान नेता स्वामी सहजानन्द के साथ उन्होंने बिहार के किसान आन्दोलनों में और बाद में जयप्रकाश नारायण के प्रसिद्ध आंदोलन में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया।

नागार्जुन के घर की आर्थिक स्थिति काफी खराब थी। घर–गृहस्थी के लिए वे जीवन भर संघर्ष करते रहे, किन्तु उन्होंने कभी भी कोई समझौता नहीं किया। वे पूरे साहस के साथ सरकार की जनविरोधी नीतियों का विरोध करते रहे। संघर्ष और सृजन करते हुए जनता के इस योद्धा कवि का 5 नवम्बर, 1998 को निधन हो गया।

नागार्जुन की रचनाएं

उपन्यास– रतिनाथ की चाची, बाबा बटेसरनाथ, दुखमोचन, बलचनमा, वरूण के बेटे, नई पौध, आदि।

कविता संग्रह– युगधारा, सतरंगे पंखों वाली, प्यासी पथरायी आंखें, तालाब की मछलियां, चन्दना, खिचड़ी विप्लव देखा हमने, तुमने कहा था, पुरानी जूतियों का कोरस, हजार–हजार बांहोंवाली, पका है यह कटहल, अपने खेत में, मैं मिलिट्री का बूढ़ा घोड़ा।

मैथिली काव्य संग्रह– चित्रा, पत्रहीन नग्न गाछ

खंडकाव्य– भस्मांकुर, भूमिजा

अन्य– एक संस्कृत काव्य ''धर्मलोक शतकम्'' तथा संस्कृत से कुछ अनूदित कृतियों के रचयिता।

सम्मान– मैथिली काव्य संग्रह पत्रहीन नग्न गाछ के लिए साहित्य अकादमी सम्मान।

3.2.1 नागार्जुन : पाठ्यांश – उनको प्रणाम, अकाल और उसके बाद

टिप्पणी

1. उनको प्रणाम

जो नहीं हो सके पूर्ण–काम
मैं उनको करता हूं प्रणाम।
कुछ कंठित औ' कुछ लक्ष्य–भ्रष्ट
जिनके अभिमंत्रित तीर हुए,
रण की समाप्ति के पहले ही
जो वीर रिक्त तूणीर हुए!
उनको प्रणाम!
जो छोटी–सी नैया लेकर
उतरे करने को उदधि–पार,
मन की मन में ही रही, स्वयं
हो गए उसी में निराकार!
उनको प्रणाम!

शब्दार्थ : पूर्ण काम– जिन्होंने अपनी कामनाओं को पूरा कर लिया हो, कुंठित– अवरुद्ध, गतिहीन, जो व्यक्ति लज्जा या संकोच की वजह से आगे बढ़ने से रुक गया हो, लक्ष्य–भ्रष्ट– लक्ष्य से भटकने वाले, अभिमंत्रित– मंत्र से सींचे हुए, रण– युद्ध, तूणीर– बाण, उदधि– समुद्र।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां प्रगतिवादी काव्यधारा के प्रसिद्ध कवि नागार्जुन की प्रसिद्ध कविता 'उनको प्रणाम' से ली गई हैं। यह कविता लक्ष्य को पा सकने में असफल रहे व्यक्तियों को लक्ष्य कर लिखी गई है। दुनिया में केवल उनकी ही पूजा होती है जिन्होंने किसी सफलता को प्राप्त किया है जबकि सफलता और असफलता के बीच का फासला कभी–कभी बहुत कम होता है। समाज का सबसे बड़ा सत्य तो यह है कि अनेक असफल व्यक्तियों के प्रयासों से सीख लेते हुए ही कोई व्यक्ति सफल होता है।

प्रसंग : इन पंक्तियों में कवि उन लोगों को नमन करते हुए याद कर रहा है जिन्होंने अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जो प्रयास किए थे वे ठीक–ठिकाने तक नहीं पहुंच पाए। जो जीवन के युद्ध के बीच में ही चूक गये।

व्याख्या : कवि कह रहा है कि इस जगत में जो भी व्यक्ति किसी कार्य को पूर्ण कर पाने में सफल नहीं हो पाए, मैं उनको प्रणाम करता हूं। इसकी व्यंजना यह है कि जो किसी कार्य में सफल हो गए उनको तो सारा जगत ही प्रणाम करता है। जगत में जो भी व्यक्ति किसी लक्ष्य को लेकर आगे बढ़ता है, उसके भीतर उसको प्राप्त करने की अदम्य लालसा होती है। लेकिन जिन्दगी की विभिन्न परिस्थितियों की वजह से उनमें से कुछ कुंठित हो जाते

हैं, तो कुछ अपने मूल लक्ष्य से भटक जाते हैं। लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उनके द्वारा उठाए गए कदम काफी सोच–समझकर ही उठाए जाते हैं लेकिन किसी वजह से वे कदम उस मंजिल तक उन्हें नहीं पहुंचा पाते जिनको पाने की उनके भीतर कामना होती है। 'अभिमंत्रित तीर' से कवि का तात्पर्य सोच–विचारकर लक्ष्य प्राप्ति के लिए उठाए गए कदम से है। कवि आगे कहता है कि मैं जीवन संग्राम के उन वीरों को प्रणाम करता हूं जिनके प्रयास और साहस रूपी तीर जीवन–संग्राम की समाप्ति के पहले ही समाप्त हो गए। आमतौर पर ऐसे लोगों के प्रति हमारे भीतर नकारात्मक भावना जन्म ले लेती है।

टिप्पणी

मैं उन लोगों को भी प्रणाम करता हूं जो सीमित साधनों रूपी नाव में बैठकर जीवन रूपी सागर को पार करने चले थे। उनकी समस्त जिन्दगी गुजर गयी लेकिन उनके सपने और लक्ष्य उनके मन के भीतर ही रह गए, वे कभी उसे जमीन पर नहीं उतार पाए। कवि कह रहा है कि संसार में बहुत सारे लोग ऐसे हैं जो अपने समस्त सपनों और कामनाओं को दिल में लिए हुए, गुमनामी की जिन्दगी जीते हुए इस संसार को छोड़कर चले जाते हैं। संसार में कोई उनको याद नहीं करता पर मैं उनको प्रणाम करता हूं।

जो उच्च शिखर की ओर बढ़े
रह–रह नव–नव उत्साह भरे,
पर कुछ ने ले ली हिम–समाधि
कुछ असफल ही नीचे उतरे!
उनको प्रणाम!
एकाकी और अकिंचन हो
जो भू–परिक्रमा को निकले,
हो गए पंगु, प्रति–पद जिनके
इतने अदृष्ट के दाव चले!
उनको प्रणाम!

शब्दार्थ : नव– नवीन, हिम समाधि– बर्फ में दब जाना, अकिंचन– बहुत गरीब, दरिद्र।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : इन पंक्तियों में कवि बड़े लक्ष्य की प्राप्ति में जान गंवाने वाले, असफल होने वाले और सब कुछ खो देने वाले व्यक्तियों के प्रति अपने श्रद्धा सुमन अर्पित कर रहे हैं।

व्याख्या : नागार्जुन कह रहे हैं कि नवीन उत्साह में भरकर किसी बड़े लक्ष्य की प्राप्ति के लिए चल निकले। ऐसा उन्होंने बार–बार किया। इस क्रम में कुछ ऐसे थे जिन्होंने अपने उस विशाल लक्ष्य को प्राप्त करने के दौरान ही हिम–समाधि ले ली अर्थात मृत्यु को प्राप्त हो गए और कुछ ऐसे थे जो तमाम विघ्न बाधाओं की वजह से असफल होकर बीच से ही लौट आए। कवि उन सबको प्रणाम करता है। लक्ष्य की प्राप्ति के लिए किए जाने वाले उनके प्रयास को ही कवि नमन योग्य मानता है। कवि की नजरों में लक्ष्य प्राप्ति से बड़ा है उसके लिए मनोयोग से किया जाने वाला प्रयास।

टिप्पणी

कवि उन लोगों को भी नमस्कार करता है जो गरीब थे और अकेले भी, लेकिन पूरी पृथ्वी की परिक्रमा करने निकल पड़े, परंतु इस परिक्रमा के दौरान अदृश्य शक्तियों ने इतनी बाधाएं पैदा कीं कि दोनों पांव गवां बैठे। कवि यहां अभावों का जीवनयापन करने वाले उन साहसी लोगों के साहस को याद कर रहा है जो तमाम गरीबी के बावजूद बड़े लक्ष्य की प्राप्ति के लिए संघर्षरत रहे। पर भाग्य का ऐसा खेल रहा कि उनके पास अपना जो कुछ भी था उसको भी गवां बैठे। संसार में बहुत सारे संभावनाशील मनुष्य नियति का शिकार हो जाते हैं।

कृत–कृत नहीं जो हो पाए,
प्रत्युत फांसी पर गए झूल
कुछ ही दिन बीते हैं, फिर भी
यह दुनिया जिनको गई भूल!
उनको प्रणाम!
थी उम्र साधना, पर जिनका
जीवन नाटक दुःखांत हुआ,
या जन्म–काल में सिंह लग्न
पर कुसमय ही देहांत हुआ!
उनको प्रणाम!

शब्दार्थ : कृत–कृत– संतुष्ट तथा प्रसन्न, प्रत्युत– बल्कि, वरन, कुसमय– खराब समय, देहांत– मृत्यु

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : कवि इन पंक्तियों में ऐसे व्यक्तियों को याद करता है जो अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के पहले ही मृत्यु को प्राप्त कर लेते हैं और उस लक्ष्य के पूरे होने के बाद मिलने वाले आनंद से वंचित रह जाते हैं।

व्याख्या : नागार्जुन कह रहे हैं कि लक्ष्य की प्राप्ति के बाद मिलने वाले आनंद के सुख का उपभोग न कर पाने वाले उन लोगों को मैं प्रणाम करता हूं जो उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए फांसी के फंदे पर झूल गए। भारत के स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान ऐसे अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं। हम अपने आसपास भी ऐसे अनेक लोगों को पाते हैं जो अपने परिवार, समाज और राष्ट्र की किसी समस्या के समाधान के लिए अपना जीवन समाप्त कर लेते हैं और उस समस्या के समाधान के बाद उसका आनन्द अन्य लोग लेते हैं। लेकिन इसकी सबसे बड़ी विडम्बना यह है कि जो लोग यह आनन्द उठाते हैं वही उस व्यक्ति को भूल जाते हैं। ऐसे लोगों के साथ एक अन्याय तो शोषक या नियति करती है तो दूसरा अन्याय वे लोग करते हैं जिनके लिए उस व्यक्ति ने जान दी है। कवि वैसे व्यक्तियों को याद करता है और अपने पाठकों से ऐसा करने की उमीद करता है।

टिप्पणी

ऐसे लोग भी अभिनन्दन के योग्य हैं जो अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए साधनारत थे लेकिन किसी कारणवश उनके जीवन का अंत हो गया। ऐसे लोग भी प्रणाम योग्य हैं जिनको ईश्वर द्वारा ही अल्प आयु मिली थी और उनका कम उम्र में ही देहांत हो गया। ये न लक्ष्य–भ्रष्ट हुए और लक्ष्य के अधूरे रह जाने में इन लोगों की कोई गलती नहीं थी। ये न लक्ष्य–भ्रष्ट हुए और न ही असफल। किस्मत ने ही इनको छल दिया, जबकि इनके अंदर श्रेष्ठ कर पाने की संभावना विद्यमान थी।

दृढ़ व्रत औ' दुर्दम साहस के
जो उदाहरण थे मूर्ति–मंत?
पर निरवधि बंदी जीवन ने
जिनकी धुन का कर दिया अंत!
उनको प्रणाम!
जिनकी सेवाएं अतुलनीय
पर विज्ञापन से रहे दूर
प्रतिकूल परिस्थिति ने जिनके
कर दिए मनोरथ चूर–चूर!
उनको प्रणाम!

शब्दार्थ : दुर्दम– प्रबल, प्रचंड, निरवधि– सीमारहित, लगातार, निरंतर

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : इन पंक्तियों में कवि उन लोगों का ध्यान आकर्षित करना चाहता है जो कठिन इच्छाशक्ति और बेजोड़ साहस वाले थे लेकिन जिनका सारा उत्साह जीवन के कैदखाने में बंद रहने के कारण समाप्त हो गया।

व्याख्या : जो लोग दृढ़ इच्छाशक्ति के धनी और जिसको दबाया न जा सके ऐसे साहस की मूर्ति थे। इन गुणों के उदाहरण के रूप में जिनकी समाज में प्रतिष्ठा थी। पर जिनका सारा जीवन सीमारहित कैदखाने में बीत गया और उनके भीतर की समस्त इच्छाशक्ति और उत्साह का अंत हो गया। कवि ऐसे व्यक्तियों के साहस और इच्छाशक्ति को प्रणाम करना चाहता है। यहां कैदखाना जीवन का भी है और दीवारों वाला भी।

कविता के अंत में कवि ऐसे व्यक्तियों को याद कर रहा है जो तमाम दिखावे से दूर रहकर मौन भाव से समाज की अतुलनीय सेवा करते रहे। पूंजीवाद के वर्तमान युग में तो काम से ज्यादा विज्ञापन का जोर है। तब ऐसे समय में कवि समाज के उन मौन–साधकों को याद कर रहा है जो तमाम तरह के दिखावे से दूर हैं। सबसे आखिर में कवि उन सभी लोगों को प्रणाम करता है जिनकी तमाम मनोकामनाओं को प्रतिकूल परिस्थितियों ने चकनाचूर कर दिया है।

टिप्पणी

2. अकाल और उसके बाद

कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।

शब्दार्थ : चूल्हा– मिट्टी से बना हुआ भोजन पकाने का उपादान, चक्की– पत्थर का बना हुआ एक यंत्र जिससे गेहूं पीसा जाता है, कानी कुतिया– ऐसी कुतिया जिसके पास केवल एक ही आंख हो, भीत– दीवार, गश्त– घूमना, शिकस्त– पराजय, हार।

सन्दर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां प्रगतिवादी कवि नागार्जुन की प्रसिद्ध कविता 'अकाल और उसके बाद' की आरंभिक पंक्तियां हैं। बिहार में आए भयानक अकाल से दुखी होकर कवि ने इस कविता की रचना की थी। इस कविता के पहले हिस्से में अकाल के भयानक प्रभाव का वर्णन है जबकि इसके दूसरे हिस्से में अन्न आने के पश्चात घर में आई खुशी का चित्रण है।

प्रसंग : इन पंक्तियों में अकाल के दौरान घर में रहने वाले जानवरों की स्थिति के चित्रण के माध्यम से अकाल के भयानक प्रभाव का प्रभावी चित्रण किया गया है।

व्याख्या : अकाल के बाद की स्थिति को बताते हुए कवि कहता है कि अकाल के कारण घर में अन्न का अभाव था, इस वजह से न चूल्हा जल सका और न ही चक्की चल सकी। अकाल के कारण घर में अन्न का दाना नहीं है, इसलिए चक्की चलाकर गेहूं पीसने और चूल्हे पर उसकी रोटी पकाने का कार्य नहीं हो पा रहा है। चूल्हे के रोने और चक्की की उदासी की व्यंजना यह है कि परिवार के लोग भोजन के अभाव में रो रहे हैं और भूख और गरीबी की वजह से उनका हृदय उदास है। जब घर में मनुष्यों को खाने के लिए अन्न नहीं है तो जानवरों को भला क्या मिलता? घर की पालतू कुतिया भोजन के लिए बेचैन है इसलिए वह कभी चूल्हे के पास और कभी चक्की के पास सो रही है। आम दिनों में कुतिया का इन जगहों पर जाना संभव नहीं है क्योंकि यह भोजन पकाने की पवित्र जगहें होती हैं, लेकिन अकाल की वजह से अब परिवार के लोगों की इसमें दिलचस्पी नहीं है। कुतिया की तरह ही कई दिनों से छिपकली भी भोजन की प्रतीक्षा में दीवारों पर घूम रही है और चूहे तो भूख के मारे बेहाल ही हो गये हैं। तात्पर्य यह कि उस घर पर आश्रित सभी जानवरों की हालत बेहद खराब है। कविता की प्रत्येक पंक्ति का आरंभ 'कई दिनों' पदबंध से होता है, जिससे जहां एक तरफ कविता में लय का सृजन होता है वहीं यह टेक इस बात की ओर गहराई से संकेत करता है कि भूखे रहने की यह घटना किसी एक दिन या दो दिन के लिए नहीं घटती बल्कि कई दिनों से कई परिवार अकाल की इस त्रासदी को भोग रहे हैं।

विशेष : इस कविता का सबसे बड़ा वैशिष्ट्य यह है कि इसमें अकाल के प्रभाव को मनुष्यों की जगह उनसे जुड़े पशु–पक्षियों के हालात के वर्णन के माध्यम से सांकेतिक रूप में किया गया है। जब घर के पशुओं की स्थिति इतनी खराब है तो उसके इंसानों की क्या हालत होगी। इसके साथ ही यह कविता मनुष्य और पशु के संवेदनशील रिश्ते की ओर भी संकेत करती है।

टिप्पणी

दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद
धुआं उठा आंगन से ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठी घर भर की आंखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलाई पांखें कई दिनों के बाद।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : इन पंक्तियों में अकाल के बाद घर में अन्न के दानों के आने के बाद परिवार में फैली प्रसन्नता की भावना को प्रस्तुत किया गया है।

व्याख्या : अकाल के बाद की स्थिति लेखक ने इन पंक्तियों में बताई है। कई दिनों के बाद घर में अनाज के दाने आये हैं जिससे आशा का संचार सबके भीतर हुआ है। अनाज आ जाने के कारण घर के चूल्हे जल रहे हैं और उनसे निकलता धुआं आंगन में फैला हुआ है। इस धुएं को देखकर उस परिवार के सदस्यों और उन पर आश्रित जानवरों के भीतर आनन्द की लहर फैल जाती है। इस हिस्से की तीसरी पंक्ति में पहली बार कवि परिवार के सदस्यों का उल्लेख करता है। वह कहता है कि घर में अनाज के आगमन के बाद बहुत दिनों से परिवार के सदस्यों की बुझी हुई आंखें चमक उठीं। धुएं को देखकर घर की मुंडेर पर बैठे कौए ने प्रसन्नता में अपने पंख खुजलाए। उसे लगा कि अब उसे भी कुछ खाने को मिलेगा। अकाल के दौरान मनुष्यों के ऊपर क्या बीत रही उसका सीधा उल्लेख कवि ने नहीं किया जबकि अनाज के आने के बाद उनकी आंखों में आयी चमक का वर्णन किया है। इसके पीछे की मूल वजह यह है कि कोमल मन का कवि अकाल के दौरान मनुष्यों की भयावह स्थिति का प्रत्यक्ष वर्णन करने से खुद को बचाता है। अनाज आने के बाद परिवार में फैली प्रसन्नता का वर्णन इस प्रकार से किया है कि उसे पढ़ते हुए पाठकों के भीतर भी एक प्रकार के आनन्द का संचार हो जाता है।

विशेष : कविता के पहले हिस्से में 'कई दिनों तक' पदबंध पहले आता है, जबकि अंतिम हिस्से में 'कई दिनों के बाद'। यह संयोजन कविता के अर्थ को व्यापक बनाता है। आरंभ में जहां यह पदबंध अकाल की त्रासदी को गहराता है वहीं अंतिम हिस्से में लंबी यातना के बाद मिली प्रसन्नता के मनोभाव को स्पष्टता के साथ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है।

3.2.2 जनकवि नागार्जुन की जनपक्षधरता

नागार्जुन हिन्दी के प्रगतिशील कवियों में से एक हैं। इनका वास्तविक नाम वैद्यनाथ मिश्र है। प्रारम्भ में मातृभाषा मैथिली में 'यात्री' नाम से साहित्य लेखन करते रहे। बाद में बौद्ध धर्म स्वीकार कर लेने के उपरान्त 'नागार्जुन' नाम से साहित्य साधना करने लगे। नागार्जुन के समग्र व्यक्तित्व पर निराला और राहुल सांकृत्यायन दोनों का स्पष्ट प्रभाव है। साम्यवादी विचारधारा के प्रति आस्था के फलस्वरूप उन्होंने कविता में कल्पना–तत्त्व को त्यागकर पीड़ित और वंचित तबके की मूक आवाज को अपने काव्य में वाणी प्रदान की है। नागार्जुन का काव्य शोषितों के प्रति सहानुभूति और शोषण के विरुद्ध आक्रोश के साथ–साथ किसान जीवन की त्रासदी और अभाव में जीने वाले लाखों–करोड़ों लोगों की आशा–आकांक्षा एवं उनकी जिजीविषा का साहित्यिक अभियान है। अपनी इसी विशिष्टता के कारण वे जनता

के कवि कहे जाते हैं। नागार्जुन की जन–पक्षधरता को निम्नलिखित शीर्षकों के माध्यम से समझा जा सकता है–

टिप्पणी

किसान जीवन के प्रति लगाव : नागार्जुन ग्रामीण जीवन का, किसान के खेत–खलिहान का, उनके श्रम और श्रम से उपजे अन्न का सम्मान करते हैं। नागार्जुन के लिए सुन्दर मनुष्य का श्रम है, सत्य खेत–खलिहान से उपजा अन्न है और शिव है किसान। किसान संस्कृति और जीवन के प्रति अपने लगाव के कारण ही उन्हें गांव में परिश्रम करती हुई महिलाओं द्वारा गाये गीत कोयल की तान के जैसे लग रहे हैं–

बहुत दिनों के बाद
अबकी मैंने जी भर सुन पाया
धान कूटती किशोरियों की कोकिलकंठी तान
–बहुत दिनों के बाद

दीन–दलित के प्रति सहानुभुति : कवि समाज में हो रहे शोषण के विरोध को अपना अभीष्ट समझता है। शोषण का हरदम जिक्र करना कवि का उद्देश्य नहीं है। उनके लिए शोषण का दंश झेल रहे लोग पराये नहीं हैं। इसलिए वे जीवन के हर सुख–दुख में उनके साथ हैं। नागार्जुन स्वयं भी उसी ग्रामीण परिवेश में पले–बढ़े हैं। उनकी चेतना–संवेदना के निर्माण में उस परिवेश का ही योगदान है। उन्होंने दीन–दलित के जीवन को नजदीक से देखा है, भोगा है। इसलिए उनकी कविता में गरीबों, वंचितों और दलितों के प्रति प्रामाणिक सहानुभूति उपलब्ध है–

तुच्छ से अतितुच्छ जन की जीवनी पर हम लिखा करते
कहानी, काव्य, रूपक, गीत
क्योंकि हमको स्वयं भी तुच्छता का भेद है मालूम।

समतामूलक समाज की कल्पना : नागार्जुन देश में एक ऐसे समतामूलक समाज की स्थापना करना चाहते थे, जिसमें धर्म, जाति, भाषा, ऊंच–नीच और अमीर–गरीब का भेद न हो। वे एक ऐसे समाज की स्थापना चाहते हैं जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को अपना श्रेष्ठतम विकास करने का आश्वासन मिलना चाहिए। इसके लिए कुलीनता की खाल ओढ़े संभ्रांत जनों की मानसिकता पर प्रहार करने से भी वे नहीं चूकते–

सटता है बदन से बदन
पसीने से लथपथ।
छूती है निगाहों को
कत्थई दांतों की मोटी मुस्कान
बेतरतीब मूंछों की थिरकन
सच–सच बतलाओ
घिन तो नहीं आती है?
जी तो नहीं कुढ़ता है?

टिप्पणी

युगीन यथार्थ का चित्रण : नागार्जुन के काव्य में युगीन यथार्थ का प्रामाणिक चित्रण देखने को मिलता है। झूठ, चापलूसी और छल, जातिवाद, पूंजीवाद को आज का युग धर्म बनाने वाली शक्तियों की वे कठोर शब्दों में निन्दा करते हैं। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण नागार्जुन हिन्दी के यथार्थवादी कवियों में प्रमुख हैं। नागार्जुन युगीन यथार्थ के चित्रण में राजनीतिक विडंबनाओं को भी पूरी विश्वसनीयता के साथ दर्ज करते हैं–

सेठों का हित साध रहे हैं तीनों बंदर बापू के
युग पर प्रवचन लाद रहे हैं तीनों बंदर बापू के
सत्य अहिंसा फांक रहे हैं तीनों बंदर बापू के
पूंछों से छवि आंक रहे हैं तीनों बंदर बापू के

समसामयिक चेतना की प्रधानता : नागार्जुन के काव्य में समसामयिकता का यथार्थ चित्रण देखने को मिलता है। नागार्जुन की मान्यता है कि जब चारों ओर शोषण और वर्चस्व की प्रधानता हो, राजनीतिक अकर्मण्यता हो, महंगाई, बेरोजगारी और भुखमरी से जनता त्रस्त होने के कारण अपना उचित–अनुचित विवेक भुला बैठी हो तब ऐसे कठिन समय में विरोध ही एकमात्र हथियार है–

कलम से काम लो गदा का, तमंचा का
ढीला न पड़े डोर प्रत्यंचा का
जहरीले सांपों पर दया नहीं करना
दुष्टों पर हमदर्दी के उसांस नहीं भरना
कटखने कुत्तों पर रहमदिल न होना
भलमनसाहत में जान से हाथ मत धोना

लोक–जीवन की आशा और आंकाक्षा की पहचान : नागार्जुन की रचनाओं में लोक जीवन कई रूपों में चित्रित हुआ है। नागार्जुन लोक–जीवन के राग–विराग, जय–पराजय, अवसाद, हताशा को तो अपनी कविता में दर्ज करते ही हैं साथ ही उनमें लोक–जीवन की आशा–आकांक्षा की पहचान का सामर्थ्य है। वे भ्रष्टाचार, शोषण और आर्थिक विषमता को बढ़ाने वाली राजनीति के अलावा बेरोजगारी, भूख और अकाल से जूझ रहे लोक मानस की आशा–आकांक्षा को भी कविता में प्रतिफलित करते हैं–

दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद
धुआं उठा आंगन से ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठी घर भर की आंखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलाई पांखें कई दिनों के बाद।

नागार्जुन की कविता में उपस्थित जनपक्षधरता के माध्यम से यह कहा जा सकता है कि वे वास्तविक अर्थों में जनता के कवि हैं। वे उस लोक के कवि हैं, जो लोकतंत्र में भी सदा से उपेक्षित है। प्रख्यात आलोचक नामवर सिंह ने नागार्जुन को स्वाधीन भारत के प्रतिनिधि जन–कवि मानते हुए कहा है कि "उनकी कविता का संसार वस्तुतः वह लोक

टिप्पणी

सामान्य जीवन ही है, जिसे अति सामान्य समझकर अन्य कवि आंखें मूंद लेते हैं।" नागार्जुन जनता के सुख–दुख, भूख, अकाल, महामारी, सूखा, बाढ़, दूधिया वात्सल्य, किसान–मजदूर के जीवन और ग्रामीण प्राकृतिक परिवेश को उसके मूल में जाकर समझते–देखते हैं। वे अपनी कविता का कथ्य, भाषा और शैली वहीं से उठाते हैं। इसलिए उनकी कविता स्वाभाविक और विश्वसनीय लगती है, और यही उनकी लोकप्रियता का कारण भी है।

3.2.3 काव्यगत चेतना

नागार्जुन की कविता के बारे में डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा है: "जहां मौत नहीं है, बुढ़ापा नहीं है, जनता के असंतोष और राज्यसभाई जीवन का सन्तुलन नहीं है वह कविता है नागार्जुन की।" यह सत्य है कि नागार्जुन ने अपनी कविता के माध्यम से एक अलक्षित जीवन और जगत के विस्तार को सम्भव किया है। नागार्जुन की कविता का दायरा व्यापक है। उनकी कविता एक साथ कई मोर्चों पर खड़ी और लड़ती है। स्वयं नागार्जुन के व्यक्तित्व के कई पहलू हैं और उनकी चेतना के कई छोर हैं। नागार्जुन कभी प्रखर राजनीतिक चेतना से युक्त लगते हैं तो कभी लोक–जीवन सा निर्दोष, तो कभी ईश्वरीय सत्ता को चुनौती देते नास्तिक लगते हैं तो कभी मनुष्यता की संभावनाओं पर भरोसा रखने वाले आस्तिक लगते हैं। तो कभी ईश्वर की सत्ता के प्रति आस्थावान होकर प्रकृति और जीवन के सौन्दर्य में रमते दिखाई देते हैं। इन सबके साथ वे कभी भी जीवन के यथार्थ की उपेक्षा नहीं करते हैं। जो जैसा है उसे उसी रूप में और उसी भाषा और शैली में अपनी कविता में चित्रित करते हैं।

नागार्जुन के काव्य की विशेषताओं को अधोलिखित शीर्षकों के माध्यम से समझा जा सकता है–

गहरी राजनीतिक चेतना की उपस्थिति : नागार्जुन गहरे अर्थों में राजनीतिक चेतना के कवि हैं। उनकी कविताओं में राजनीति का वास्तविक एवं ठोस चेहरा दर्ज है। वे अपने कवि होने की पहचान को सत्ता के प्रतिपक्ष रूप में प्रस्तुत करते हैं। उन्होंने कभी भी सत्ता के साथ जाना स्वीकार नहीं किया। ऐसा करते हुए वे न सिर्फ अपनी कविता का पक्ष रख रहे थे बल्कि साहित्य मात्र के स्वभाव का निर्माण कर रहे थे। जिस अर्थ में 1936 में प्रेमचन्द ने साहित्य को राजनीति के आगे मशाल लेकर चलने वाली चीज बताया था, उन्हीं अर्थों को नागार्जुन अपनी कविता में समकालीन संदर्भ दे रहे थे। वे सचेत थे, साहसी थे, इसलिए राजनीति के छल-प्रपंच को, नीति–अनीति को अपनी कविता में बेनकाब कर पा रहे थे।

इंदुजी, इंदुजी क्या हुआ आपको?
सत्ता के मद में भूल गईं बाप को?
छात्रों के खून का चस्का लगा बचपन में
लगता है मां का दूध नहीं मिला बचपन में

निम्न–मध्यवर्गीय परिवार का जीवनानुभव : नागार्जुन की कविता समाज के बड़े और तथाकथित सभ्य लोगों की स्तुति का प्रतिकार करती है। वे अपनी कविता में निम्न एवं मध्यमवर्गीय परिवारों के आशा–आकांक्षा का सौन्दर्य, श्रम के बीच पनपने–पलने वाले प्रेम, जीवन–संघर्ष, आपसी रिश्तों की गर्माहट की सुखद स्मृति के अनेक चित्र खींचते हैं–

टिप्पणी

हां भाई, मैं भी पिता हूं
वो तो बस यूं ही पूछ लिया आपसे
वर्ना ये किसको नहीं भाएंगी?
नन्हीं कलाइयों की गुलाबी चूड़ियां!

साहित्य में यथार्थ की प्रतिष्ठा : नागार्जुन देश की राजनीति में बढ़ते भ्रष्टाचार, शोषण, सामाजिक एवं आर्थिक संरचना में लगातार बढ़ती जा रही असमानता के चरित्र को पहचान रहे थे। वे जानते थे कि यदि समाज के विभिन्न वर्गों के बीच की यह खाई ऐसे ही बढ़ती गयी तो गरीब और वंचित तबको में अपने कर्तव्य के प्रति भयानक उदासीनता छा जायेगी। जो एक लोक कल्याणकारी राष्ट्र की अवधारणा को धूमिल करेगी। यह उदासीनता कितनी मनुष्य विरोधी है, इसे समझने के लिए भारत की शिक्षा व्यवस्था पर लिखी नागार्जुन की इस कविता को देख सकते हैं–

घुन–खाए शहतीरों पर की बारहखड़ी विधाता बांचे
कटी भीत है, छत चूती है, आले पर बिसतुइया नाचे
बरसाकर बेबस बच्चों पर मिनिट–मिनिट में पांच तमाचे
दुखरन मास्टर गढ़ते रहते किसी तरह आदम के सांचे

प्रकृति प्रेम : नागार्जुन सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र में यथार्थवादी दृष्टिकोण के सदैव पक्षधर रहे हैं। उनकी कविता की एक बड़ी विशेषता यह है कि वे प्रकृति का भी नग्न यथार्थ चित्रण करते हैं। प्रकृति को उन्होंने जैसा देखा और जिस रूप में उसे भोगा उसी रूप में वर्णन करने से उन्हें कोई परहेज नहीं है। कल्पना के लिए कविता में कोई अवकाश नहीं है। इसलिए काव्य में कल्पना–तत्व को प्रतिष्ठा दिलाने वाले महाकवि कालिदास की रचना 'मेघदूत' को चुनौती देते हुए वे कहते हैं कि–

जाने दो वह कवि कल्पित था, मैंने तो भीषण जाड़ों में
नभ–चुंबी कैलाश शीर्ष पर, महामेघ को झंझानिल से
गरज–गरज भिड़ते देखा है, बादल को घिरते देखा है।

सहज भाषा शैली : नागार्जुन काव्य की भाषा और शैली सहज, सुबोध और प्रवाहपूर्ण है। संवादधर्मिता उनकी काव्य–भाषा का विशिष्ट गुण है। जो उन्हें उनके ग्रामीण परिवेश और लोक से मिला है। वे कविता और जनता के रिश्ते को समझ गये थे। अपने लेखन के आरंभिक दिनों में उन्होंने मैथिली भाषा में और लोकप्रिय शैली में आठ–आठ पृष्ठों की 'कितबिया' लिखीं, प्रकाशित करायीं और खुद ही ट्रेनों, बसों में बेचा। जनता क्या चाहती है, यह ठीक तरह से नागार्जुन ने पहचान लिया था। संस्कृत, पालि और मैथिली के विद्वान होने के बाद भी उनकी कविता में आंचलिक भाषा के शब्द, वाक्य, मुहावरे, लोकोक्तियां पूरी गरिमा के साथ आये हैं। जिनसे उनकी कविता की सम्प्रेषणीयता बढ़ी।

सुबह सुबह
आंचलिक बोलियों का मिक्सचर
कानों की इन कटोरियों में भरकर लौटा।

टिप्पणी

नागार्जुन ने छंदयुक्त और गीत के साथ मुक्तछंद और गद्यपरक कविताएं भी लिखी हैं। सहज संवाद उनकी कविता की विशेषता है। नागार्जुन की कविताओं में प्रयुक्त सरल शब्दों एवं सहज शैली की प्रशंसा करते हुए आलोचक नामवर सिंह ने कहा है कि– "तुलसीदास के बाद नागार्जुन अकेले ऐसे कवि हैं जिनकी कविता की पहुंच किसानों की चौपालों से लेकर काव्यरसिकों की गोष्ठी तक है।" नागार्जुन ने काव्य में अब तक के अछूते प्रसंग जैसे– 'मादा सूअर', 'कटहल', 'खुरदुरे पैर' और 'कर दो वमन' इत्यादि पर देहाती, अश्लील और भदेस कहे जाने का खतरा उठाकर भी लिखने का साहस किया है।

3.3 अज्ञेय : सामान्य परिचय

अज्ञेय हिन्दी के प्रमुख कवि–लेखक हैं। अज्ञेय का पूरा नाम सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन है। इनके पिता का नाम पं. हीरानन्द शास्त्री एवं माता का नाम व्यन्ती देवी है। अज्ञेय के पिता पं. हीरानन्द शास्त्री पुरातत्व विद् थे। प्राचीन स्थलों के उत्खनन और पहचान के सिलसिले में पं. हीरानन्द शास्त्री का देश के कई हिस्सों में आना–जाना लगा रहता था। 7 मार्च, 1911 को उत्तर प्रदेश के तत्कालीन देवरिया जिला (अब कुशीनगर जिला) के कसया नामक नगर के एक पुरातत्व–उत्खनन शिविर में अज्ञेय का जन्म हुआ। पिता के स्थानान्तरण के कारण अज्ञेय अपने जीवन के आरम्भिक वर्षों में भिन्न–भिन्न स्थानों पर रहे। 1925 में अज्ञेय ने पंजाब से प्राइवेट हाईस्कूल परीक्षा उत्तीर्ण की। उसी समय वे राखालदास बनर्जी और काशीप्रसाद जायसवाल जैसे विद्वानों के सम्पर्क में आये तथा राखालदास बनर्जी के ही प्रभाव में बंगला भाषा का ज्ञान प्राप्त किया। लाहौर से प्रथम श्रेणी में बी.एससी. करने के बाद हिन्दुस्तान रिपब्लिकन आर्मी और चन्द्रशेखर आजाद, सुखदेव और भगवती चरण वोहरा के सम्पर्क में आये और यहीं से अज्ञेय के क्रान्तिकारी जीवन की शुरुआत हुई।

अज्ञेय का जीवन बहुत अधिक उतार–चढ़ाव वाला था। हिन्दुस्तान रिपब्लिकन आर्मी के साथ वे तन–मन से जुड़ गये थे। क्रान्तिकारी गतिविधियों में सम्मिलित होने के कारण उन पर अंग्रेज सरकार की नजर थी। परिणामस्वरूप 15 नवम्बर, 1930 को गिरफ्तार कर लिए गए। 1934 तक जेल में रहे। इस बीच माता और छोटे भाई की मृत्यु हो गई। अज्ञेय परिस्थितियों से हार मानने वाले नहीं थे। जेल से रिहा होने के बाद वे किसान आन्दोलन में सक्रिय हुए। अपने समय की चर्चित पत्रिका 'विशाल भारत' में कुछ दिनों तक काम किया। अज्ञेय अन्तर्राष्ट्रीय फासीवाद के विरुद्ध संघर्ष के लिए अपने समानधर्मी लोगों के साथ लगे रहे। सेना की नौकरी पर गये। किन्तु 1946 में सेना की नौकरी से त्यागपत्र दे दिया। इसी वर्ष पिता की मृत्यु हो गयी।

जीवन के इन तमाम संघर्षों के बीच अज्ञेय साहित्यिक मोर्चे पर भी उल्लेखनीय कार्य करते रहे। 1943 में 'तार सप्तक' का संपादन कर साहित्य की दुनिया में तहलका मचा दिया। 'तार सप्तक' सात कवियों की चुनी हुई कविताओं का संकलन था। 'तार सप्तक' से ही 'प्रयोगवाद' का आरम्भ माना जाता है। 'तार सप्तक' की अपार लोकप्रियता और महत्व के बाद अज्ञेय ने दूसरा सप्तक, तीसरा सप्तक और चौथे सप्तक का संपादन किया। ये चारों सप्तक हिन्दी कविता के क्षेत्र में अपना एक विशिष्ट महत्व रखते हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

1. बाबा नागार्जुन के बचपन का नाम क्या था?
2. नागार्जुन की किस रचना को साहित्य अकादमी सम्मान मिला?
3. सही–गलत बताइए–
   (क) साहित्य और समाज में नागार्जुन को प्यार से 'बाबा नागार्जुन' कहा जाता है।
   (ख) नागार्जुन शुरू से ही बौद्ध धर्म को मानते थे।

टिप्पणी

अज्ञेय अपने जीवन में कई महत्वपूर्ण साहित्यिक पत्रिकाओं, साहित्यिक संगठनों, आयोजनों के सूत्रधार रहे हैं। हिन्दी के साथ ही बांग्ला, अंग्रेजी व दूसरी अन्य भाषाओं के जानकार होने के कारण उनका प्रभाव सम्पूर्ण भारतीय साहित्य पर पड़ रहा था। साहित्य और संस्कृतिकर्मी के रूप में अज्ञेय ने यूरोप और एशिया के अनेक देशों का भ्रमण किया। वे एक ऐसे रचनाकार रहे हैं, जिनका अपने समकालीनों एवं बाद के रचनाकारों पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ा।

उन्होंने बड़े पैमाने पर साहित्य की कई विधाओं में श्रेष्ठ लेखन कार्य किया। इसके लिए उन्हें कई विशिष्ट सम्मान–पुरस्कार मिले। 'आंगन के पार द्वार' काव्य–संग्रह पर साहित्य अकादमी पुरस्कार, 'कितनी नावों में कितनी बार' कविता–संग्रह के लिए भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार के साथ ही उन्हें अनेक पुरस्कार प्राप्त हुए।

अज्ञेय जीवन और लेखन दोनों स्तरों पर अपने जीवन–काल में ही अत्यधिक चर्चित और लोकप्रिय हो गये थे। वे हिन्दी के एक ऐसे रचनाकार थे, जिन्हें कविता और गद्य दोनों में समान रूप से श्रेष्ठ लेखन कार्य किया और स्वीकृत हुए।

साहित्य, विचार और संस्कृति के इस अद्वितीय अध्येता की मृत्यु 4 अप्रैल, 1987 को दिल्ली में हुई।

अज्ञेय की रचनाएं

काव्य संग्रह

- भग्नदूत – 1933
- चिन्ता – 1942
- इत्यलम् – 1946
- हरी घास पर क्षण भर – 1946
- बावरा अहेरी – 1954
- इन्द्रधन रौदे हुए ये – 1957
- अरी ओ करुण प्रभामय – 1959
- आंगन के पार द्वार – 1961
- कितनी नावों में कितनी बार – 1967
- सागरमुद्रा – 1970
- क्योंकि मैं उसे जानता हूं – 1970
- पहले मैं सन्नाटा बुनता हूं – 1974
- महावृक्ष के नीचे – 1977
- नदी के बांक पर छाया – 1981
- ऐसा कोई घर आपने देखा है – 1986
- मरुथल – 1985
- प्रिजन डेज एण्ड अदर पोयम्स (अंग्रेजी कविताएं, 1946)

टिप्पणी

उपन्यास

- शेखर : एक जीवनी, प्रथम भाग (1941)
- शेखर : एक जीवनी, द्वितीय भाग (1944)
- नदी के द्वीप (1951)
- अपने अपने अजनबी (1961)
- बीनू भगत–छायामेखल (दो अपूर्ण उपन्यास 2000 ई.)

कहानी संग्रह

- विपथगा – 1937
- परम्परा – 1944
- कोठरी की बात – 1945
- शरणार्थी – 1948
- जयदोल – 1951
- अमखल्लरी – 1954
- ये मेरे प्रतिरूप – 1961

यात्रावृत्त

- अरे यायावर रहेगा याद – 1953
- एक बूंद सहसा उछली – 1960

निबन्ध

- त्रिशंकु – 1945
- आत्मनेपद – 1960
- हिन्दी साहित्य : एक आधुनिक परिदृश्य – 1967
- आलवाल – 1971
- लिखि कागद कोरे – 1972
- जोग लिखी – 1972
- अद्यतन – 1977
- संवत्सर – 1978
- स्रोत और सेज – 1978
- युगसन्धियों पर – 1981
- धार और किनारे – 1982
- स्मृतिच्छन्दा – 1989

टिप्पणी

गीति नाट्य

- उत्तर प्रियदर्शी – 1967

संस्मरण

- स्मृतिलेखा – 1982
- स्मृति के गलियारों से – 2000 ई.

डायरी

- भवन्ती – 1972
- अन्तरा – 1975
- शाश्वती – 1979
- शेषा – 1995

3.3.1 अज्ञेय : पाठ्यांश – सांप, बावरा अहेरी, जनवरी छब्बीस

1. सांप

सांप!
तुम सभ्य तो हुए नहीं
नगर में बसना
भी तुम्हें नहीं आया।
एक बात पूछूं––(उत्तर दोगे?)
तब कैसे सीखा डंसना–
विष कहां पाया?

संदर्भ : उपर्युक्त पंक्तियां प्रयोगवाद के पुरस्कर्ता कवि अज्ञेय की प्रसिद्ध रचना 'सांप' की हैं। इस कविता में कवि ने आधुनिकता की वजह से शहरी जीवन में फैल रही अमानवीयता की आलोचना की है।

प्रसंग : इन पंक्तियों में कवि सांप से संवाद करते हुए उसके भीतर विष की उपस्थिति की वजह पूछ रहा है। कवि को लगता है संसार की तमाम विषाक्तता आधुनिकता से जन्मे शहरों के भीतर बसने वाले लोगों के भीतर विद्यमान है, फिर यह प्रवृत्ति सांप के भीतर कैसे आ गई है। कवि को लगता है कि अवश्य इस सर्प ने भी इस विष को शहरी लोगों से लिया है। दरअसल अज्ञेय सांप के माध्यम से शहरी लोगों की सर्पिली मानसिकता की आलोचना कर रहे हैं।

व्याख्या : प्रस्तुत कविता में कवि सांप के माध्यम से आधुनिक समय पर व्यंग्य कर रहा है। वह सांप से प्रश्न कर रहा है कि तुम सभ्यता को नहीं जानते, और ना ही शहर के वातावरण से तुम्हारा वास्ता रहा अर्थात शहर में तुमने समय नहीं गुजारा। कवि सर्प से प्रश्न करता है कि जब तुम शहर के बीच नहीं रहे तो तुमने डंसना कैसे सीखा और जहर कहां से पाया

है। कवि का आशय यह है कि आधुनिकता की वजह से निर्मित होने वाले नगरों के मनुष्य स्वार्थों के पीछे इतने अंधे हो गए हैं कि सर्प से भी ज्यादा खतरनाक हो गए हैं। आधुनिकीकरण ने मनुष्य की संवेदना को नष्ट कर दिया है। मनुष्य ही मनुष्य के विरोध में खड़ा हुआ है।

लोक में सांप अमानवीयता का प्रतीक है। उसके विषय में धारणा है कि आप उसे जितना भी दूध पिलाएं वह डंसने की प्रवृति नहीं त्यागेगा। सर्प के विषय में प्रचलित इस आम धारणा का उपयोग करते हुए इस कविता में अज्ञेय ने व्यंग्यात्मक लहजे में नगरीय जीवन पर करारा प्रहार किया है। अज्ञेय के लिए नगर का जीवन और नगर के लोग सांप से भी ज्यादा अविश्वसनीय और खतरनाक हैं। सांप के भीतर विषाक्तता नगर की देन है।

2. बावरा अहेरी

भोर का बावरा अहेरी
पहले बिछाता है आलोक की
लाल–लाल कनियां
पर जब खींचता है जाल को
बांध लेता है सभी को साथ–
छोटी–छोटी चिड़ियां
मंझोले परेवे
बड़े–बड़े पंखी
डैनों वाले डील वाले
डौल के बैडौल
उड़ने जहाज

शब्दार्थ : बावरा– बावला, अहेरी– शिकारी, आलोक– प्रकाश, कनियां– कण, मंझोले– मझला, परेवे– कबूतर।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां 'प्रयोगवाद' और 'नयी कविता' के प्रसिद्ध कवि सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन अज्ञेय की हैं। यह सन् 1954 में प्रकाशित काव्य–संग्रह 'बावरा अहेरी' की केंद्रीय कविता है। इस संग्रह में अज्ञेय की प्रकृतिपरक कविताओं का संकलन किया गया है। इस कविता में सूर्योदय के प्रभाव का वर्णन है। कवि ने सूर्य को 'बावरा अहेरी' अर्थात बावला शिकारी कहा है। हिंदी कविता में सूर्योदय और सूर्यास्त को चित्रित करने की लम्बी परंपरा रही है। अज्ञेय के यहां प्रकृति चैतन्य रूप में चित्रित है। गोचर में अगोचर को देख लेने का भाव भी है। प्रस्तुत कविता में सूर्य का मानवीकरण करते हुए कवि ने उसे एक ऐसे बावले शिकारी के रूप में प्रस्तुत किया है जो अपने जाल में संसार के सुंदर–असुंदर सभी वस्तुओं को समेट लेता है। उसके प्रभाव से कोई नहीं बच पाता। अज्ञेय अपनी कविताओं में प्रकृति के साथ एक रागात्मक रिश्ता विकसित करते हैं। वे प्रकृति का जड़ नहीं बल्कि गतिशील चित्रण करने में विश्वास करते हैं।

प्रसंग : इन पंक्तियों में भोर के सूर्य की पहली किरण के संसार पर पड़ने वाले प्रभाव का गतिशील चित्रण किया गया है। यहां सूर्य को एक ऐसे बावले शिकारी के रूप में वर्णित किया गया है जो अपने जाल में केवल उपयोगी वस्तुओं को ही नहीं फांसता बल्कि अनुपयोगी वस्तुओं को भी घेर लेता है। यह बावला इसीलिए है कि इसे सांसारिकता की समझ नहीं है। इसके लिए सब बराबर है। 'प्रकृति किसी के साथ भेदभाव नहीं करती' इस भाव का ही प्रस्तुत कविता में विस्तार किया गया है।

व्याख्या : कवि कह रहा है कि भोर के सूर्य के प्रकाश की लाल किरणें इस तरह फैलती हैं मानो कोई शिकारी पक्षियों को जाल में फांसने के लिए धीरे–धीरे अनाज के दाने बिखेर रहा हो। भोर के सूर्य की इन किरणों की ओर अनायास ही समस्त संसार आकर्षित होने लगता है। सबसे पहले इसकी ओर चिड़ियां आकर्षित होती हैं। सुबह–सबेरे सबसे पहले चिड़ियों के जागने की आवाज आती है इसलिए कवि को लगता है कि सूर्य रूपी बावले शिकारी के जाल में सबसे पहले वही फंसी। वह कहता है कि सूर्य रूपी बावला शिकारी जब अपने जाल को खींचता है तो छोटी–छोटी चिड़ियों, मंझोले परेवे से लेकर बड़े–बड़े पंखों वाले विशाल जहाज की तरह दिखने वाले पक्षियों तक को अपने जाल में फांस लेता है। तात्पर्य यह कि भोर के सूर्य के आकर्षण में प्रकृति के छोटे से लेकर बड़े तक सभी प्राणी बंध जाते हैं। कोई भी उसके आकर्षण से बच नहीं पाता।

कलस–तिसूल वाले मंदिर–शिखर से ले
तारघर की नाटी मोटी चिपटी गोल घुस्सों वाली
उपयोग–सुंदरी
बेपनाह कायों को–
गोधूली की धूल को, मोटरों के धुंए को भी
पार्क के किनारे पुष्पिताग्र कर्णिकार की आलोक–खची तन्वि
रूप–रेखा को
और दूर कचरा जलाने वाली कल की उद्दण्ड चिमनियों को, जो
धुआं यों उगलती हैं मानो उसी मात्र से अहेरी को
हरा देगी!

शब्दार्थ : कलस– घड़ा, तिसूल– त्रिशूल, बेपनाह– असीम, काया– शरीर, गोधूली– शाम, कर्णिकार– कनियार या अमलतास का फूल, तन्वि– सुकुमार या कोमलांगी स्त्री।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : इन पंक्तियों में भोर के सूर्य की किरण के प्रभाव के विस्तार को दर्शाते हुए कवि प्रदूषण से तबाह हो रही प्रकृति की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहता है।

व्याख्या : बावले सूर्य का प्रभाव संसार की अच्छी–बुरी सभी वस्तुओं पर पड़ता है। उसके सौंदर्य और उपस्थिति से आकर्षित होने से कोई भी अपने आपको रोक नहीं पाता है। कलश और त्रिशूल वाले मंदिर के शिखर से लेकर तारघर की नाटी, मोटी, चिपटी और गोल घुस्सों

टिप्पणी

वाली उपयोग–सुंदरी अर्थात वेश्याओं तक को सूर्य अपने जाल में फांसता है। मंदिर और वेश्या को एक साथ रखकर यहां कवि यह संकेत देना चाहता है कि समाज में खड़े किए गए अंतर प्रकृति या ईश्वर के द्वारा निर्मित नहीं हैं, बल्कि मानव निर्मित हैं। प्रकृति की नजरों में सभी समान है। सूर्य इसलिए भी बावरा अहेरी है क्योंकि वह पार्क के किनारे खड़े अमलतास के सुंदर फूल के साथ–साथ उन लोगों को भी अपने सम्मोहन के जाल में फांसता है जो उसके अस्तित्व को ही मिटा देना चाहते हैं। शाम की धूल, मोटर के धुएं और कचरा जलाने वाली उन उद्दंड चिमनियों को भी बावरा अहेरी अपने जाल में फांसता है, जो धुआं इस तरह उगलती हैं जैसे सूर्य की किरणों को ही पृथ्वी पर आने से रोक देंगी। यहां चिमनियों को 'उद्दंड' कहकर कवि आधुनिकता के आवेग में प्रकृति के साथ मनमाना व्यवहार करने वाले लोगों को उद्दंड कह रहा है। 'कल की उद्दंड चिमनियां' पद से यह ध्वनि निकल रही है कि कल के ये छोकरे युगों से दुनिया को रौशन कर रहे सूर्य को क्या चुनौती देंगे! इसमें कवि प्रकृति की अपराजेयता का बखान कर अपने दिल को संतोष दे रहा है पर कहीं–न–कहीं पर्यावरण के संकट से आशंकित भी है।

बावरे अहेरी रे
कुछ भी अवध्य नहीं तुझे, सब आखेट है:
एक बस मेरे मन–विवर में दुबकी कलौंस को
दुबकी ही छोड़ कर क्या तू चला जाएगा?
लो, मैं खोल देता हूं कपाट सारे
मेरे इस खण्डहर की शिरा–शिरा छेड़ दे
आलोक की अनी से अपनी,
गढ़ सारा ढाहकर ढूह कर दे:
विफल दिनों की तू कलौंस पर मांज जा
मेरी आंखें आंज जा।
कि तुझे देखूं
देखूं और मन में कृतज्ञता उमड़ आये
पहनूं सिरोपे–से ये कनक–तार तेरे–
बावरे अहेरी

शब्दार्थ : अवध्य– जिसको मारा न जा सके, आखेट– शिकार, मन– विवर, दुबकी– छुपी हुई, कलौंस– कालिमा, कपाट– दरवाजा, शिरा– किनारा, आलोक– प्रकाश, अनी– नोक, ढाहकर– गिराना, ढूह– मिट्टी का टीला, मांजना– धो-पोंछकर साफ करना, आंज– आंख में काजल लगाना, सिरोपे– सिर से पांव तक, कनक– सोना।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : इन पंक्तियों में कवि अपने उदास मन के भीतर नवीन ऊर्जा और उत्साह के संचार के लिए सूर्य से आग्रह कर रहा है। प्रकृति से अलग होकर कवि अहम के किले के भीतर कैद हो गया है। वह सूर्य से अहम के इस गढ़ को गिराकर उसे आजाद करने और अपने आप से मिला लेने का निवेदन करता है। कवि सूर्य की पहली किरण से अपने जीवन के जगमगा देने की कामना करता है।

टिप्पणी

व्याख्या : कवि इन पंक्तियों में सूर्य से यह प्रार्थना कर रहा है कि इस जगत में कोई भी ऐसी चीज नहीं है जिसका तुमने शिकार न किया हो। तुम्हारे प्रभाव से कोई बच नहीं पाया है। सबको अपनी आगोश में भरकर उसके भीतर नवीन ऊर्जा का संचार किया है। तुम्हारे लिए तो यह सब महज एक आखेट अर्थात शिकार का खेल है। तब क्या मेरे मन के भीतर दुबके हुए एक विचार को बिना छुए हुए ही चले जाओगे? मैं चाहता हूं कि खण्डहर की तरह उदास और उपेक्षित हो चुके मेरे मन को तुम अपने प्रकाश से आलोकित कर दो। मेरे मन के एक–एक हिस्से को तरंगित कर दो। मेरा मन जो बाह्य दुनिया से दूर होकर एक खंडहर में परिवर्तित हो गया है, आज मैं उसके दरवाजे तुम्हारे लिए खोल रहा हूं ताकि तुम उसमें आनंद की तरंगों का संचार कर दो, और अपने प्रकाश की किरणों से इस खण्डहर के सारे गढ़ों को गिराकर समाप्त कर दो। यहां कवि अपने आत्म का विलयन कर बाह्य प्रकृति या सर्वात्म से मिल जाने की कामना कर रहा है। कवि अपनी चेतना का विस्तार करने की कामना कर रहा है। सूर्य की पहली किरण में एक ऐसी ऊर्जा और उत्साह होता है जो किसी भी उदास, उपेक्षित और पराजित मन के भीतर उम्मीद की एक नयी किरण जगा देता है। कवि सूर्य से कामना कर रहा है कि मेरे मन के भीतर विफल दिनों की जो काली स्मृतियां छायी हुई हैं तुम अपने प्रकाश की किरणों से उसे मांज कर साफ कर दो और मेरी आंखों में नवीन रौशनी भर दो। तात्पर्य यह कि तुम मेरे भीतर जीवन की नवीन ऊर्जा भर दो। तुम्हारे इस अहसान के बदले में जब–जब तुम्हें देखूंगा कृतज्ञता के भाव से भर जाऊंगा और उस भाव में भरकर तुम्हारे सोने की तरह की किरणों को सिर से पांव तक पहनकर प्रसन्न होऊंगा। यहां कवि सूर्य के साथ अपने अस्तित्व के जुड़ाव की कामना कर रहा है।

3. जनवरी छब्बीस

आज हम अपने युगों के स्वप्न को
यह नयी आलोक–मंजूषा समर्पित कर रहे हैं।
आज हम अक्लान्त, ध्रुव, अविराम गति से बढ़े चलने का
कठिन व्रत धर रहे हैं
आज हम समवाय के हित, स्वेच्छया
आत्म–अनुशासन नया यह वर रहे हैं।
निराशा की दीर्घ तमसा में सजग रह हम
हुताशन पालते थे साधना का–
आज हम अपने युगों के स्वप्न को
आलोक–मंजूषा समर्पित कर रहे हैं।

शब्दार्थ : आलोक मंजूषा– प्रकाश की पिटारी, अक्लान्त– जो थका न हो, ध्रुव– अटल, समवाय– समूह, स्वेच्छया– अपनी इच्छा से, वर– स्वीकार करना, दीर्घ– बड़ा, तमसा– अंधकार, हुताशन– अग्नि।

टिप्पणी

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां हिंदी की प्रयोगवादी धारा के पुरस्कर्ता कवि सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन अज्ञेय की कविता 'जनवरी छब्बीस' से ली गई हैं। छब्बीस जनवरी सन् उन्नीस सौ पचास को भारत का संविधान पारित हुआ था। इसी दिन को भारत एक पराधीन राष्ट्र से लोकतांत्रिक गणराज्य में परिवर्तित हो गया था। यह दिन भारतीय जनता के लम्बे संघर्षों के परिणामस्वरूप आया था। प्रस्तुत कविता में अज्ञेय इस दिन की महत्ता का वर्णन कर रहे हैं।

प्रसंग : इन पंक्तियों में कवि ने भारत को एक गणराज्य बनाने के लिए जनता द्वारा किए गए संघर्षों का वर्णन किया है, और लोकतंत्र में जनता के दायित्वों पर प्रकाश डाला है।

व्याख्या : कवि कविता की आरंभिक पंक्तियों में छब्बीस जनवरी की महत्ता को स्थापित करते हुए कहता है कि आज का दिन युगों के सपनों के सच होने का दिन है। भारत का संविधान इस प्राचीन राष्ट्र का केवल एक नवीन विधान नहीं है बल्कि यह भारतीय जन के जीवन को प्रकाशित करने वाला एक नया पिटारा है। यहां यह ध्यान देने योग्य है कि भारत की जनता के भीतर आजादी की कामना तो केवल दो सौ वर्ष पुरानी थी क्योंकि भारत अंग्रेजों का केवल दो सौ वर्ष तक ही गुलाम था, लेकिन भारतीय जनता में सामंती समाज से मुक्ति और अपनी सत्ता की स्थापना की कामना तो युगों से विद्यमान है। इसीलिए कवि ने गणतंत्रता दिवस को युगों का स्वप्न कहा है। 'भारतीय संविधान' को नयी आलोक मंजूषा कहने के पीछे की भावना यह है कि यह भारतीय जनता के भीतर जीवन और जगत को देखने की नवीन दृष्टि प्रदान करता है।

कवि कहता है आज के दिन भारतीय संविधान के लागू होने के साथ ही भारत की जनता ने प्रगति के पथ पर बगैर थके हुए, जनतंत्र के पथ पर अटल रहने और बिना आराम किए हुए चलने का कठिन व्रत धारण किया है। तात्पर्य यह कि भारतीय जनता जनतंत्र की रक्षा और विकास के लिए कटिबद्ध है। कवि आगे कहता है कि आज के दिन हम भारतीयों ने भारतीय जन के कल्याण के लिए अपनी इच्छा से आत्मानुशासन की राह का चयन किया है। जहां सामंतवादी व्यवस्था में जनता की इच्छा का कोई अर्थ नहीं होता, वहां राजा की इच्छा सर्वोपरि होती है, वहीं लोकतंत्र में सत्ता के शीर्ष पर बैठे व्यक्ति को भी जनभावनाओं का ध्यान रखना पड़ता है। लोकतंत्र में राजा के शासन का भय नहीं होता इसलिए जनता को स्वयं ही अनुशासन में रहना होता है।

सुनो हे नागरिक! अभिनव सभ्य भारत के नये जनराज्य के
सुनो! यह मंजूषा तुम्हारी है।
पला है आलोक चिर–दिन यह तुम्हारे स्नेह से, तुम्हारे ही रक्त से।
तुम्हीं दाता हो, तुम्हीं होता, तुम्हीं यजमान हो।
यह तुम्हारा पर्व है।
भूमि–सुत! इस पुण्य–भू की प्रजा, स्रष्टा तुम्हीं हो इस नये रूपाकार के
तुम्हीं से उद्भूत हो कर बल तुम्हारा

टिप्पणी

साधना का तेज–तप की दीप्ति–तुम को नया गौरव दे रही है!
यह तुम्हारे कर्म का ही प्रस्फुटन है।
नागरिक, जय! प्रजा–जन, जय! राष्ट्र के सच्चे विधायक, जय!
हम आलोक–मंजूषा समर्पित कर रहे हैं, और मंजूषा तुम्हारी है
और यह आलोक तुम्हारे ही अडिग विश्वास का आलोक है।

शब्दार्थ : अभिनव– बिल्कुल नया, जनराज्य– जनता का शासन, चिर– प्राचीन, दाता– दान करने वाला, होता– यज्ञ कराने वाला, पुरोहित– यज्ञ कराने वाला व्यक्ति, यजमान– यज्ञ करनेवाला व्यक्ति, भूमि सुत– पृथ्वी का पुत्र, पुण्य भू– पवित्र भूमि, स्रष्टा– रचना करने वाला, उद्भूत– उत्पन्न, बाहर आया हुआ, प्रकट हुआ, प्रस्फुटन– खिलना, व्यक्त होना, विधायक– कार्य संपादन करने वाला; अडिग– अटल।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : कवि इन पंक्तियों में भारत को गणतांत्रिक देश बनाने में भारतीय जनता की भूमिका का गुणगान कर रहा है और उन्हें सचेत कर रहा है कि मनुष्यता के कल्याण के जिस महान उद्देश्य के लिए भारत के संविधान को निर्मित किया गया है और छब्बीस जनवरी को उसे लागू किया गया है उसके लिए निरंतर समर्पित और सचेत रहना होगा।

व्याख्या : इन पंक्तियों में कवि भारत के नागरिकों को संबोधित करते हुए कहता है कि नए और सभ्य भारत के नए जनराज्य के सभी नागरिक मेरी बात को ध्यान से सुनें कि संविधान के रूप में जो यह मंजूषा आज आप लोगों को मिली है वह आपकी ही मेहनत का फल है, इसलिए इस पर आपका ही अधिकार है। यहां कवि छब्बीस जनवरी को गणतंत्र में रूपांतरित होने वाले भारत के लिए अभिनव और सभ्य विशेषण का प्रयोग करता है, जिसका तात्पर्य यह है कि आज के दिन के बाद का भारत अपनी संरचना में नया और अपनी कार्यप्रणाली में सभ्य होगा। अब भारतीय गणतंत्र में अंग्रेजों की तरह जंगल का कानून नहीं चलेगा। आजाद भारत एक सभ्य और नवीन भारत होगा। इस नवीन भारत में फैलने वाला यह प्रकाश लंबे समय से भारत की जनता के स्नेह और रक्त के भीतर पलता रहा है। मतलब यह कि भारत के लोगों ने जनतंत्र के सपने के लिए लंबा संघर्ष किया है और उस सपने के लिए अपनी जान भी दी है। इसलिए कवि उनको संबोधित करते हुए कहता है कि इस जनतंत्र रूपी यज्ञ के आयोजनकर्ता भी तुम हो, उसके पुरोहित भी तुम्हीं हो और उसके यजमान भी तुम्हीं हो। कवि की भावना है कि भारतीय गणतंत्र का वास्तविक निर्माता और अधिकारी भारत की महान जनता है। इसलिए भारत का गणतंत्र दिवस भारत की जनता का दिवस है।

कवि आगे भारत की जनता को पृथ्वी के पुत्र के रूप में संबोधित करते हुए कहता है कि तुम नवीन भारत की पवित्र भूमि की प्रजा हो और यह जो नवीन भारत की रचना हुई है उसको रचने वाले भी तुम ही हो। तुम्हारी शक्ति और तुम्हारी साधना से पैदा हुई ज्वाला के ताप का प्रकाश तुम्हारे भीतर से प्रकट होकर तुमको नया गौरव प्रदान कर रहा है। अर्थात इस नए भारत के निर्माण में इस देश की जनता की ही शक्ति और साधना लगी है और उसी के परिणामस्वरूप आज हमारा गणतंत्र नवीन प्रकाश से प्रकाशित हो रहा है।

टिप्पणी

कवि को लगता है कि भारतीय लोकतंत्र भारत की जनता के कर्म की ही अभिव्यक्ति है। इस सफलता के लिए कवि राष्ट्र के सच्चे निर्माता भारत के नागरिकों और समस्त प्रजा का बार–बार जयगान करता है और भारत के गणतंत्र रूपी प्रकाश के पिटारे को उसी जनता को इस भाव से समर्पित करता है कि इस पर सिर्फ उनका ही हक है। वह कहता है कि यह प्रकाश भारत की जनता के कभी न हिलने वाले विश्वास का प्रकाश है। तात्पर्य यह कि भारत की आजादी और स्वराज्य को प्राप्त करने के प्रति भारतीय जनता के भीतर जो अडिग विश्वास था यदि वह हिल जाता तो भारत कभी भी एक आजाद गणतंत्र नहीं बन पाता।

किन्तु रूपाकार यह केवल प्रतिज्ञा है
उत्तरोत्तर लोक का कल्याण ही है साध्य,
अनुशासन उसी के हेतु है।
यह प्रतिज्ञा ही हमारा दाय है लम्बे युगों की साधना का,
जिसे हम ने धर्म जाना।
स्वयं अपनी अस्थियां दे कर हमीं ने असत् पर सत् की
विजय का मर्म जाना।
सम्पुटित पर हाथ, जिस ने गोलियां निज वक्ष पर झेलीं,
शमन कर ज्वार हिंसा का–
उसी के नत–शीश धीरज को हमारे स्तिमित चिर–संस्कार ने
सच्चा कृती का कर्म जाना।

शब्दार्थ : दाय– बंटवारे में मिला धन, असत– असत्य, सत– सत्य, सम्पुटित– रत्न की पेटी, निज– अपना, वक्ष– छाती, सीना, शमन– बुझाना, दबाना, स्तिमित– जमे हुए।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियों में कवि संविधान और लोकतंत्र के महत्व की ओर हमारा ध्यान आकर्षित कर रहा है। उसका मानना है कि जितने गहरे संघर्ष के द्वारा हमने इसको प्राप्त किया है उसको बचाए रखने के लिए भी हमें उतना ही सचेत रहना चाहिए।

व्याख्या : इन पंक्तियों में कवि भारत की जनता को सचेत करते हुए कहता है कि यह ध्यान रहे कि आज के दिन हम जिस गणतंत्र में प्रवेश कर रहे हैं यह तो केवल आजादी के पहले की प्रतिज्ञा का एक रूपाकार है। इसमें जीवन तो तब आएगा जब आज के दिन हमने जिस संविधान को स्वीकार किया है उस पर आगे चलें और दिन–प्रति–दिन लोक के कल्याण के लिए लगे रहें। कवि का मानना है कि संविधान या गणतांत्रिक व्यवस्था तो महज लोककल्याण का साधन है, इसका साध्य या लक्ष्य तो जनता का कल्याण करना है। इस लोककल्याण का मुख्य हेतु भारतीय जनता का अनुशासन है। तात्पर्य यह कि इस संविधान द्वारा जिस व्यक्ति को जो कार्य दिया गया है वह बिना किसी दबाव और भय के अपनी इच्छा से उसके लिए निरंतर समर्पित रहे और मानव मात्र की भलाई का प्रयास करे।

टिप्पणी

स्वराज्य के लिए हमने जो दीर्घकालिक संघर्ष और साधना की है उसकी देन संविधान के रूप में ली गई हमारी प्रतिज्ञा है। यह गणतंत्र ही आज के बाद हमारा धर्म होगा। किसी और धर्म का हमारे लिए कोई मूल्य नहीं होगा। हमने अपनी प्रेरणा से अपनी अस्थियों का चढ़ावा चढ़ाकर स्वाधीनता संग्राम में असत्य पर विजय पाई है। इसलिए असत्य पर सत्य की विजय और सत्य की महत्ता का मर्म हमसे बेहतर और कोई नहीं जानता। आजादी के दौरान हमने अपने सीने पर दुश्मन की गोलियां झेलीं। उनके द्वारा संचालित हिंसा के तूफान को ठंडा किया। स्वाधीनता आंदोलन के द्वारा अहिंसा की जिस नीति पर सारा देश चला उसका उदाहरण दुनिया में कहीं नहीं मिलता। दुनिया के अन्य देशों में लोकतंत्र का आगमन मध्यकालीन तरीके से हुआ जबकि भारत में लोकतंत्र भी गांधीजी के नेतृत्व में लोकतांत्रिक तरीके से ही आया। ऐसा इसलिए हुआ कि हमारे भीतर विद्यमान प्राचीन संस्कारों ने सत्य की राह पर चलने का हमें धीरज प्रदान किया था। यही कारण है कि हम अपने संविधान के महत्व को जानते हैं। जिसने हिंसा के ज्वार या तूफान को दबाया और दुश्मन की गोलियों को सीने पर झेला है उसी के हाथ आज संविधान रूपी यह खजाना लगा है। स्वाधीनता संग्राम में अपार धैर्य का प्रदर्शन करने वाले लोगों के योगदान के प्रति अपना सिर झुकाते हुए हमने अपने प्राचीन संस्कारों से संचालित होकर उनके गणतंत्र रूपी इस कृति के कर्म को पहचाना है। इन पंक्तियों में कवि गणतंत्र की स्थापना के लिए स्वाधीनता आंदोलन के दौरान संघर्षरत रहे लोगों का आभार प्रकट कर रहा है।

साधना रुकती नहीं, आलोक जैसे नहीं बंधता।
यह सुघर मंजूष भी झर गिरा सुन्दर फूल है पथ–कूल का।
मांग पथ की इसी से चुकती नहीं।
फिर भी बीन लो यह फूल
स्मरण कर लो इसी पथ पर गिरे सेनानी जयी को,
बढ़ चलो फिर शोध में अपने उसी धुंधले युगों के स्वप्न की
जिसे हम आलोक–मंजूषा समर्पित कर रहे हैं।
आज हम अपने युगों के स्वप्न को यह नयी आलोक–मंजूषा
समर्पित कर रहे हैं

शब्दार्थ : सुघर– सुंदर, मंजूष– खजाना

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : इन पंक्तियों में कवि गणतंत्र दिवस के अवसर पर समस्त भारतीयों को सचेत करते हुए कह रहा है कि आज हमें जो अधिकार प्राप्त हो रहे हैं यह हमारा अंतिम पड़ाव नहीं है। यह तो हमारी साधना का आरंभिक चरण है, जिसे हम सहजता से स्वीकार करते हैं, परंतु अभी हमें इस राह में बहुत कुछ प्राप्त करना है।

व्याख्या : कवि कहता है कि इतिहास गवाह है कि मनुष्य की साधना कभी भी विराम नहीं लेती। मनुष्य निरंतर संसार को बेहतर बनाने के लिए साधना करता रहता है, यह प्रक्रिया

टिप्पणी

वैसी ही है जैसे प्रकाश की किरण होती है। जिस प्रकार प्रकाश की किरण का कहीं ठहराव नहीं होता वैसे ही मनुष्य की साधना का कहीं विराम नहीं होता। साधना के पथ पर चलते हुए उससे निकलने वाले परिणाम रूपी कुछ फूल गिरे हुए मिलते हैं लेकिन इससे साधना की मांग या चाह खत्म नहीं हो जाती। अर्थात साधक निष्काम भाव से साधना करता जाता है, साधना के पथ के परिणाम उसके लिए विराम नहीं बनते। गणतंत्र दिवस के अवसर पर यह बातें कहते हुए कवि यह कहना चाहता है कि आज का दिन हमारे लिए हमारी साधना के पथ का एक फूल है लेकिन यह विराम नहीं है। यह तो एक नयी साधना का आरंभ है। इसलिए कवि कहता है कि आज के इस गणतंत्र दिवस रूपी फूल को भी हमें चुन लेना चाहिए और इसकी सुगंध को ग्रहण करते हुए हमें उन स्वाधीनता सेनानियों को स्मरण करना चाहिए जिन्होंने इस फूल को प्राप्त करने के लिए कठोर साधना की और उनमें से कई इस साधना के पथ पर ही बलिदान हो गए। कवि गणतंत्र दिवस को आलोक–मंजूषा अर्थात प्रकाश की एक पिटारी के रूप में चिह्नित करते हुए कह रहा है कि इस प्रकाश के भीतर उपस्थित उस धुंधले युग के स्वप्नों को हमें याद करना चाहिए और उन सपनों को आगे बढ़ाने के लिए हमें निरंतर संघर्ष करना चाहिए। कविता के अंत में कवि युगों से भारतीय मानस में सपनों की तरह पल रहे गणतंत्र दिवस रूपी नवीन आलोक–मंजूषा को आम जन को समर्पित करने की घोषणा कर रहा है।

3.3.2 प्रयोगवाद और अज्ञेय

हिन्दी साहित्य में प्रगतिवाद के बाद के काव्य आंदोलन को 'प्रयोगवाद' कहा जाता है। प्रयोगवाद दो शब्दों 'प्रयोग' और 'वाद' से बना है। प्रयोग शब्द का अभिप्राय 'कर के देखना' है और 'वाद' शब्द का अभिप्राय सिद्धान्त है। अर्थात प्रयोगवाद का अर्थ हुआ कि जो पहले से है, उसका परीक्षण करते हुए पुनः उसका ज्ञान प्राप्त करने वाला सिद्धान्त या मत। प्रयोग एक प्रक्रिया है, परिणाम नहीं। प्रयोग के द्वारा ही हम पुरानी मान्यताओं का परीक्षण करते हैं और अपने युग के अनुसार उसकी प्रासंगिकता का निर्धारण करते हैं। समय के साथ पुरानी मान्यताओं का परीक्षण आवश्यक होता है। प्रयोग की यह प्रक्रिया जीवन, समाज और साहित्य सभी क्षेत्रों में आवश्यक होती है।

साहित्य के क्षेत्र में देखें तो प्रयोग की यह प्रक्रिया पहले भी चलती रही है। किन्तु इस प्रक्रिया का स्पष्ट सिद्धान्त या मत का प्रतिपादन 'प्रयोगवाद' के साथ आरम्भ हुआ। प्रयोगवाद का आरम्भ 1943 में अज्ञेय के संपादन में प्रकाशित 'तार सप्तक' से माना जाता है। 'तार सप्तक' में उस समय के सात महत्त्वपूर्ण कवियों की रचनाएं संकलित की गयी थीं। इन कवियों में गजानन माधव मुक्तिबोध, नेमिचन्द्र जैन, भारतभूषण अग्रवाल, प्रभाकर माचवे, गिरिजाकुमार माथुर, रामविलास शर्मा और अज्ञेय थे। इन कवियों की रचनाओं में तत्कालीन समय की विडंबनाएं, भ्रष्टाचार, मध्यवर्गीय कुंठाओं के प्रति अवज्ञा, राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन की चेतना आदि भाव व्यक्त हो रहे थे। 'तार सप्तक' के कवियों ने अपनी कविताओं के कथ्य और शिल्प में कई सारे मौलिक प्रयोग कर हिन्दी कविता को एक नई दिशा दी। जो 'तार सप्तक' की लोकप्रियता का आधार बना। 'तार सप्तक' की प्रसिद्धि के बाद अज्ञेय ने 1951 ई. 'दूसरा सप्तक', 1959 में 'तीसरा सप्तक' और 1979 में 'चौथे सप्तक' का संपादन कर हिन्दी कविता में 'प्रयोगवाद' के महत्व को स्थापित कर दिया। 'दूसरा

टिप्पणी

सप्तक' के कवि थे– भवानीप्रसाद मिश्र, शकुन्तला माथुर, हरिनारायण व्यास, शमशेर बहादुर सिंह, नरेश मेहता, रघुवीर सहाय। 'तीसरा सप्तक' के कवियों में प्रयागनारायण त्रिपाठी, कीर्ति चौधरी, मदन वात्स्यायन, केदारनाथ सिंह, कुंवर नारायण और सर्वेश्वरदयाल सक्सेना थे। तीसरा सप्तक के प्रकाशन तक आते–आते प्रयोगवाद की धूम कुछ कम होने लगी थी। इसका स्थान दूसरे काव्य आंदोलनों ने ले लिया था। इसलिए 1979 में प्रकाशित 'चौथे सप्तक' की कोई विशेष चर्चा हिन्दी जगत में नहीं हुई।

इन तीनों 'सप्तकों' के प्रकाशन में अज्ञेय की भूमिका और महत्व उल्लेखनीय रहा। अज्ञेय ने हिन्दी कविता के भाव–पक्ष एवं कला–पक्ष में प्रयोग और नवीनता को समय की मांग बताया। प्रयोगवादी काव्य में प्रयोग को ही काव्य–जीवन माना गया, पुरानी परम्पराओं को खारिज किया गया, कविता की पूर्व की सफलताओं एवं उपलब्धियों को बदले हुए समय में निरर्थक घोषित कर दिया गया, कविता का उत्स जनःजीवन को माना गया, कविता में साधारणीकरण के स्थान पर पुनः विशिष्टीकरण को मान्यता दी गई और नये शब्दों एवं नये प्रतीकों–बिम्बों के प्रयोग को महत्व दिया गया।

अज्ञेय जीवन और रचना दोनों स्तरों पर प्रयोग के पक्षधर थे। स्वयं अज्ञेय ने अपनी कविता में नये उपमान, नये प्रतीक, नये बिम्बों का विलक्षण प्रयोग किया है। साथ ही वे अपने समय को उसकी सम्पूर्णता में समझने और अपने प्रयोगों द्वारा उसे अपनी कविता में प्रस्तुत करने की कोशिश अज्ञेय के साथ–साथ लगभग सभी प्रयोगवादी कवियों की विशेषता रही है। अज्ञेय ने 'तार सप्तक' की भूमिका में अपने साथ के कवियों को अन्वेषी माना, एक राह के अन्वेषी। इसीलिए अज्ञेय और उनके साथ के कवियों ने प्रेम, प्रकृति और पीड़ा को एकदम नये रूप में प्रस्तुत कर हिन्दी कविता के दायरे का विस्तार किया। अज्ञेय ने नये सत्य की खोज, साधारणीकरण एक नयी समस्या, रस और बौद्धिकता तथा परम्परा का प्रश्न जैसे सैद्धान्तिक प्रश्नों के साथ प्रयोगवाद के वैचारिक आधारों की स्थापना की है।

प्रयोगवाद की मूल विशेषताओं को अज्ञेय की कविता के माध्यम से इस प्रकार समझा जा सकता है–

पीड़ा की अनुभूति : अज्ञेय मध्यवर्ग के जीवन और उस जीवन की पीड़ा को उसकी सम्पूर्णता में समझते हैं तथा अपनी कविता में उसे अभिव्यक्त करते हैं। अज्ञेय इस तथ्य से परिचित हैं कि मध्यवर्ग अपने लिए बहुत सारे छोटे–बड़े रंगीन सपने पालता है। उन्हें पूरा करने के लिए जी तोड़ परिश्रम करता है। किन्तु जीवन–जगत में फैले विद्रूप, आर्थिक विषमता के कठोर यथार्थ से टकराकर उसके सारे सपने टूट जाते हैं। मध्यवर्गीय व्यक्ति के टूटे ख्वाबों की पीड़ा को अज्ञेय अपनी कविता में दर्ज करते हैं–

दुःख सबको मांजता है

और

चाहे स्वयं सबको मुक्ति देना वह न जाने, किन्तु

जिनको मांजता है

उन्हें यह सीख देता है कि सबको मुक्त रखें।

टिप्पणी

साथ ही मध्यवर्ग की अति आत्मविश्वास और उससे उपजी पीड़ा का बहुत ही स्वाभाविक चित्रण करते हुए अज्ञेय ने लिखा है कि–

मेरी भुजाएं टूट गई हैं
क्योंकि मैंने उनकी परिधि में
मेघों को बांध लेना चाहा था।

अनुभव की प्रामाणिकता पर बल : प्रयोगवाद ने अनुभव की प्रामाणिकता को काव्य के लिए श्रेष्ठ माना। दूसरे का अनुभव जीवन में और रचना में कभी व्यवस्थित ढंग से काम नहीं आता। इसीलिए प्रयोगवादी कवि कविता के कथ्य के रूप में उन्हीं अनुभवों को महत्व देते हैं जो स्वयं कवि के भोगे हुए यथार्थ से निकले हों। अनुभव की प्रामाणिकता के सन्दर्भ में अज्ञेय अपनी कविता में कहते हैं कि–

जितना तुम्हारा सच है उतना ही कहो।

मोहभंग और यथार्थ का आग्रह : प्रयोगवादी कविता यथार्थ के प्रति आग्रह और पुराने काव्य संस्कारों, सामाजिक मूल्यों से मोहभंग की कविता है। प्रयोगवाद ने स्वयं को छायावादी भावुकता और कल्पना से बाहर निकाल कर यथार्थ की नयी जमीन की खोज की। अब जीवन–जगत के वे सन्दर्भ भी कविता के विषय बने, जिनका अब तक कविता के सुन्दर प्रदेश में प्रवेश सम्भव नहीं हो पाया था। प्रयोगवादी कवि इस बात पर विश्वास करते थे कि अच्छा–बुरा, पाप–पुण्य इन सबका महत्व सापेक्षिक है। यथार्थ के प्रति आग्रह के कारण ही अज्ञेय अपनी एक कविता में वल्मीक पर बैठे क्रौंच को प्रिय के विरह से पीड़ित नहीं दीमकों की खोज में बैठा बताते हैं–

क्रौंच बैठा हो कभी वल्मीक पर
तो मत समझ
वह अनुष्टुप बांचता है संगिनी के स्मरण में
जान ले, दीमकों की टोह में है।

विद्रोह भावना और क्षण का महत्व : विद्रोह का भाव प्रयोगवाद के स्वभाव में है। प्रयोगवाद के प्रवर्तक कवि अज्ञेय की कविता में भी विद्रोह की अनुगूंज व्याप्त रहती है। जो कुछ असत्य है, अशिव है उसके प्रति विद्रोह का भाव, शोषण और अराजकता का साहस के साथ अस्वीकार अज्ञेय की कविता का चिर परिचित स्वर है। अज्ञेय का विद्रोह प्रगतिवादी कविता के विद्रोह की तरह प्रखर और कठोर मात्र न होकर उनमें प्रखरता और कठोरता के साथ एक खास तरह की कोमलता भी है–

सुनो तुम्हें ललकार रहा हूं, सुनो घृणा का गान!
तुम! जे बड़े–बड़े गद्दी पर ऊंची दुकानों में
उन्हें कोसते हो जो भूखे मरते हैं खानों में,

इसी तरह प्रयोगवाद समय के समूचे कालखण्ड की जगह 'क्षण' को महत्व देता है। 'क्षण' को महत्व देने का अर्थ है लघु को महत्व देना। प्रयोगवाद की इस मान्यता को काव्य में प्रस्तुत करते हुए अज्ञेय कहते हैं–

हमें किसी कल्पित अजरता का मोह नहीं।
आज के विविक्त अद्वितीय इस क्षण का
....
शाश्वत हमारे लिए वही है।

नये काव्य–शिल्प की प्रतिष्ठा : प्रयोगवाद प्रयोग का आग्रही है। प्रयोगवादी कवियों की कविताओं में कथ्य की नवीनता, युगानुकूल भाषा और शिल्प पर अत्यधिक जोर है। जिसमें वे नये उपमानों, प्रतीकों, बिम्बों का अभिनव प्रयोग करते हैं। उनकी मान्यता है कि समय के साथ कविता के कथ्य में परिवर्तन आता है। इसीलिए कविता के कथ्य में आये परिवर्तन को अभिव्यक्त करने के लिए नये प्रतीकों, बिम्बों का प्रयोग करते हैं। प्रयोगवादी कविता के इस आग्रह को व्यक्त करते हुए अज्ञेय अपनी प्रसिद्ध कविता 'कलगी बाजरे की' में कहते हैं कि–

अगर मैं तुमको
ललाती सांझ के नभ की अकेली तारिका
अब नहीं कहता
या शरद के भोर की नीहार–न्हायी कुंई,
टटकी कली चम्पे की
वगैरह तो
नहीं कारण कि मेरा हृदय उथला या कि सूना है
या कि मेरा प्यार मैला है।
बल्कि केवल यही:
ये उपमान मैले हो गये हैं।
देवता इन प्रतीकों के कर गये हैं कूच
कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है।

इसी तरह प्रयोगवादी कवि अपनी बात कहने के लिए नये प्रतीकों का प्रयोग करते हैं। जैसे, अज्ञेय अपने काव्य में मोह भंग के लिए रेत, जीवन के विस्मय के लिए कांच की टंकी में पली सोन मछली, शहरी मनुष्य की चेतना के लिए सांप, नये आलोक के लिए बावरा अहेरी आदि प्रतीकों का प्रयोग करते हैं। नये प्रतीकों के साथ ही प्रयोगवादी कवि नये बिम्बों का भी प्रयोग करते हैं। भाषा–प्रयोग की दृष्टि से प्रयोगवादी कवि बहुत मुक्त हैं। उनकी भाषा में संस्कृतनिष्ठ हिन्दी, तद्भव शब्द, देशज शब्द, विदेशी भाषाओं के शब्दों का भी बहुतायत प्रयोग मिलता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रयोगवाद और अज्ञेय का सम्बन्ध सर्जक और सर्जना का सम्बन्ध है। प्रयोगवाद की वैचारिक भूमि और उसकी चेतना के निर्माण में अज्ञेय का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। एक तरह से अज्ञेय प्रयोगवाद के प्रतिनिधि कवि हैं।

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

4. अज्ञेय का पूरा नाम क्या है?
5. अज्ञेय ने 'तारसप्तक' का सम्पादन कब किया था?
6. सही–गलत बताइए–
   (क) अज्ञेय को 'आंगन के पार द्वार' काव्य संग्रह के लिए भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार दिया गया।
   (ख) अज्ञेय का देहान्त 4 अप्रैल, 1987 को दिल्ली में हुआ।

3.4 मुक्तिबोध : सामान्य परिचय

टिप्पणी

मुक्तिबोध का पूरा नाम गजानन माधव मुक्तिबोध है। मुक्तिबोध हिन्दी साहित्य के प्रमुख कवि हैं। मुक्तिबोध का जन्म ग्वालियर (मध्यप्रदेश) के श्यौपुर में 13 नवम्बर, 1917 को हुआ। मुक्तिबोध के पिता माधव मुक्तिबोध इंस्पेक्टर थे, जो उज्जैन में इसी पद से सेवानिवृत्त हुए। मुक्तिबोध की माता बुंदेलखण्ड के एक किसान परिवार से थीं। जिनका मुक्तिबोध पर गहरा प्रभाव था। मुक्तिबोध चार भाई थे। मुक्तिबोध से छोटे भाई शरतचन्द्र मराठी भाषा में लिखी गयी अपनी कविताओं से काफी प्रसिद्ध हुए। मुक्तिबोध की मां पढ़ी–लिखी थीं, जिनके कारण परिवार में शिक्षा और ज्ञान के प्रति सकारात्मक माहौल था। मुक्तिबोध की प्रारम्भिक शिक्षा उज्जैन में हुई। जीवन के प्रारम्भिक दिनों में ही मुक्तिबोध अपने भीतर अपने समय, युग और विचारों को लेकर उथल–पुथल का भाव महसूस करने लगे थे। मुक्तिबोध की दुनिया प्रकृति और मध्यवर्गीय जीवन के कटु यथार्थ से निर्मित हो रही थी।

मुक्तिबोध की रुचि और जिज्ञासाएं उन्हें अपने समय की बौद्धिक गतिविधियों और हलचलों तक ले गयीं। उनका मन मनोविज्ञान, तर्कशास्त्र, दर्शनशास्त्र की गुत्थियों में अधिक लगता था। धीरे–धीरे उनकी पहुंच श्रेष्ठ विदेशी लेखन तक हुई। जिससे उनकी सोच–समझ का दायरा बढ़ा। चेतना के कई अन्य आयाम खुले। मुक्तिबोध ने सामाजिक–पारिवारिक बंधनों की परवाह न करते हुए 1938 में प्रेम विवाह किया। विवाह के बाद मुक्तिबोध को अब आर्थिक मोर्चे पर भी संघर्ष करना पड़ गया। 1938 में ही वे इंदौर के होलकर कॉलेज से स्नातक कर उज्जैन के मार्डन स्कूल में अध्यापक नियुक्त हुए।

अपने आर्थिक एवं वैचारिक संघर्षों के साथ मुक्तिबोध शुजालपुर, कलकत्ता, इन्दौर, बम्बई, बंगलौर, बनारस, जबलपुर आदि शहरों में भटकते, नौकरियां करते रहे। स्कूल की अध्यापकी से लेकर वायुसेना तक में नौकरी की। पत्रकारिता की। पार्टी में कार्य किया। 1949 में नागपुर आये। सूचना तथा प्रकाशन विभाग, आकाशवाणी में काम किया। उस समय के चर्चित पत्र 'नया खून' में कॉलम लिखा। किन्तु परिवार की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी। उन दिनों मुक्तिबोध आर्थिक एवं रचनात्मक दोनों तरह के संकटों से जूझ रहे थे। मित्रों के आग्रह पर 1954 में हिन्दी में एम.ए. किया, और 1958 में दिग्विजय महाविद्यालय, राजनांद गांव में प्राध्यापक हो गये। कॉलेज की नौकरी के बाद परिवार की आर्थिक स्थिति कुछ संभली। किन्तु उनका रचनात्मक जद्दोजहद चलता रहा। अन्ततः लम्बी बीमारी के बाद 11 सितम्बर, 1964 को दिल्ली में मुक्तिबोध का निधन हो गया।

मुक्तिबोध की रचनाएं

काव्य संग्रह

- चांद का मुंह टेढ़ा है
- *भूरी–भूरी खाक धूल*

आलोचना

- कामायनी : एक पुनर्विचार
- भारत : इतिहास और संस्कृति
- नई कविता का आत्म संघर्ष तथा अन्य निबंध
- नये साहित्य का सौंदर्यशास्त्र
- एक साहित्यिक की डायरी

कथा साहित्य

- काठ का सपना
- विपात्र
- सतह से उठता

3.4.1 मुक्तिबोध : पाठ्यांश – मुझे कदम–कदम पर

मुझे कदम–कदम पर
चौराहे मिलते हैं
बांहें फैलाए!!
एक पैर रखता हूं
कि सौ राहें फूटतीं,
मैं उन सब पर से गुजरना चाहता हूं,
बहुत अच्छे लगते हैं
उनके तजुर्बे और अपने सपने....
सब सच्चे लगते हैं,
अजीब–सी अकुलाहट दिल में उभरती है,
मैं कुछ गहरे में उतरना चाहता हूं,
जाने क्या मिल जाए!!

शब्दार्थ : तजुर्बा– अनुभव

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां 'नयी कविता' के दौर के प्रसिद्ध कवि गजानन माधव मुक्तिबोध की कविता 'मुझे कदम कदम पर' से ली गयी हैं। मुक्तिबोध आधुनिक सभ्यता की त्रासदी को सर्वाधिक प्रामाणिकता और सूक्ष्मता से काव्यात्मक अभिव्यक्ति देने वाले मार्क्सवादी कवि हैं। इस कविता में कविता की रचना प्रक्रिया पर प्रकाश डाला गया है। मुक्तिबोध का मानना है कि विषय चयन से लेकर उसके निर्वाह तक में कवि सचेत रुप से सक्रिय रहता है। विषयों के चयन में आभिजात्य सौंदर्याभिरुचि और पूंजीवादी मानस के प्रभुत्व को चुनौती देते हुए कवि कहता है कि भले ही आपके पास विषयों की कमी हो पर मेरे पास तो अपार विषय हैं, क्योंकि समाज में अपार कष्ट है। आभिजात्य मानस के कवियों के पास विषय का अभाव होता है, इसलिए वे कृत्रिम विषयों पर कविताएं लिखते हैं। इसकी मूल वजह यह है कि उनके पास ऐसी सामाजिक दृष्टि नहीं है जो समाज की पीड़ा को महसूस कर सके। व्यक्तिवाद से ग्रसित ये लोग आत्म के बाहर देख ही नहीं पाते, जबकि समाजवादी–यथार्थवाद की विचार–परंपरा का अनुसरण करने वाले मुक्तिबोध के आत्म का इतना प्रसरण है कि उन्हें

टिप्पणी

टिप्पणी

'प्रत्येक पत्थर में चमकता हीरा' और 'हर एक छाती में आत्मा अधीरा' दिखाई पड़ता है। इसलिए कवि कहता है कि आज की मुश्किल यह नहीं है कि कवियों के पास विषय की कमी है बल्कि उसका आधिक्य ही उसे सताता है। मुक्तिबोध वस्तुपरक सत्य–परायणता और वास्तविक विश्वदृष्टि के विकास को कलाकार के लिए आवश्यक मानते हैं। उनका मानना है कि कलाकार को अनिवार्य रूप से शोषक शक्तियों के खिलाफ और शोषित मनुष्यता का पक्षधर होना चाहिए। वर्तमान पूंजीवादी समाज में विशाल मानवता शोषण का शिकार है और मुट्ठी भर लोगों के पास दुनिया की अधिकांश पूंजी है। तब ऐसे में कवि की जिम्मेदारी बहुत अधिक बढ़ जाती है।

प्रसंग : इन पंक्तियों में कवि अपनी रचना प्रकिया का उद्घाटन करते हुए कहता है कि काव्य–विषय की तलाश या विशिष्ट जीवनानुभवों को प्राप्त करने के लिए मुझे इंतजार नहीं करना पड़ता। मुझे प्रत्येक कदम पर कुछ नया जीवनानुभव मिलता है और मैं उसके भीतर उतर जाना चाहता हूं। इन पंक्तियों में आभिजात्य सौंदर्याभिरुचि पर व्यंग्य करते हुए सामान्य सी दिखने वाली वस्तु को भी महत्व प्रदान करने का आग्रह किया गया है।

व्याख्या : प्रस्तुत कविता में कवि ने मनुष्य को सृजन पथ पर बढ़ने की प्रेरणा दी है। वह कहता है कि जब मैं अपने कर्तव्य के रास्ते में बढ़ता हूं तो मुझे हर एक कदम पर कई रास्ते मिलते हैं और मैं उन सब पर से गुजरना चाहता हूं। कवि का तात्पर्य यह है कि जब मैं कविता लिखने के लिए आगे बढ़ता हूं तो मुझे प्रत्येक क्षण अनेक काव्य–विषय आकर्षित और उद्वेलित करते हुए मिलते हैं और मैं उन सभी विषयों पर कविता लिखना चाहता हूं। सबसे पहली मुश्किल तो काव्य–विषय के चयन में आती है लेकिन जब मैं उनमें से किसी एक पर आगे बढ़ता हूं तो आगे चलते ही उसके भीतर भी अनेक राहें मिलती हैं। मतलब यह कि उस विषय पर कविता लिखते समय विचार, भाव, बिंब, प्रतीक आदि के स्तर पर मन में अनेक विचार कौंधते हैं। पर कवि विचार, अनुभव, संवेदना और शिल्प के इस बहुलता एवं वैविध्य से बेचैन नहीं होता बल्कि आश्वस्त होता है और कहता है कि ये सब मुझे बहुत अच्छे लगते हैं। इन सबसे गुजरने पर मिलने वाले अनुभवों और सपनों में एक किस्म की सत्यता महसूस होती है। अर्थात आशा के कई स्रोत आगे बढ़कर मेरा स्वागत करते हैं। मझे ये उत्साह भरे रास्ते बहुत अच्छे लगते हैं। जीवन की विसंगतियों से जूझने में ये मेरा मार्गदर्शन करते हैं। इन अनुभवों को मैं अपने विकास के लिए इस्तेमाल करता हूं। ये सभी मुझे बहुत आत्मीय और सच्चे लगते हैं। मेरे हृदय में ये नवीन विचार बेचैनी पैदा करते हैं जिससे मुझे कुछ नया सोचने और करने की प्रेरणा मिलती है। इसलिए मैं कुछ और नया जानना चाहता हूं क्योंकि जितना ज्ञान प्राप्त करूंगा उतना ही अपने को बृहत्तर बना सकूंगा। जब भी हम स्व की सीमाओं से बाहर निकलते हैं और खुद को बृहत्तर समाज से जोड़ते हुए उसका विस्तार करते हैं तो हमारी विश्वदृष्टि समृद्ध होती है। यह विश्वदृष्टि हमारी समझ में गहराई लाती है और कविता को व्यापक आयाम देती है। मुक्तिबोध का मानना है कि कवि जितनी गहराई से जनता से जुड़ेगा उतनी ही उसकी संवेदना विस्तृत होती जाएगी। संवेदना के विस्तार के साथ ही उसका ज्ञान भी बढ़ेगा और उसकी कविता भाव के स्तर पर गहरी होती जाएगी। अंतिम पंक्तियों में मुक्तिबोध कहते हैं कि काव्य–विषय को गहराई से जानने के क्रम में मेरे दिल में अजीब किस्म की अकुलाहट उभरती है। यह अकुलाहट नवीन सत्य के

टिप्पणी

उद्घाटन का है, इसलिए इस सत्य को जानने के लिए वह उसके भीतर और अधिक उतरना चाहता है कि जाने क्या मिल जाए। वास्तव में कवि सत्य का अन्वेषक होता है। काव्य–विषय के भीतर वह जितनी गहराई से जुड़ता जाता है उतना ही वह नवीन सत्य को प्राप्त करता जाता है।

मुझे भ्रम होता है कि प्रत्येक पत्थर में
चमकता हीरा है,
हर एक छाती में आत्मा अधीरा है,
प्रत्येक सुस्मित में विमल सदानीरा है,
मुझे भ्रम होता है कि प्रत्येक वाणी में
महाकाव्य पीड़ा है,
पलभर में मैं सबमें से गुजरना चाहता हूं,
प्रत्येक उर में से तिर आना चाहता हूं,
इस तरह खुद को ही दिए–दिए फिरता हूं,
अजीब है जिंदगी!!
बेवकूफ बनने की खातिर ही
सब तरफ अपने को लिए–लिए फिरता हूं,
और यह देख–देख बड़ा मजा आता है
कि मैं ठगा जाता हूं...
हृदय में मेरे ही
प्रसन्नचित्त एक मूर्ख बैठा है
हंस–हंसकर अश्रुपूर्ण, मत्त हुआ जाता है,
कि जगत... स्वायत्त हुआ जाता है।

शब्दार्थ : अधीरा– धैर्यहीन, सुस्मित– मुस्कान भरे चेहरे के पीछे, विमल– निर्मल, शुद्ध, सदानीरा– साल भर जल से भरी रहने वाली नदी, महाकाव्य पीड़ा– ऐसी पीड़ा जिसमें समस्त मानवता को द्रवित कर लेने की क्षमता हो, गुजरना– भोगना, महसूस करना, तिर आना– तैर कर पानी से बाहर निकल आना, अश्रुपूर्ण– आंसुओं से भरा हुआ, मत्त– पागल, जगत– संसार, स्वायत्त– जिसका अपने पर अधिकार हो।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : इन पंक्तियों में कवि अपने भीतर के श्रेष्ठता बोध के ऊपर तंज कस रहा है। उसको लगता है कि मैं कुछ रचता नहीं हूं बल्कि यह समाज है जो मेरे भीतर सृजन की चेतना पैदा करता है। इसमें काव्य–लेखन की पारंपरिक धारणा को अस्वीकार कर इस मान्यता की स्थापना है कि आम आदमी के जीवन में महाकाव्य की संभावना विद्यमान है।

टिप्पणी

व्याख्या : कवि आगे कहता है कि जीवन के इस पथ पर मुझे भ्रम होता है कि प्रत्येक पत्थर एक चमकता हीरा है। तात्पर्य यह कि जिन लोगों को हम पत्थर की तरह अनुपयोगी और जड़ समझते हैं उनके भीतर भी संवेदना की बेजोड़ चमक है। उनकी आत्मा में पवित्रता और चेतना में एक चमक है। कवि को लगता है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति की छाती में एक अधीर आत्मा है जो अभिव्यक्ति के लिए छटपटा रही है। मुक्तिबोध को लगता है कि एक कवि के रूप में उनका दायित्व है कि वे उसकी पीड़ा को काव्यात्मक परिणति तक पहुंचाए। कवि समाज के बीच से अपनी कविता के विषय निकाल रहा है। इसी क्रम में वह हर मनुष्य की पीड़ा को समझ रहा है और उनके दुःख से दुखी हो रहा है। वह बड़े व्यापक स्तर पर समाज को समझने का प्रयास करता है। उसको लगता है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति की मुस्कान में संवेदना और भावना का एक पवित्र प्रवाह है। उसकी मुस्कान उसके संघर्षों को व्यक्त करती है। इसलिए कवि को लगता है कि समाज की कोई भी आवाज उपेक्षित करने योग्य नहीं है बल्कि उसके भीतर उतरने की आवश्यकता है। महाकाव्य की प्राचीन अवधारणा को चुनौती देते हुए मुक्तिबोध कहते हैं कि मुझे समाज के आभिजात्य वर्ग की वाणी में ही महाकाव्य का स्वर नहीं सुनायी नहीं पड़ता बल्कि समाज के उपेक्षित–से–उपेक्षित जन की वाणी में भी महाकाव्यात्मक पीड़ा सुनाई पड़ती है। कवि की आकांक्षा है कि वह पलभर में ही इन समस्त पीड़ाओं को आत्मसात कर ले। वह जीवन के विस्तृत फलक को महसूस करना चाहता है। वह प्रत्येक मनुष्य के ह्रदय में डूब कर निकलना चाहता है। इस विशाल संसार के हर एक अनुभव को लेखक महसूस करना चाहता है, अनुभव के जिस संसार को अब तक नहीं जी सका है उनको पाने के लिए वह अबतक संघर्ष कर रहा है। इसीलिए वह अहं का विलयन कर अपने आपको सबको दे देने के लिए तत्पर है ताकि अन्य के जीवनानुभव का साधारणीकरण कर सके। कुल मिलाकर, कवि कला की पारंपरिक मान्यता को अस्वीकार करते हुए अपनी काव्य–संवेदना का विस्तार और काव्यात्मक अभिव्यक्ति को नवीन ऊंचाई प्रदान करना चाहता है। इसीलिए उसे जिन्दगी बहुत रहस्यपूर्ण लगती है। कई बार उसे इस जगत के लोगों द्वारा धोखा भी मिलता है पर अपने आपको ठगा हुआ देखकर भी लेखक को आनंद की प्राप्ति हो रही है।

काव्य–लेखन की एक धारा यह मानती है कि साहित्य समाज को दिशा दिखाने का काम करता है। इस विचार को अपनाते हुए कुछ लोग खुद को समाज और आम जन से श्रेष्ठ मानने लगते हैं और अहंकार से भर उठते हैं। मुक्तिबोध इस मनःस्थिति का विरोध करते हुए कहते हैं कि मैं चारों तरफ तो बेवकूफ बनने के लिए घूमता रहता हूं। मुझे लोगों को ज्ञान देने में उतना आनन्द नहीं आता जितना उनके द्वारा खुद को ठगा जाने में। उनके समक्ष खुद को चरम अज्ञानी के रूप में प्रस्तुत कर मैं खुद को आनन्दित महसूस करता हूं। कवि कहता कि असल में मेरे दिल के भीतर एक प्रसन्नचित मूर्ख बैठा है जो लोगों द्वारा किए जाने वाले इस आचरण से हंसते–हंसते लोट–पोट हो जाता है। वह इतना हंसता है कि उसकी आंखों में आंसू भर जाते हैं। उसकी यह बेबाक और बेपरवान हंसी इसलिए भी है कि उसे लगता है कि अब यह दुनिया समझदार हो गयी है और वह अब अपने पैरों पर खड़ा हो सकने में समर्थ है।

टिप्पणी

कहानियां लेकर और
मुझको कुछ देकर ये चौराहे फैलते
जहां जरा खड़े होकर
बातें कुछ करता हूं
.... उपन्यास मिल जाते
दुःख की कथाएं, तरह–तरह की शिकायतें
अहंकार–विश्लेषण, चारित्रिक आख्यान,
जमाने की जानदार सूरें व आयतें
सुनने को मिलती हैं!
कविताएं मुसकरा लाग–डांट करती हैं
प्यार की बात करती हैं।
मरने और जीने की जलती हुई सीढ़ियां
श्रद्धाएं चढ़ती हैं!!
घबराए प्रतीक और मुसकाते रूप–चित्र
लेकर मैं घर पर जब लौटता......
उपमाएं, द्वार पर आते ही कहती हैं कि
सौ बरस और तुम्हें
जीना ही चाहिए।
घर पर भी, पग–पग पर चौराहे मिलते हैं,
बांहे फैलाए रोज मिलती हैं सौ राहें,
शाखा–प्रशाखाएं निकलती रहती हैं,
नव–नवीन रूप–दृश्यवाले सौ–सौ विषय
रोज–रोज मिलते हैं....
और, मैं सोच रहा कि
जीवन में आज के
लेखक की कठिनाई यह नहीं कि
कमी है विषयों की
वरन यह कि आधिक्य उनका ही
उसको सताता है,
और, वह ठीक चुनाव कर नहीं पाता है!!

शब्दार्थ : अहंकार विश्लेषण– किसी के अहंकार की वजहों पर विचार करना, चारित्रिक आख्यान– किसी के चरित्र को निरुपित करने वाली कहानी, सूरें– छन्द, कविता, आयतें– कुरान के वाक्य, प्रतीक– किसी वस्तु, चित्र, विशिष्ट चिह्न को प्रतीक कहते हैं जो संबंध, सादृश्यता या परंपरा द्वारा किसी अन्य वस्तु का प्रतिनिधित्व करता है, उपमा– अर्थालंकार का एक भेद जिसमें दो वस्तुओं में भेद होते हुए भी धर्मगत समता दिखाई जाए।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : मुक्तिबोध ने इन पंक्तियों में वर्तमान पूंजीवादी समाज में कवि के सामने प्रस्तुत होने वाली चुनौतियों का वर्णन किया है। उनका कहना है कि आज के कवि के सामने इतने विषय हैं, और उन विषयों के इतने आयाम हैं कि उन सबको समेटते हुए कविता लिखना उसके लिए एक बहुत ही जटिल कार्य हो गया है।

व्याख्या : कवि अंत में कहता है कि समाज के ये चौराहे मुझे कुछ कहानियां देकर मेरी नजर में और विस्तृत हो जाते हैं और जिस भी जगह पर मैं खड़ा होकर किसी से दो चार–बातें कर लेता हूं, मुझे एक उपन्यास मिल जाता है। कवि का मूल तात्पर्य यह है कि रचनाएं इस संसार में हर जगह फैली हुई हैं, रचनाकार को बस उसे बटोरना है। सामान्य–से–सामान्य दिखने वाले व्यक्ति के भीतर भी एक महान कहानी या उपन्यास का प्लॉट पसरा पड़ा है। अपनी बात को विस्तार देते हुए वह कहता है कि जब कोई रचनाकार आम जन से जुड़ता है तो उसे दुख की अनेक कथाएं, तरह–तरह की शिकायतें सुनने को मिलती हैं। उसे तमाम लोगों के अहंकार का दर्शन होता है और कई चरित्रों की कहानियां भी सुनने को मिलती हैं। इस संसार के लोगों के जीवन से निर्मित होने वाली कविताएं और कुरान की आयतों की तरह पवित्र उनके कथन भी सुनने को मिलते हैं। कहने का मतलब है कि कविता के अनेकानेक पक्ष समाज से ही जन्म लेते हैं इसलिए कवि को जीवन से सीधे जुड़ने की जरूरत है। यदि कोई रचनाकार आम जन से दूर है तो वह महान कविता की रचना नहीं कर सकता। आम जन के अनुभव–कथन की तुलना सूरें और आयतों से कर कवि ने साधारण जन की महत्ता की स्थापना की है। उसके लिए आम आदमी उपेक्षा का नहीं बल्कि आदर का पात्र है।

काव्यात्मक शैली में कवि कहता है कि चौराहे पर मेरी मुलाकात कविताओं से हुई जो मुझसे प्यार जताते हुए बात करती हैं और मुझे डांटती भी हैं। यहां कवि कविता का मानवीकरण कर रहा है। मनुष्य की श्रद्धा का मानवीकरण करते हुए वह कहता है कि मनुष्य की श्रद्धा जीवन की सीढ़ियां चढ़ रही है। इन सीढ़ियों में जीवन और मृत्यु दोनों की सीढ़ियां हैं। तात्पर्य यह कि कवि ने जीवन के प्रति लोगों की श्रद्धा को जीते–मरते दोनों रूपों में देखा है। यही कारण है कि मुक्तिबोध की कविता अंधेरे से आरंभ होकर उजाले में समाप्त होती है। उनके भीतर की उम्मीद कहीं समाप्त नहीं होती। कवि कहता है कि अपने आसपास के जीवन से जुड़कर जब मैं घर की ओर लौटता हूं अर्थात बाह्य संसार के अनुभवों के साथ जब मैं अपने आप की ओर मुड़ता हूं तो तमाम घबराए हुए प्रतीक, मुसकाते रूप–चित्र, उपमाएं मुझसे निवेदन करती हैं कि तुम्हें अभी सौ बरस और जीना चाहिए, क्योंकि तुम्हारे पास जीवनानुभव का जितना खजाना भरा पड़ा है उसको अभिव्यक्त करने के लिए कम–से–कम इतना समय तो चाहिए। इन पंक्तियों में कवि अपनी जिजीविषा शक्ति और काव्यानुभव की व्यापकता को वाणी दे रहा है।

कविता के अंत में मुक्तिबोध कहते हैं कि काव्य–रचना की प्रक्रिया के दौरान आभ्यांतरिक संसार में एक गहरा संघर्ष निरंतर सक्रिय रहता है कि किस विषय का चयन किया जाए और उसके साथ न्याय कैसे किया जाए। आधुनिक समाज इतना जटिल है कि यदि किसी एक विषय पर ध्यान केंद्रित करते हैं तो उसके भीतर से एक अन्य विषय निकल पड़ता है। सामंतवादी समाज सरल समाज था जबकि पूंजीवादी समाज बेहद जटिल समाज है। इसमें एक चीज का सिरा दूसरे से जुड़ा हुआ है। इस जटिलता को ही कवि इन पंक्तियों में अभिव्यक्त कर रहा है। अंत में मुक्तिबोध लगभग घोषणा के स्वर में कहते हैं कि आज के कवि की मुश्किल यह नहीं है कि उसके पास विषय का अभाव है बल्कि उसकी कठिनाई यह है कि उसके सामने इतने सारे विषय हैं और वे इतने जटिल हैं कि कवि उनके साथ न्याय नहीं कर पाता है।

3.4.2 मुक्तिबोध की काव्यगत विशेषताएं

गजानन माधव मुक्तिबोध आधुनिक हिन्दी कविता के विशिष्ट कवि हैं। वे अपनी कविताओं के अभिनव कथ्य, नवीन शिल्प के लिए अद्वितीय हैं। मुक्तिबोध युग की बेचैनी के कवि हैं। वे अपनी कविताओं में सामाजिक असमानता, राजनीतिक विद्रूपता, पूंजी का दुश्चक्र, राजनीति और पूंजी का गठजोड़, मध्यवर्गीय मनुष्य का स्वार्थ और कायरता आदि पर अपनी बेबाक राय रखते हैं। वस्तुतः मुक्तिबोध एक खुशहाल और शोषणविहीन समाज चाहते थे, जिसमें सबको अपना मुक्ततम और श्रेष्ठतम विकास करने का अवसर मिले। उन्हें वर्ग–संघर्ष द्वारा वर्गविहीन समाज की स्थापना पर अपार भरोसा था। मुक्तिबोध की काव्यगत विशेषताओं को निम्नलिखित प्रकार से समझा जा सकता है–

संवेदनशील समाजबोध : मुक्तिबोध के समाजबोध का वैचारिक आधार मार्क्स, गांधी और तिलक जैसे विचारकों के विचार और विभिन्न क्रान्तिकारी आंदोलन हैं। मुक्तिबोध की निगाह में समाज के वे हिस्से हैं जो कई कारणों से मुख्यधारा से बाहर हाशिये की जिन्दगी जी रहे हैं। मुक्तिबोध प्रत्येक प्रकार के शोषण और अराजकता के खिलाफ हैं। उनकी कविता में भारत के वे सारे लोग, वस्तुएं, घटनाएं आते हैं, जो भारत के भूगोल में तो हैं किन्तु उनका जिक्र कहीं नहीं है। विभिन्न कलाओं के कलाकार, कारखाने, धुआं उगलती चिमनियां, खण्डहर, नारकीय जिन्दगी जीते हुए लोग, श्रमिक, मजदूर, कमरतोड़ मेहनत करतीं स्त्रियां, मिस्त्री, विटामिन की गोलियों पर जिन्दा लोग, व्यभिचारी का बिस्तर बनता हुआ मध्यवर्ग, कवि, साहित्यकार, राजनेता, पूंजीपति, मशहूर हत्यारा डोमा जी उस्ताद, व्यवसायी और ठेले खोमचे वाले लोग आदि की एक पूरी दुनिया उनकी कविताओं में उपस्थित है। उदाहरण के लिए 'अंधेरे में' कविता का एक दृश्य देखा जा सकता है–

विचित्र प्रोसेशन,
गम्भीर क्विक मार्च...
कलाबत्तूवाली काली जरीदार ड्रैस पहने
चमकदार बैण्ड–दल,

....

टिप्पणी

संगीन नोकों का चमकता जंगल,
चल रही पदचाप, तालबद्ध दीर्घ पांत
टैंक–दल, मोर्टार, आर्टिलरी, सन्नद्ध,
धीरे–धीरे बढ़ रहा जुलूस भयावना।

अन्तर–बाह्य का द्वन्द्व : मुक्तिबोध द्वन्द्वात्मकता को एक विकासशील सिद्धान्त तक के रूप में लेते हैं। अपनी कविता में वे अन्तर–बाह्य के द्वन्द्वों का संतुलित सामंजस्य प्रस्तुत करते हैं। मनुष्य एक चिंतनशील प्राणी है। वह उसके भीतर बाह्य जगत की तमाम घटनाएं गुत्थियों के रूप में घुमड़ती रहती हैं। व्यक्ति और समाज के यथार्थ के बीच एक द्वन्द्व चलता रहता है। यदि इन द्वन्द्वों के बीच एक संतुलित सामंजस्य नहीं होगा तो वह वैयक्तिक और सामाजिक विघटन का कारण बनेगा। मुक्तिबोध अपनी कविता में कहते हैं कि–

जितना ही तीव्र है द्वन्द्व,
क्रियाओं का, घटनाओं का
बाहरी दुनिया में
उतनी ही तेजी से भीतरी दुनिया में
चलता है द्वन्द्व।

श्रमशील मनुष्यता का यथार्थ चित्रण : मुक्तिबोध की सहानुभूति श्रमशील जनता के प्रति है। मुक्तिबोध न सिर्फ श्रमशील जनता के जीवन की विडंबनाओं का चित्रण करते हैं, बल्कि वे श्रमशील जनता के श्रम को बेहतर दुनिया के आश्वासन के रूप में देखते हैं। वे श्रम को और उसमें रत मनुष्य को अपनी प्रेरणा के रूप में चित्रित करते हैं। अपनी प्रसिद्ध कविता 'विचार आते हैं' में श्रम को सृजन की बुनियाद बताते हैं–

विचार आते हैं
लिखते समय नहीं
बोझ ढोते वक्त पीठ पर
सिर पर उठाते समय भार
परिश्रम करते समय
चांद उगता है व
पानी में झलमलाने लगता है
हृदय के पानी में।

परम्परा के प्रति विद्रोह का भाव : मुक्तिबोध विचारक कवि हैं। उनकी रचनाओं में चिन्तन की सुव्यवस्थित शृंखला मौजूद है। वे विचारों की, समाज की और साहित्य की परम्परा को जस का तस स्वीकार नहीं करते, बल्कि उसे तर्क की कसौटी पर रख कर उसकी पुनर्व्याख्या करते हैं। यदि पहले से चली आ रही परम्परा का नये सन्दर्भों में कोई विशेष महत्व नहीं रहता तो वे उस परम्परा से विद्रोह करते हैं। 'मैं तुमसे दूर हूं' कविता में वे इसी तरह का एक परम्पराविहीन प्रयोग करते हुए कहते हैं–

टिप्पणी

असफलता का धूल, कचरा ओढ़े हूं
इसलिए कि वह चक्करदार जीनों पर मिलती है
छल, छद्म धन की
किन्तु मैं सीधी–सादी पटरी–पटरी दौड़ा हूं
जीवन की।
फिर भी मैं अपनी सार्थकता से खिन्न हूं
विष से अप्रसन्न हूं
इसलिए कि जो है उससे बेहतर चाहिए
पूरी दुनिया साफ करने के लिए मेहतर चाहिए
वह मेहतर मैं हो नहीं पाता
पर एक रोज कोई भीतर चिल्लाता है
कि कोई काम बुरा नहीं
बशर्ते कि आदमी खरा हो
फिर भी मैं उस ओर अपने को ढो नहीं पाता।
रिफ्रिजरेटरों, विटैमिनों, रेडियोग्रेमों के बाहर की
गतियों की दुनिया में
मेरी वह भूखी बच्ची मुनिया है शून्यों में
पेटों की आंतों में न्यूनों की पीड़ा है
छाती के कोषों में रहितों की व्रीड़ा है।

पूंजीवाद के नाश और शोषणमुक्त वर्गविहीन समाज का स्वप्न : मुक्तिबोध का समस्त लेखन शोषणमुक्त और वर्गविहीन समाज की स्थापना का सृजनात्मक प्रयत्न है। मुक्तिबोध का यह विश्वास है कि जब तक दुनिया में शोषण है, हिंसा है, उत्पीड़न है, तब तक वर्गविहीन समाज की स्थापना नहीं हो सकती। मुक्तिबोध शोषण और हिंसा के मूल में पूंजी की भूमिका को उत्तरदायी मानते हैं। पूंजी के संस्थानिक स्वरूप ने ही पूंजीवाद को जन्म दिया है। इसलिए वे शोषण और उत्पीड़न से मुक्त समाज की स्थापना और वर्गविहीन समाज के सपने को साकार करने के लिए पूंजीवाद के नाश की कल्पना करते हैं। अपनी एक कविता 'पूंजीवादी समाज के प्रति' में वे कहते हैं कि–

तेरे रक्त में भी सत्य का अवरोध
तेरे रक्त से भी घृणा आती तीव्र
तुझको देख मितली उमड़ आती शीघ्र
तेरे ह्रास में भी रोग–कृमि हैं उग्र
तेरा नाश तुझ पर क्रुद्ध, तुझ पर व्यग्र।

मेरी ज्वाल, जन की ज्वाल होकर एक
अपनी उष्णता में धो चलें अविवेक
तू है मरण, तू है रिक्त, तू है व्यर्थ
तेरा ध्वंस केवल एक तेरा अर्थ।

टिप्पणी

फैंटेसी का प्रयोग : मुक्तिबोध के लिए साहित्य सृजन एक सांस्कृतिक कर्म है। समाज के मूल्य और मान्यताएं इस सांस्कृतिक कर्म का निर्धारण करती हैं। मुक्तिबोध बाह्य जगत के यथार्थ को जो उनके हृदय में भिन्न–भिन्न प्रकार की प्रतिक्रियाओं को जन्म देती है, उसे व्यक्त करने के लिए 'फैंटेसी' का प्रयोग करते हैं। फैंटेसी के माध्यम से वे अपने मानसिक उद्वेलन को कविता में प्रस्तुत करते हैं। फैंटेसी गूढ़ बिम्बों, प्रतीकों की एक योजना है। इसका समान अर्थ है 'स्वप्न–कथा'। मुक्तिबोध फैंटेसी को कल की वास्तविकता मानते हैं। वे फैंटेसी के माध्यम से मानसिक संकल्प–विकल्प, आशंका, संत्रास, वैचारिक द्वन्द्व को अभिव्यक्त करते हैं। फैंटेसी मानसिक प्रक्रिया है किन्तु वह सामाजिक यथार्थ से जुड़कर उनकी रचना प्रक्रिया को विशिष्ट बना देती है। मुक्तिबोध ने फैंटेसी का प्रयोग अपने काव्य में कर इसे लोकप्रिय बनाया। उनकी एक कविता 'दिमागीगुहा का ओरांगउटांग' फैंटेसी का श्रेष्ठतम उदाहरण है–

स्वप्न के भीतर स्वप्न,
विचारधारा के भीतर और
एक अन्य
सघन विचारधारा प्रच्छन्न!!
कथ्य के भीतर एक अनुरोधी
विरुद्ध विपरीत,
नेपथ्य संगीत!!
मस्तिष्क के भीतर एक मस्तिष्क
उसके भी अन्दर एक और कक्ष
कक्ष के भीतर
एक गुप्त प्रकोष्ठ और
कोठे के सांवले गुहान्धकार में
मजबूत...सन्दूक
दृढ़, भारी–भरकम
और उस सन्दूक के भीतर कोई बन्द है
यक्ष
या कि ओरांगउटांग हाय
अरे! डर यह है...

न ओरांग...उटांग कहीं छूट जाय,
कहीं प्रत्यक्ष न यक्ष हो।

टिप्पणी

भाषा, प्रतीक और बिम्बों का अभिनव प्रयोग : मुक्तिबोध की कविताओं की भाषा उनके कथ्य के अनुरूप है। उनकी काव्य–भाषा जीवनानुभवों को सफलता के साथ अभिव्यक्त करती है। मुक्तिबोध अभिव्यक्ति को परम लक्ष्य मानते हुए 'अंधेरे में' कविता में कहते हैं–

अब अभिव्यक्ति के सारे खतरे
उठाने ही होंगे।
तोड़ने होंगे ही मठ और गढ़ सब।

मुक्तिबोध अपने जटिल और त्रासद अनुभवों को व्यक्त करने के लिए भाषा की शक्ति और उसकी समस्त संभावनाओं का दोहन करते हैं। हिन्दी के नये और अप्रचलित शब्दों के साथ ही बोलियों के शब्द, अंग्रेजी, उर्दू, संस्कृत, मराठी आदि भाषाओं के शब्दों का सार्थक प्रयोग करते हैं। भाषा प्रयोग के सन्दर्भ में मुक्तिबोध की इस लोकतांत्रिक पद्धति के कारण कथ्य की सम्प्रेषणीयता में एक विशिष्ट प्रवाह लक्षित किया जा सकता है। मुक्तिबोध अपने भावों को व्यक्त करने के लिए कई प्रकार के अप्रचलित शब्दों का प्रयोग करते हैं, जैसे, रक्ताल, अंगारी, अंधियाला, रोगिला, सटर–पटर, धड़–धड़ाम, लहरीली, आकाशी, दुकेला आदि। मुक्तिबोध ने कथ्य के अनुसार अंग्रेजी, उर्दू के भी शब्दों का प्रयोग किया है, जैसे, इलेक्ट्रान, रेडियो–एक्टिव, मार्शल लॉ, क्विक मार्च, मोर्टार, क्रास एक्जामिन हिम थॉरोली, आर्टिलरी, प्रोसेशन जैसे अंग्रेजी शब्द तो वहीं बेजुबां, बेबस, ईमान, निगाह, मनसबदार, शाइर, अल गजाली, इब्ने सिन्ना, अलबरूनी, आलिमो फाजिल, सिपहसालार, इनकार, खुद–मुख्तार, सल्तनत, जिरहबख्तर, शहंशाह, आलमगीर, शाही मुकाम, दरबारे–आम, खुदगर्ज, बख्तरबंद, तजुर्बा, सिपहसालार, संजीदा, बुर्ज, बेनाम, बेमालूम, मुहैया, लश्कर जैसे उर्दू–फारसी के शब्द उनकी कविता में मिलते हैं। साथ ही उनकी कविता में गणित, विज्ञान, दर्शन, भूगोल, इतिहास आदि अनुशासनों के शब्द भी प्रसंगों के अनुसार आये हैं।

मुक्तिबोध ने अपनी कविता में अभिनव बिम्बों का प्रयोग किया है। मुक्तिबोध ने बिम्बों का प्रयोग वातावरण निर्माण और सम्प्रेषणीयता के लिए किया है। उनकी कविता में ऐन्द्रिय बिम्ब, दृश्य बिम्ब, नाद बिम्ब, और अप्रस्तुत बिम्ब आदि मिलते हैं।

'ब्रह्मराक्षस' कविता में दृश्य बिम्ब का एक उदाहरण जिसके माध्यम से मुक्तिबोध ने रहस्यमय वातावरण की सृष्टि की है–

शहर के उस ओर खंडहर की तरफ
परित्यक्त सूनी बावड़ी
के भीतरी
ठण्डे अंधेरे में
बसी गहराइयां जल की...
सीढ़ियां डूबी अनेकों

उस पुराने घिरे पानी में..

समझ में आ न सकता हो

कि जैसे बात का आधार

लेकिन बात गहरी हो।

टिप्पणी

इसी तरह मुक्तिबोध की कविताओं में प्रतीकों का बहुतायत प्रयोग है। वे प्रतीकों का चयन आधुनिक जीवन–शैली, यान्त्रिक सभ्यता, संस्कृति के क्षेत्र, मिथक और सम्पूर्ण भाव तथा वस्तु जगत से करते हैं। मिथकों से ब्रह्मराक्षस, वटवृक्ष आदि, इतिहास से तिलक, गांधी आदि।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मुक्तिबोध अपनी कविताओं में निहित वैचारिकी, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनीतिक चेतना, शोषणमुक्त वर्गविहीन समाज की स्थापना का स्वप्न तथा अपनी अभिनव भाषा, बिम्ब और प्रतीक योजना को लेकर हिन्दी के विशिष्ट कवि हैं।

3.5 सर्वेश्वरदयाल सक्सेना : सामान्य परिचय

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना आधुनिक हिन्दी के महत्वपूर्ण रचनाकार हैं। सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का जन्म बस्ती (उत्तर प्रदेश) में 15 सितम्बर, 1927 को हुआ। इनके पिता का नाम श्री विश्वेश्वरदयाल था। सर्वेश्वरदयाल के पिता मध्यवर्गीय परिवार से थे, किन्तु वे मध्यवर्गीय संस्कारों से सर्वथा मुक्त थे। जिसका प्रभाव बालक सर्वेश्वर पर भी पड़ा। परिवार के शैक्षिक वातावरण में प्रारम्भिक शिक्षा के बाद सर्वेश्वरदयाल ने इलाहाबाद से स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके बाद उनके भीतर ज्ञान के प्रति लगाव बढ़ता ही गया। इसी के बाद उन्होंने 1949 में एम.ए. किया।

अपनी प्रगति जांचिए

7. मुक्तिबोध ने किस चर्चित पत्र में कॉलम लिखा?
8. मुक्तिबोध का जन्म कब और कहां हुआ था?
9. सही–गलत बताइए–
   (क) मुक्तिबोध ने सामाजिक–पारिवारिक बंधनों की परवाह न करते हुए 1938 में प्रेम विवाह किया था।
   (ख) मुक्तिबोध का निधन दिल का दौरा पड़ने से 11 सितम्बर 1966 को हुआ था।

औपचारिक शिक्षा के बाद सर्वेश्वरदयाल रोजी–रोजगार की दिशा में आगे बढ़े। थोड़ी–बहुत खोजबीन के बाद उन्होंने इलाहाबाद में ए.जी. कार्यालय में प्रमुख डिस्पैचर का कार्य करना प्रारम्भ किया। ए.जी. कार्यालय में वे 1955 तक उसी पद पर कार्य करते रहे। डिस्पैचर के कार्य से सर्वेश्वर के लिए आर्थिक सहयोग तो हो रहा था, किन्तु उस कार्य की नीरस प्रकृति सर्वेश्वर के रचनात्मक मानस के अनुकूल नहीं थी। कार्य की एकरसता को तोड़ने और सृजनात्मकता के दबावों के बीच सर्वेश्वरदयाल अपने लिए रोजगार की दूसरी संभावनाओं को टटोलते रहे। फलस्वरूप उनकी नियुक्ति दिल्ली में ऑल इंडिया रेडियो के हिन्दी समाचार विभाग में सहायक संपादक के पद पर हुई। वे 1960 तक उक्त पद पर कार्य करते रहे। शहर और कार्य की बदली हुई प्रकृति उनके रचनात्मक लगावों के लिए कारगर सिद्ध हुई। रेडियो की उस नौकरी में एक बार उनका स्थानान्तरण लखनऊ में हुआ, जहां वे 1964 तक रहे। आकाशवाणी भोपाल में भी वे कुछ समय तक रहे थे।

सर्वेश्वरदयाल प्रखर रचनात्मक मानस के व्यक्ति थे। कवि मन के साथ ही उनके भीतर सामाजिक सरोकारों के प्रति भी गहरी आकुलता थी। उसी समय अपने जमाने की सर्वाधिक चर्चित साहित्यिक पत्रिका 'दिनमान' का प्रकाशन शुरू हुआ। सर्वेश्वरदयाल इसे

टिप्पणी

अपने लिए एक रचनात्मक अवसर मानते हुए रेडियो की नौकरी से त्याग–पत्र देकर 1964 में ही 'दिनमान' से जुड़ गये। यहीं से सर्वेश्वरदयाल का पत्रकारिता का जीवन शुरू हुआ। पत्रकारिता में कार्य करते हुए सर्वेश्वरदयाल ने यह महसूस किया कि हिन्दी में बाल–साहित्य की स्थिति बहुत अधिक खराब है। अपनी इस विशिष्ट सोच के चलते सर्वेश्वरदयाल एक बाल पत्रिका निकालने की कोशिश करते रहे। उनका स्वप्न 1982 में साकार हुआ जब वे 'पराग' पत्रिका के संपादक बनाये गये। 'पराग' पत्रिका के संपादन काल में सर्वेश्वरदयाल ने बाल–साहित्य और बाल–पत्रकारिता के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया। सर्वेश्वरदयाल सक्सेना को साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ।

साहित्य और पत्रकारिता के साथ अपने सामाजिक सरोकारों एवं चेतना को आकार देते हुए सर्वेश्वरदयाल का निधन दिल्ली में 23 सितंबर, 1983 को हो गया।

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की रचनाएं

काव्य–संग्रह

- काठ की घंटियां – 1959
- बांस का पुल – 1963
- एक सूनी नाव – 1966
- अज्ञेय द्वारा 1959 में संपादित तीसरा सप्तक में संकलित कविताएं– सं. अज्ञेय, 1959
- गर्म हवाएं – 1966
- कुआनो नदी – 1973
- जंगल का दर्द – 1976
- खूंटियों पर टंगे लोग – 1982

कथा–साहित्य

- पागल कुत्तों का मसीहा (लघु उपन्यास) – 1977
- सोया हुआ जल (लघु उपन्यास) – 1977
- उड़े हुए रंग – (उपन्यास) यह उपन्यास सूने चौखटे नाम से 1974 में प्रकाशित हुआ था।
- कच्ची सड़क – 1978
- अंधेरे पर अंधेरा – 1980

नाटक

- बकरी – 1974
- लड़ाई – 1979
- अब गरीबी हटाओ – 1981
- रूपमती बाज बहादुर – 1976

टिप्पणी

यात्रा संस्मरण

- कुछ रंग कुछ गंध – 1979

बाल कविता

- बतूता का जूता – 1971
- महंगू की टाई – 1974

बाल नाटक

- भों–भों खों–खों – 1975
- लाख की नाक – 1979

संपादन

- शमशेर (मलयज के साथ – 1971)
- रूपांबरा – 1980 (संपादक – अज्ञेय के साथ सहायक संपादक)
- अंधेरों का हिसाब – 1981
- रक्तबीज – 1977

3.5.1 सर्वेश्वरदयाल सक्सेना : पाठ्यांश – सुहागिन का गीत, सौन्दर्य बोध

1. सुहागिन का गीत

यह डूबी–डूबी सांझ
उदासी का आलम :
मैं बहुत अनमनी
चले नहीं जाना बालम।
ड्योढ़ी पर पहले दीप जलाने दो मुझको
तुलसी जी की आरती सजाने दो मुझको,
मन्दिर में घण्टे, शंख और घड़ियाल बजे
पूजा की सांझ संझौती गाने दो मुझको,
उगने तो दो पहले उत्तर में ध्रुव तारा,
पथ के पीपल पर कर आने दो उजियारा,
पगडंडी पर जल, फूल–दीप घर आने दो,
चरणामृत जाकर ठाकुर जी का लाने दो,
यह डूबी–डूबी सांझ उदासी का आलम,
मैं बहुत अनमनी चले नहीं जाना बालम।

टिप्पणी

शब्दार्थ : सांझ– शाम, आलम– दशा, अनमनी– मन का न लगना, ड्योढ़ी– दहलीज, पौरी, घड़ियाल– बड़ा घंटा, सांझ– शाम, संझौती– शाम के समय का गीत, ध्रुव तारा– उत्तर दिशा में शाम के समय उगने वाला तारा, चरणामृत– भगवान के चरणों में चढ़ाया जाने वाला द्रव्य, ठाकुरजी– ईश्वर, बालम– पति, प्रिय, स्वामी।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की कविता 'सुहागिन का गीत' से उद्धृत हैं। सुहागिन वह स्त्री होती है जिसका पति जीवित होता है। इस कविता में पति वियोग की आशंका से ग्रस्त एक सुहागिन स्त्री की मनोदशा का आत्मकथात्मक शैली में वर्णन किया गया है। सुहागिन स्त्री अनेकानेक बहानों के द्वारा अपने पति को परदेश जाने से रोकना चाहती है। परिवार और प्रकृति की गतिविधियों की ओर पति का ध्यान आकृष्ट कर सुहागिन स्त्री उसे सांसारिकता से निकालकर अपने निश्छल प्रेम के पाश में बांधना चाहती है। यह कविता लोक गीत की शैली में लिखी गई है। लोकगीतों में त्रासदी और उत्सव का सुंदर समन्वय होता है। यह विशेषता इस गीत में भी उपस्थित है। उत्तर भारत में पति के परदेश जाने की घटनाएं आम थीं। इसलिए प्रिय के प्रवास और उसके विछोह में लिखे गए गीतों की दीर्घकालीन परंपरा हिंदी पट्टी में मिलती है। यह गीत उसी परंपरा को समृद्ध करता है। इस कविता का वैशिष्ट्य यह है कि इसमें नायिका केवल अपनी वेदना का वर्णन कर ही पति को रोकने का प्रयास नहीं कर रही है बल्कि उसे गतिशील पारिवारिक जीवन और सम्मोहक प्राकृतिक परिवेश में भी बांधना चाहती है।

प्रसंग : इन पंक्तियों में सुहागिन स्त्री शाम के समय की उदासी में अपने पति का साथ चाहती है और इस बात से आशंकित है कि कहीं इस उदासी की मनोदशा में ही मेरा पति मुझे छोड़कर परदेश न चला जाय। भारतीय नारी शाम के समय तमाम कार्य करती है। यह कार्य शाम की उदासी से बचने और रात के स्वागत के लिए होता है। इन पंक्तियों में नायिका पति से निवेदन करती है कि शाम को किए जाने वाले तमाम कामों को कर लेने दो फिर तुम्हें जाना हो तो जाना। इन कामों के सम्पन्न होने के पहले ही मुझे छोड़कर मत चले जाना।

व्याख्या : प्रस्तुत पंक्तियों में सुहागिन स्त्री अपने पति से मनुहार कर रही है कि आज की शाम बहुत ही खोयी–खोयी सी है। मेरा मन उदास है। मैं अनमनी हूं। मेरा मन कहीं लग नहीं रहा है। ऐसे समय में मुझे तुम्हारी जरूरत है। मैं तुम से आग्रह करती हूं कि इस उदास शाम में तुम मुझे छोड़ कर कहीं चले मत जाना। असल सुहागिन स्त्री वह है जिसका पति उसकी हर मुश्किल में उसके साथ खड़ा रहता है। सुहागिन स्त्री की चाह होती है कि उसका सुहाग अधिक–से–अधिक समय उसके साथ गुजारे, पर इस स्त्री की कठिनाई है कि उसको डर है कि उसका पति उसे छोड़कर कहीं चला न जाए। इसलिए वह उससे मनुहार कर रही है कि जाना हो तो फिर कभी चले जाना पर इस उदास शाम में मुझे छोड़कर कहीं मत जाना।

नायिका कहती है कि शाम की इस बेला में मुझे बहुत सारे काम हैं। अभी मुझे अपनी देहरी पर शाम का दीपक जलाना है। आंगन में लगे तुलसी जी के पौधे के लिए आरती सजाना है। मंदिर के घण्टे, शंख और घड़ियाल बज जाने के बाद शाम की पूजा करते हुए संझौती गाना है। अपने कामों के बाद शाम के समय प्रकृति में होने वाले बदलावों की ओर

टिप्पणी

ध्यान दिलाते हुए नायिका कहती है कि अभी तो उत्तर दिशा में ध्रुवतारा को उगना है और चांद की रोशनी में गांव की गलियों में खड़े पीपल के पेड़ पर उसका प्रकाश आना है। गांव के रास्तों पर जल की बौछार होने दो और पूजा के बाद मंदिर से फूल–दीप और घर के देवता ठाकुर जी के लिए फूल–दीप लाने दो। तब तक के लिए तो मेरे बालम रुक जाओ। शाम के समय घर के इन कामों की याद दिलाते हुए एक ओर जहां नायिका इस बहाने पति को कुछ देर अपने साथ और रोकना चाहती है वहीं दूसरी ओर उसे घर के मोह में बांधना भी चाहती है। इन पंक्तियों में शाम के समय होने वाले कामों का जो जिक्र सुहागिन स्त्री ने किया है वह किसी भी घर के लिए आम घटना है।

यह काली–काली रात
बेबसी का आलम,
मैं डरी–डरी–सी
चले नहीं जाना बालम।
बेले की पहले ये कलियां खिल जाने दो,
कल का उत्तर पहले इनसे मिल जाने दो,
तुम क्या जानो यह किन प्रश्नों की गांठ पड़ी?
रजनीगन्धा से ज्वार सुरभि की आने दो,
इस नीम–ओट से ऊपर उठने दो चन्दा
घर के आंगन में तनिक रोशनी आने दो,
कर लेने दो तुम मुझको बन्द कपाट जरा
कमरे के दीपक को पहले सो जाने दो,
यह काली–काली रात बेबसी का आलम,
मैं डरी–डरी–सी चले नहीं जाना बालम।

शब्दार्थ : सुरभि– खुशबू, तनिक– थोड़ा सा, बेबसी– मजबूरी, कपाट– दरवाजा।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : इन पंक्तियों में नायिका काली अंधेरी रात की बेबसी और उससे उत्पन्न भय का वर्णन करते हुए पति से अपने साथ रहने का आग्रह करती है। इस अंश में रात्रिकाल में प्रकृति के मादक वातावरण के वर्णन के माध्यम से नायिका अपने मन में उठ रहे काम भाव का वर्णन कर रही है।

व्याख्या : शाम के बाद रात की स्थितियों का वर्णन करते हुए नायिका कहती है कि यह रात बहुत अंधियारी है और इसमें मैं खुद को बेबस महसूस कर रही हूं। इस अंधेरी रात में तुम्हारे अभाव की आशंका से ही डरी–डरी सी हूं। ऐसी स्थिति में मैं तुझसे निवेदन करती हूं कि इस अंधेरी रात में मुझे छोड़कर चले मत जाना। बेला नामक फूल की कलियों की ओर संकेत करती है कि इन कलियों को खिल जाने दो, क्या पता प्रकृति ने इसमें किस

टिप्पणी

रहस्य को छुपा रखा है। तुम्हें तो यह भी पता नहीं कि प्रकृति के किन प्रश्नों की गांठ के रूप में बेला की यह कली बनी है। सांकेतिक रूप से नायिका कहना चाह रही है कि मेरे मन के भीतर भी न जाने कितने सवालों की गांठ बनी हुई है लेकिन तुम्हारे पास उसको सुनने का समय ही नहीं है। आज की रात अगर रुक जाओ तो क्या पता बेले की यह कली भी खिल जाए और मेरा मन भी खुल जाए। नायिका कहती है कि अभी थोड़ी रात तो होने दो और रजनीगंधा नामक फूल से खुशबू का ज्वार तो उठने दो। नीम नामक वृक्ष की ओट से आसमान में चांद को खिलने तो दो। रात की इस बेला में मुझे अपने कमरे का दरवाजा बंद तो कर लेने दो और कमरे के जलते दीपक को पहले बुझ तो जाने दो। कुछ वक्त तुम्हारे साथ बिता तो लेने दो। यहां नायिका नायक से बेबस काली रात में पति के साथ की आकांक्षा करती है और उसके साथ यह रात बिताना चाहती है।

यह ठंडी–ठंडी रात
उनींदा–सा आलम,
मैं नींद–भरी–सी
चले नहीं जाना बालम।
चुप रहो जरा सपना पूरा हो जाने दो,
घर की मैना को जरा प्रभाती गाने दो,
खामोश धरा–आकाश, दिशाएं सोयी हैं,
तुम क्या जानो क्या सोच रात भर रोयी हैं?
ये फूल सेज के चरणों पर धर देने दो,
मुझको आंचल में हरसिंगार भर लेने दो,
मिटने दो आंखों के आगे का अंधियारा,
पथ पर पूरा–पूरा प्रकाश हो लेने दो!
यह ठंडी–ठंडी रात उनींदा–सा आलम,
मैं नींद भरी–सी चले नहीं जाना बालम!

शब्दार्थ : मैना– एक चिड़िया, प्रभाती– सुबह का गीत, धरा– पृथ्वी, सेज– सुहागन स्त्री का बिस्तर, हरसिंगार– एक प्रकार का फूल, पथ– रास्ता।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : इन पंक्तियों में नायिका रात की परिस्थिति का वर्णन करते हुए अपने पति को रोकना चाहती है। रात की प्रकृति के साथ अपने मानोभावों का मेल कर वह अपनी कामनाओं को पति के समक्ष प्रस्तुत करती है। इसमें नारी सुलभ गुणों का सुंदर चित्रण किया गया है।

व्याख्या : रात के अंतिम पहर की स्थिति का वर्णन करते हुए नायिका कहती है कि यह ठंडी–ठंडी रात है और इसमें तुम्हारा गर्म साथ है। इस अंतिम पहर में सारा आलम उनींदा

टिप्पणी

सा है और मैं तुम्हारी आगोश में धीरे–धीरे नींद में डूबी जा रही हूं। ऐसे समय में बुद्ध की तरह तुम मुझे सोया हुआ छोड़ कर मत चले जाना। इस समय तुम मुझसे बातें मत करो, जरा चुप रहो। इस मधुर नींद में जो मीठा सा सपना मैं देख रही हूं उसे पूरा हो जाने दो। घर की मैना को सुबह का स्वागत करते हुए प्रभाती गा लेने दो। अर्थात सुबह हो जाने दो। अभी तुम्हीं देखो समस्त धरती–आकाश चुप हैं और सारी दिशाएं सोयी हुई हैं। क्या तुम जानते हो कि इनकी चुप्पी रात भर रोने के बाद की चुप्पी है। तुम तो कठोर हो फिर कैसे प्रकृति की इस पीड़ा को जान सकोगे। सांकेतिक रूप से सुहागिन स्त्री यह भी कहना चाहती है कि तुम मेरी भी भावनाओं को नहीं जान पाते। अंत में नायिका कहती है कि आज रात सेज पर जो फूल बिछे हुए थे उन्हें सेज के नीचे गिर जाने दो यानी सुबह हो जाने दो। मुझे भी सुबह की पूजा के लिए अपने आंचल में हरसिंगार का फूल चुन लेने दो। आंखों के सामने से रात का अंधेरा छंट जाने दो और रास्तों पर अच्छी तरह से सूरज का प्रकाश फैल जाने दो।

2. सौंदर्य–बोध

अपने इस गटापारची बबुए के
पैरों में शहतीरें बांधकर,
चौराहे पर खड़ा कर दो,
फिर, चुपचाप ढोल बजाते जाओ,
शायद पेट पल जाय,
दुनिया विवशता नहीं,
कुतूहल खरीदती है।

शब्दार्थ : गटापारची– कागज का एक मोटा प्रकार, शहतीरें– बड़ा और लम्बा लट्ठा, विवशता– मजबूरी, कुतूहल– उत्सुकता।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियां 'नयी कविता' के दौर के प्रसिद्ध कवि सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की कविता 'सौंदर्य–बोध' की पंक्तियां हैं। यह कविता अज्ञेय द्वारा संपादित 'तीसरा सप्तक' में संकलित थी। पूंजीवादी प्रभाव के कारण मानवीय मूल्यों में हो रहे विध्वंस की वजह से आधुनिक समाज में सौंदर्य के मानदंड बदल रहे हैं। यह कविता इस स्थिति पर करारा व्यंग्य करती है। कविता का शीर्षक 'सौंदर्य–बोध' एक सामाजिक विडंबना की ओर हमारा ध्यान आकर्षित कर रहा है। दरअसल अब हम केवल आकर्षण और कुतूहल से भरी वस्तुओं की ओर ही आकर्षित हो रहे हैं और अपने सामाजिक दायित्व से किनारा कर चुके हैं।

प्रसंग : इन पंक्तियों में कवि समाज में बढ़ रही अमानवीयता पर व्यंग्य कर रहा है। कवि को लगता है लोगों का सौंदर्य–बोध इतना अधिक विकृत हो गया है कि वे कुतूहल के लिए किसी भी हद तक गिर सकते हैं।

व्याख्या : कवि का कहना है कि अब दुनिया में किसी की पीड़ा या मजबूरी पर ठहरकर विचार करने और उसका सहयोग करने की भावना लगभग समाप्त हो गयी है। लोगों को अब केवल मनोरंजन और आनंद चाहिए। एक समय था जब किसी की सहायता करने में लोग आनंद का अनुभव करते थे। किसी की विवशता पर दुखी होते थे। परंतु वर्तमान पूंजीवादी समाज में लोगों को केवल कुतूहल चाहिए। कवि वर्तमान स्थिति पर तंज कसते हुए कहता है कि यदि आप गरीब हैं और अपना पेट पालना चाहते हैं तो किसी से मदद की उम्मीद मत रखिए, बल्कि अपने जीते–जागते कोमल बच्चे को रबर का बच्चा समझकर उसके पैरों में बड़े और लम्बे लट्ठ बांध कर किसी चौराहे पर खड़ा कर दीजिए। उसके बाद बगल में बैठकर स्वयं भी ढोलक बजाइए। ऐसा करने से लोग उत्सुकतावश आपका तमाशा देखने के लिए आपके पास आएंगे और उसके बदले में आप पर पैसा फेंक कर चले जाएंगे, क्योंकि कवि के शब्दों में दुनिया कुतूहल खरीदती है विवशता नहीं। यह सब ऐसा इसलिए हो रहा है कि क्योंकि आज की दुनिया का सौंदर्य–बोध बदल गया है या पतित हो गया है।

टिप्पणी

भूखी बिल्ली की तरह
अपनी गरदन में संकरी हांडी फंसाकर
हाथ–पैर पटको,
दीवारों से टकराओ,
महज छटपटाते जाओ,
शायद दया मिल जाय–
दुनिया आंसू पसन्द करती है,
मगर शोख चेहरों के।

शब्दार्थ : संकरी हांडी– पतले गले वाला घड़ा, शोख– चटकीला, आकर्षक, दुनिया– संसार।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियों में कवि समाज के सौंदर्य–बोध की विकृति पर प्रहार करते हुए कहता है कि अब हम दर्द में भी सुंदरता की खोज कर रहे हैं। किसी सुंदर चेहरे पर आने वाले आंसू तो हमें आसानी से दिखाई दे जाते हैं लेकिन किसी कुरूप या गरीब व्यक्ति के आंसुओं को हम देख नहीं पाते।

व्याख्या : कवि का कहना है कि संसार का सौंदर्य–बोध इतना विकृत हो गया है कि मनुष्य के दर्द में भी वह सौंदर्य की तलाश करता है। शारीरिक स्तर पर कुरूप व्यक्ति की पीड़ा को लोग नजरअंदाज कर देते हैं। राजा के पुत्र के छोटे से घाव को राज्य के संकट के रूप में देखा जाता है जबकि गरीब आदमी का बेटा भूख से तड़प कर मर भी जाए तो लोगों का ध्यान नहीं जाता। कवि इस स्थिति पर व्यंग्य करते हुए कहता है कि आपको लोगों की दया की दरकार है तो कुछ ऐसा विचित्र करो कि लोगों का ध्यान आपकी ओर आकर्षित हो क्योंकि अब लोगों का ध्यान केवल खूबसूरत चेहरे पर टपकने वाले आंसुओं पर ही जाता है। यदि आप आम आदमी हैं और आप किसी आपदा से ग्रस्त हैं तो लोगों की दया और कृपा प्राप्त करने के लिए भूखी बिल्ली की तरह अपनी गरदन में एक संकरा घड़ा डालकर हाथ–पैर पटकिए, खुद को दीवारों से टकराइए और लोगों के सामने खुद को छटपटाते हुए

टिप्पणी

प्रस्तुत करिए। क्योंकि इसके बिना लोगों का ध्यान आपकी ओर जाएगा ही नहीं। वर्तमान समाज में निरंतर छीज रही मानवता पर कवि का यह तीखा व्यंग्य है।

अपनी हर मृत्यु को,
हरी–भरी क्यारियों में
मरी हुई तितलियों–साथ
पंख रंगकर छोड़ दो,
शायद संवेदना मिल जाय,
दुनिया हाथों–हाथ उठा सकती है
मगर इस आश्वासन पर
कि रुमाल के हल्के स्पर्श के बाद
हथेली पर एक भी धब्बा नहीं रह जायगा।

शब्दार्थ : संवेदना– समान भाव, आश्वासन– भरोसा, स्पर्श– छुअन।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियों में सर्वेश्वरदयाल सक्सेना मानवीय संवेदना के छीज जाने और उसके सौंदर्य–बोध के भोथरा हो जाने की वर्तमान स्थिति पर व्यंग्य कर रहे हैं।

व्याख्या : कवि को लगता है कि वर्तमान समय में आदमी एक बार नहीं मरता बल्कि उसे बार–बार मरना पड़ता है। मनुष्य की दैहिक मृत्यु भले ही एक बार होती हो लेकिन विचार और भावना के स्तर पर उसे बार–बार मरना पड़ता है। मुश्किल यह है कि किसी की मृत्यु पर भी संवेदना अभिव्यक्त करने का बोध लोगों के पास नहीं है। यदि कोई चाहता है कि उसकी मृत्यु पर लोग संवेदना व्यक्त करें तो उसे अपनी मृत्यु को भी उसी तरह रंगीन और आकर्षक बनाना होगा जैसे किसी हरी–भरी क्यारी पर मरी हुई तितलियां मरने के बाद भी अपने पंखों का रंग क्यारियों पर छोड़कर जाती हैं जिससे लोग उसकी तरफ आकर्षित हो जाते हैं। सामान्यतया मृत्यु पाषाण हृदय को भी सहज ही संवेदित कर देती है पर आज की सच्चाई यह है कि किसी की मृत्यु के प्रति ध्यानाकर्षण के लिए भी अतिरिक्त प्रयास करने की जरूरत पड़ रही है। कवि वर्तमान युग की संवेदनहीनता के स्वरूप को और अधिक विस्तार देते हुए कहता है कि आप यदि अपनी मृत्यु को हसीन बना दें तो लोग आपके प्रति आकर्षित हो सकते हैं लेकिन आपको इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि जब वे आपकी मृत्यु पर संवेदना व्यक्त करने आएं तो उन्हें किसी भी प्रकार का कष्ट न हो। इसी तथ्य को कवि इस रूप में कहता है कि यदि आपकी मृत्यु हसीन हो तो लोग आपको हाथों–हाथ उठा सकते हैं लेकिन इस आश्वासन के साथ कि यदि रुमाल से भी आपको स्पर्श करे तो स्पर्श करने वाले की हथेली गंदी नहीं होगी। तात्पर्य यह कि लोग यदि किसी प्रकार आपकी मदद को तैयार भी होते हैं तो इस आश्वासन के साथ कि उसके बदले उन्हें किसी प्रकार की मुश्किल का सामना नहीं करना पड़ेगा। कुल मिलाकर आज के समय में लोगों की संवेदना इस प्रकार मृत हो चुकी है कि उसको झंकृत करना बेहद मुश्किल काम

टिप्पणी

है। सौंदर्य–बोध का सीधा संबंध संवेदना से है। इसलिए कवि कहना चाहता है कि लोगों की संवेदना मृत हो चुकी है।

आज की दुनिया में,
विवशता,
भूख,
मृत्यु,
सब सजाने के बाद ही
पहचानी जा सकती हैं।
बिना आकर्षण के
दुकानें टूट जाती हैं।
शायद कल उनकी समाधियां नहीं बनेंगी
जो मरने के पूर्व
कफन और फूलों का
प्रबंध नहीं कर लेंगे।
ओछी नहीं है दुनिया :
मैं फिर कहता हूं
महज उसका
सौन्दर्य–बोध बढ़ गया है।

शब्दार्थ : ओछी– तुच्छ, छिछोरा, हल्का, सौन्दर्य बोध– सुंदरता को समझने का दृष्टिकोण।

संदर्भ : उपरोक्त

प्रसंग : इन पंक्तियों में कवि ने वर्तमान पूंजीवादी समाज में सौंदर्य के बदलते मानदंडों पर व्यंग्यात्मक टिप्पणी की है।

व्याख्या : कविता की इन पंक्तियों में निष्कर्षात्मक टिप्पणी करते हुए कवि कहता है कि विवशता, मृत्यु, भूख सबका व्यापार हो रहा है। कोई भी इस समस्या के प्रति सहज संवेदित नहीं है, और न ही इस स्थिति से सचमुच पीड़ित है। सब इसको बाजार में सजा रहे हैं और उसे बेच रहे हैं। जो इसमें असफल हैं वह भूख से विवश होकर मौत को गले लगाने के लिए अभिशप्त हैं। बाजारवाद और विज्ञापन का आतंक इतना अधिक व्याप्त हो गया है कि जिस दुकान या वस्तु में आकर्षण नहीं है, वह मूल्यवान होने के बावजूद मूल्यहीन है। यही स्थिति मानवीय संवेदना और भावना की भी है। हमारी संवेदना इतनी भोथरी हो चुकी है कि जो मरने के पहले अपने लिए कफन और फूल का इंतजाम करके नहीं जाएगा उसकी समाधि नहीं बनेगी। तात्पर्य यह कि जिसकी सहायता से हमें कुछ नहीं मिलेगा उसके लिए हम कुछ भी मदद नहीं करेंगे। निष्काम कर्म और निःस्वार्थ सहयोग अब केवल किताबी बातें रह गयी हैं। कविता के अंत में कवि व्यंग्यात्मक लहजे में कहता है कि यह सब इसलिए

टिप्पणी

नहीं है कि दुनिया ओछी है, वह क्षुद्र और स्वार्थी हो गयी है बल्कि उसका सौंदर्य–बोध बढ़ गया है। असल में कवि कहना चाहता है कि आज की दुनिया स्वार्थांधता का शिकार होकर पतित हो गई है, और जिसे वह सौंदर्य–बोध कहती है दरअसल वह कुरुपता–बोध है। पूंजीवादी समाज की सबसे बड़ी सच्चाई यह है कि इसमें सौंदर्य के नाम पर कुरुपता का ही व्यापार होता है। इसमें मानवीय संवेदना का कोई मूल्य नहीं होता और सारा संसार जड़ भौतिक पदार्थों के आसपास घूमता रहता है।

3.5.2 सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की काव्यगत विशेषताएं

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना मध्यवर्गीय चेतना और प्रामाणिक अनुभूतियों के कवि हैं। नई कविता के प्रतिनिधि कवि के रूप में विख्यात सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने अपनी कविता के विषय मध्यवर्ग के संघर्षों, स्वार्थों के साथ ही लोक–जीवन के अलक्षित प्रसंगों को बनाया है। सर्वेश्वरदयाल सक्सेना एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने बदलते हुए यथार्थ को पहचाना। सर्वेश्वर का अपने परिवेश के साथ सिर्फ रागात्मक ही नहीं बल्कि उनमें अपने परिवेश को लेकर एक बेचैनी और उदासी का भी सम्बन्ध है। सर्वेश्वर अपनी कविता में निजी सुख–दुख के साथ ही समकालीन जगत के बाह्य यथार्थ को भी चित्रित करते हैं। वे जहां निजी सुख–दुख का चित्रण करते हैं वह भी अपनी व्याप्ति में सार्वजनिक पीड़ा की अभिव्यक्ति करता है। कवि वैयक्तिक चेतना से सामाजिक चेतना तक पहुंचता है। इस बिन्दु पर आकर कवि का कवि धर्म और उद्देश्य व्यापक हो जाता है। यह सम्प्रेषण की एक समर्थ प्रक्रिया है जो कवि अपनी रचनाओं के माध्यम से पूरा करता है।

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की काव्य यात्रा 1943 से लेकर 1983 तक चलती रही है। इस दौरान सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनीतिक मूल्यों में बड़े पैमाने पर बदलाव आये, जिन्हें सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की कविताओं में देखा जा सकता है।

परिवेश की आत्मपरक स्वीकृति : सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की कविताओं में परिवेश के प्रति आत्मीयता और निजता का भाव उनके काव्य–लेखन के आरम्भ से ही दिखाई देता है। उनकी प्रारम्भिक कविताओं में पीड़ा, अकेलापन, अजनबीपन के साथ ही उससे उपजी मजबूरी और भय का चित्रण मिलता है। समय के साथ परिवेश के प्रति निजता–बोध कठोर सामाजिक यथार्थ से टकरा कर टूट गया। जिसके कारण उनमें परिवेश का भय और विवशता का भाव भर जाता है। सर्वेश्वर अपनी गहरी जीवनी शक्ति और चेतना से उस भय से मुक्ति ही नहीं पाते बल्कि उसे अपना प्रेरणास्रोत बना लेते हैं–

पहाड़ों को मेरे ऊपर गिरने दो
नदियों को मुझे बहा लेने दो
सागर को किनारे पर
मुझे बार–बार पटकने दो
मैं अपनी शक्ति की परीक्षा
करना चाहता हूं
क्योंकि यह अन्ततः
तुम्हारे प्यार की शक्ति है।

टिप्पणी

जीवन के प्रति रोमानी भाव–बोध : सर्वेश्वर की कविता में जीवन के प्रति रोमानी–भाव अपने पूरे वैभव के साथ चित्रित हुआ है। प्रेम, देह, दुनिया के प्रति उनके भीतर एक रोमानी–भाव था जो उनके 'काठ की घंटियां', 'बांस का पूल', 'एक सूनी नाव है' जैसे काव्य–संग्रहों की कविताओं में दिखाई देता है। सर्वेश्वर के रोमांटिक बोध की परिणति उनके पूर्ववर्ती कवियों की कविताओं की तरह अवसाद, निराशा और विषाद में नहीं होती। सर्वेश्वर के लिए प्रेम जीवन की अनमोल वस्तु है। उनका प्रेम जीवन को सार्थक बनाता है, जिससे उनमें जीवन के प्रति रोमानी भाव पैदा होता है। वे कहते हैं कि–

अहं से मेरे बड़ी हो तुम!
प्रिय, इसी से तुम्हारे सम्मुख
मौलश्री की डाल यह मैंने झुका दी है,
और बौने प्यार के कर में
अहं की जयमाल ला दी है
क्योंकि मैं,
उखड़कर जिस जगह से गिर पड़ा
वहीं पर दृढ़ हो गड़ी हो तुम।

लोक जीवन के प्रति रागात्मक सम्बन्ध : सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की कविताओं की मूल शक्ति लोक जीवन के प्रति रागात्मक लगाव है। ग्राम–जीवन के अनेकों प्रसंग, अनुभूतियां उनकी कविताओं में दर्ज हैं। सर्वेश्वरदयाल सक्सेना के लिए लोक–जीवन 'काव्यात्मक टूल्स' नहीं, सम्पूर्ण कथ्य है। वे ग्राम संवेदना और ग्राम्य संस्कृति को पूरी सूक्ष्मता और आत्मीयता के साथ प्रस्तुत करते हैं। अपनी कविताओं में लोक–भाषा और लोक–धुनों के सृजनात्मक प्रयोगों द्वारा सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने नई कविता को नई भंगिमा दी है। 'काठ की घंटियां' में सावन का गीत, झूले का गीत, चरवाहों के गीतों की धुनों पर कई कविताएं हैं। उनकी कविताओं में खेत–खलिहान, गांव–ज्वार, तीज–त्योहार, मेले–परम्पराएं पूरी स्वाभाविकता के साथ व्यक्त हुई हैं–

नीम की निबौली पक्की सावन की ऋतु आयी रे,
सर–सर, सर–सर बहत बयरिया
उड़ि–उड़ि जात चुनरिया रे,
खुलि–खुलि जात किवंरिया ओढंगी
घिरि–घिरि जात बदरिया रे।

ग्रामीण परिवेश के उल्लास को अपने मन के उल्लास में बदल लेते हैं–

दिशा–दिशा कजरी बन झूमूं
पात–पात पुरवा बन चूमूं
हरियाली को इन्द्रधनुष की जयमाला पहनाऊं रे।

टिप्पणी

राजनैतिक व्यंग्य : सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की निगाह अपने समय की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनैतिक विडंबनाओं पर थी। वे राजनेताओं के समस्त छल–प्रपंच और जनविरोधी राजनीतिक प्रक्रियाओं को समझ रहे थे। देश में व्याप्त भ्रष्टाचार, कालाबाजारी, भाई–भतीजावाद, बौद्धिकों का दोमुंहापन, समाज की यथास्थिति आदि पर सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने प्रभावशाली व्यंग्य किया है–

जो पोस्टर हैं
महज पोस्टर हैं
वे आज के युग में
आदमी से अधिक बड़े सत्य हैं
उन्हें सब पहिचानते हैं
वे ही महान हैं।
या
क्या रखा है कुरेदने में
हर एक का चक्रव्यूह कुरेदने में
सत्य के लिए
निरस्त्र टूटा पहिया ले
लड़ने से बेहतर है
जैसी है दुनिया
उसके साथ हो लो
व्यंग्य मत बोलो।
या
एक थे हां–हां
एक थे नहीं–नहीं
जहां–जहां गया मैं
मिले मुझे वहीं–वहीं।

सामाजिक–राजनैतिक सरोकारों के प्रति निष्ठा : सर्वेश्वरदयाल सक्सेना अपने समकालीन सत्य और सामाजिक–राजनैतिक सरोकारों के प्रति गहरी निष्ठा रखते हैं। वे यथास्थितिवाद के खिलाफ और सामाजिक प्रगति के पक्षधर कवि हैं। शोषण, भ्रष्टाचार और राजनीतिक षड्यंत्रों के प्रति उनके भीतर प्रबल आक्रोश है। सर्वेश्वरदयाल सक्सेना आजादी की पूर्व संध्या पर देश की जनता द्वारा देखे गये स्वप्नों के टूट जाने के दंश से परिचित हैं। आजादी के बाद देश के राजनेता जनता को भरोसा दिलाते हैं कि 'धीरे–धीरे' देश की व्यवस्था ठीक हो जायेगी। सर्वेश्वरदयाल इसे राजनीतिक साजिश मानते हैं। सत्ता के इस कुचक्र को डॉ. राममनोहर लोहिया ने बहुत पहले समझ लिया था। लोहिया जी कहते थे

टिप्पणी

कि 'जिंदा कौमें पांच साल इन्तजार नहीं करतीं।' लोहिया जी चाहते थे कि पूंजीवाद और राजनीति का गठजोड़ जल्दी टूटे और जन केन्द्रित विकास प्रक्रिया में तेजी आये। सर्वेश्वरदयाल सक्सेना डॉ. राममनोहर लोहिया से अपनी वैचारिक सहमति व्यक्त करते हुए देश की बिगड़ती हालत और सत्ता की यथास्थितिवादी नीतियों से क्षुब्ध होकर कहते हैं कि–

उस देश का मैं क्या करूं
जो धीरे–धीरे लड़खड़ाता हुआ
मेरे पास बैठ गया।

कवि को इस 'धीरे–धीरे' से नफरत है। वह जानता है कि इस 'धीरे–धीरे' की नीति ने ही सब कुछ को खत्म किया है। धीरे–धीरे ही राजनीति में भाई–भतीजावाद बढ़ा है, भूख और गरीबी बढ़ी है, आम आदमी का सपना मरा है और अन्ततः आदमी भी मरा है। इसलिए कवि अपने आक्रोश को व्यक्त करते हुए कहता है–

'धीरे–धीरे'–
मुझे सख्त नफरत है
इस शब्द से।

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना अपनी कविता में सामाजिक सरोकारों को लेकर भी सचेत हैं। सामाजिक विषमता और विडम्बना, शोषित वर्ग के प्रति संवेदना, मध्यवर्ग के छोटे–छोटे सुख–दुख, मेहनतकश लोगों के संघर्ष, उनका पारिवारिक परिवेश, उनकी परम्पराएं, आम आदमी की आकांक्षाएं आदि को अपनी कविता में अभिव्यक्त करते हैं। इसे वे कवि का सामाजिक दायित्व मानते हैं। इसीलिए वे जन सामान्य की जिन्दगी में बदलाव लाने की बात करने वाले विचारों की आलोचना करते हैं, क्योंकि उन विचारों ने मनुष्य को भ्रम में रखा, उसके साथ छल किया। सर्वेश्वर साम्यवाद और पूंजीवाद दोनों पर प्रहार करते हुए कहते हैं कि–

साम्यवाद या पूंजीवाद
मैं दोनों पर थूकता हूं
और पूछता हूं
जिसके पैर में तुम जूते नहीं दे सकते
उसके हाथ में तुम्हें
बंदूक देने का क्या अधिकार है?

बाल कविताओं का अनुपम संसार : सर्वेश्वरदयाल सक्सेना के काव्य–संसार में दूसरी अन्य विशेषताओं के साथ ही एक अद्वितीय उपलब्धि है–उनकी बाल कविताएं। सर्वेश्वर आधुनिक हिन्दी के एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने सर्वश्रेष्ठ बाल कविताओं की रचना की है। 'दिनमान' में कार्य करने के दौरान ही सर्वेश्वरदयाल ने हिन्दी में बाल–साहित्य की खराब स्थिति को देखते हुए इस दिशा में कार्य करने का संकल्प किया था। उनके प्रयासों से ही 1982 में उनके ही संपादन में बच्चों की पत्रिका 'पराग' की शुरुआत हुई। सर्वेश्वरदयाल की बाल कविताओं में भाषा की चंचलता, अल्लहड़ता और मस्ती भरी हुई है–

टिप्पणी

इब्नबतूता पहन के जूता
निकल पड़े तूफान में
थोड़ी हवा नाक में घुस गई
घुस गई थोड़ी कान में

या

सूंड़ उठाकर हाथी बैठा
पक्का गाना गाने,
मच्छर एक घुस गया कान में,
लगा कान खुजलाने।
फट–फट फट–फट तबले जैसा
हाथी कान बजाता,
बड़े मौज से भीतर बैठा
मच्छर गाना गाता!

सर्वेश्वर बच्चों की कविताओं में भी इस बात का ध्यान रखते थे कि उन्हें वैचारिक रूप से भी प्रखर और सचेत बनाया जाय। वे अपनी एक कविता में नेता की तुलना गधे से करते हैं, जिसमें नेताओं के प्रति उनका व्यंग्य देखने लायक है–

नेता के दो टोपी
औ' गदहे के दो कान,
टोपी अदल–बदलकर पहनें
गदहा था हैरान।
एक रोज गदहे ने उनको
तंग गली में छेंका,
कई दुलत्ती झाड़ीं उन पर
और जोर से रेंका।
नेता उड़ गए, टोपी उड़ गई
उड़ गए उनके कान,
बीच सभा में खड़ा हो गया
गदहा सीना तान!

काव्य भाषा : सर्वेश्वरदयाल सक्सेना अपनी काव्यभाषा को लेकर काफी सजग हैं। उनकी कविताएं पाठकों से संवाद सी करती हैं। जैसे कोई आमने–सामने बैठकर बात कर रहा हो। उनका अनुभव–क्षेत्र व्यापक और विभिन्नता वाला है। उनकी भाषा सहज और सम्प्रेषणीय है। वे अपने समकालीन सत्यों की खोज करने और उसे जनता तक पहुंचाने का माध्यम

टिप्पणी

भाषा को बनाते हैं। वे भाषा को मनुष्य का सबसे बड़ा आविष्कार मानते हैं। सर्वेश्वरदयाल भाषा को मनुष्य का अस्तित्व और व्यक्तित्व मानते हैं। मनुष्य भाषा में ही अपने होने को प्रकट करता है, अपने प्रेम या विरोध को दर्ज कराता है। इसीलिए सत्ता–संरचना हमेशा से जनता से उसकी भाषा को छीनने–मिटाने की कोशिश करती है। सर्वेश्वर अपनी एक कविता 'छीनने आए हैं वे' में कहते हैं कि–

और आज छीनने आए हैं वे
हमसे हमारी भाषा
यानी हमसे हमारा रूप
जिसे हमारी भाषा ने गढ़ा है
और जो इस जंगल में
इतना विकृत हो चुका है
कि जल्दी पहचान में नहीं आता।

सर्वेश्वर एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने नई कविता का मुहावरा बदल दिया। भाषा का इतना रचनात्मक प्रयोग सर्वेश्वर से पहले किसी कवि ने नहीं किया था। प्रयोगवाद और नई कविता की सांस्कृतिक शब्दावली के वर्चस्व के बीच सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने लोकजीवन की भाषा और शब्दों की प्रतिष्ठा दिलाई। वे कहते हैं कि–

बोलना चाहता है, अपनी ही पगध्वनि से बोल
दर्द की गांठ तू अपने ही छालों पर बोल।

सर्वेश्वर का भाषा–संसार बहुत व्यापक है। लोकभाषा के बहुत सारे शब्द उनकी कविता में आये हैं, जैसे– ड्योढ़ी, चौपाये, कांसे के कंगन, दुअन्नी, झौआ, गिरिपन, कनकौआ आदि।

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना अपनी काव्यभाषा को और अधिक संवादी बनाने के लिए सार्थक और रचनात्मक प्रतीकों का प्रयोग करते हैं, जो उनकी कविता के कथ्य में निहित बेचैनी को पाठकों तक बिना किसी बाधा के सम्प्रेषित कर देते हैं–

एक ओर भूखी गौरैय्या
एक ओर नीला अजगर है।

यहां भूखी गौरैय्या किसान–मजदूर और नीला अजगर सामंतवाद का प्रतीक है। इसी तरह वे अपनी प्रसिद्ध कविता 'भेड़िया' में कहते हैं कि–

भेड़िया गुर्राता है
तुम मशाल जलाओ!
उसमें और तुममें
यही बुनियादी फर्क है।
भेड़िया मशाल नहीं जला सकता।

इस कविता में भेड़िया पूंजीवादी, साम्राज्यवादी और भ्रष्ट राजनीतिक ताकतों का और मशाल विचारों का प्रतीक है।

टिप्पणी

इस तरह देखा जा सकता है कि सर्वेश्वरदयाल सक्सेना नई कविता के एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने अपने काव्य के माध्यम से हिन्दी कविता का विस्तार किया। नये विषय, भाषा के नये मुहावरे, कहने की नई शैली के साथ ही जनता और कविता के बीच के सम्बन्ध को और अधिक मजबूत किया।

3.6 सारांश

आधुनिक काल के 'आधुनिक' शब्द को लेकर प्रश्न उठना स्वाभाविक है। साहित्य के संदर्भ में तथा इतिहास के संदर्भ में इसे दो अर्थों में समझा जा सकता है। एक तो आदिकाल तथा मध्यकाल से भिन्न नवीन इहलौकिक दृष्टि की सूचना देने वाली सभी गतिविधियों के परिप्रेक्ष्य में और दूसरे लौकिक, सामाजिक एवं सांसारिक दृष्टिकोण के बदलते, संवरते परिप्रेक्ष्य में। रीतिकाल में शृंगारिकता, ऊहात्मकता, रूढ़िवादिता तथा शास्त्रीयता से समृद्ध एक विशेष प्रकार के साहित्य ने एकरसता और अरुचि पैदा कर दी थी। तत्पश्चात नवीन ऐतिहासिक प्रक्रिया प्रारंभ हुई और आधुनिक गत्यात्मकता का संचार होने लगा। यह आधुनिक तथा नवीन दृष्टिकोण कला और साहित्य में भी इसीलिए अभिव्यक्त हुआ क्योंकि इस युग में सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश में इसका प्रादुर्भाव हो रहा था।

नागार्जुन हिन्दी के प्रगतिशील कवियों में से एक हैं। इनका वास्तविक नाम वैद्यनाथ मिश्र है। प्रारम्भ में मातृभाषा मैथिली में 'यात्री' नाम से साहित्य लेखन करते रहे। बाद में बौद्ध धर्म स्वीकार कर लेने के उपरान्त 'नागार्जुन' नाम से साहित्य साधना करने लगे। नागार्जुन के समग्र व्यक्तित्व पर निराला और राहुल सांकृत्यायन दोनों का स्पष्ट प्रभाव है। साम्यवादी विचारधारा के प्रति आस्था के फलस्वरूप उन्होंने कविता में कल्पना–तत्त्व को त्यागकर पीड़ित और वंचित तबके की मूक आवाज को अपने काव्य में वाणी प्रदान की है। नागार्जुन का काव्य शोषितों के प्रति सहानुभूति और शोषण के विरुद्ध आक्रोश के साथ–साथ किसान जीवन की त्रासदी और अभाव में जीने वाले लाखों–करोड़ों लोगों की आशा–आकांक्षा एवं उनकी जिजीविषा का साहित्यिक अभियान है। अपनी इसी विशिष्टता के कारण वे जनता के कवि कहे जाते हैं।

नागार्जुन के काव्य में समसामयिकता का यथार्थ चित्रण देखने को मिलता है। नागार्जुन की मान्यता है कि जब चारों ओर शोषण और वर्चस्व की प्रधानता हो, राजनीतिक अकर्मण्यता हो, महंगाई, बेरोजगारी और भुखमरी से जनता त्रस्त होने के कारण अपना उचित–अनुचित विवेक भुला बैठी हो तब ऐसे कठिन समय में विरोध ही एकमात्र हथियार है।

नागार्जुन कभी प्रखर राजनीतिक चेतना से युक्त लगते हैं तो कभी लोक–जीवन सा निर्दोष, तो कभी ईश्वरीय सत्ता को चुनौती देते नास्तिक लगते हैं तो कभी मनुष्यता की संभावनाओं पर भरोसा रखने वाले आस्तिक लगते हैं। तो कभी ईश्वर की सत्ता के प्रति आस्थावान होकर प्रकृति और जीवन के सौन्दर्य में रमते दिखाई देते हैं। इन सबके साथ वे कभी भी जीवन के यथार्थ की उपेक्षा नहीं करते हैं। जो जैसा है उसे उसी रूप में और उसी भाषा और शैली में अपनी कविता में चित्रित करते हैं।

अपनी प्रगति जांचिए

10. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की ऑल इंडिया रेडियो दिल्ली में हिन्दी समाचार विभाग में किस पद पर नियुक्ति हुई थी?
11. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना 'पराग' पत्रिका के सम्पादक कब बनाए गए?
12. सही–गलत बताइए–
    (क) सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की काव्य यात्रा 1943 से लेकर 1983 तक चलती रही।
    (ख) सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने 1951 में एम.ए. किया था।

टिप्पणी

हिन्दी साहित्य में प्रगतिवाद के बाद के काव्य आंदोलन को 'प्रयोगवाद' कहा जाता है। प्रयोगवाद दो शब्दों 'प्रयोग' और 'वाद' से बना है। प्रयोग शब्द का अभिप्राय 'कर के देखना' है और 'वाद' शब्द का अभिप्राय सिद्धान्त है। अर्थात प्रयोगवाद का अर्थ हुआ कि जो पहले से है, उसका परीक्षण करते हुए पुनः उसका ज्ञान प्राप्त करने वाला सिद्धान्त या मत। प्रयोग एक प्रक्रिया है, परिणाम नहीं। प्रयोग के द्वारा ही हम पुरानी मान्यताओं का परीक्षण करते हैं और अपने युग के अनुसार उसकी प्रासंगिकता का निर्धारण करते हैं। समय के साथ पुरानी मान्यताओं का परीक्षण आवश्यक होता है। प्रयोग की यह प्रक्रिया जीवन, समाज और साहित्य सभी क्षेत्रों में आवश्यक होती है।

अज्ञेय जीवन और रचना दोनों स्तरों पर प्रयोग के पक्षधर थे। स्वयं अज्ञेय ने अपनी कविता में नये उपमान, नये प्रतीक, नये बिम्बों का विलक्षण प्रयोग किया है। साथ ही वे अपने समय को उसकी सम्पूर्णता में समझने और अपने प्रयोगों द्वारा उसे अपनी कविता में प्रस्तुत करने की कोशिश अज्ञेय के साथ–साथ लगभग सभी प्रयोगवादी कवियों की विशेषता रही है। अज्ञेय ने 'तार सप्तक' की भूमिका में अपने साथ के कवियों को अन्वेषी माना, एक राह के अन्वेषी। इसीलिए अज्ञेय और उनके साथ के कवियों ने प्रेम, प्रकृति और पीड़ा को एकदम नये रूप में प्रस्तुत कर हिन्दी कविता के दायरे का विस्तार किया। अज्ञेय ने नये सत्य की खोज, साधारणीकरण एक नयी समस्या, रस और बौद्धिकता तथा परम्परा का प्रश्न जैसे सैद्धान्तिक प्रश्नों के साथ प्रयोगवाद के वैचारिक आधारों की स्थापना की है।

प्रयोगवाद और अज्ञेय का सम्बन्ध सर्जक और सर्जना का सम्बन्ध है। प्रयोगवाद की वैचारिक भूमि और उसकी चेतना के निर्माण में अज्ञेय का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। एक तरह से अज्ञेय प्रयोगवाद के प्रतिनिधि कवि हैं।

गजानन माधव मुक्तिबोध आधुनिक हिन्दी कविता के विशिष्ट कवि हैं। वे अपनी कविताओं के अभिनव कथ्य, नवीन शिल्प के लिए अद्वितीय हैं। मुक्तिबोध युग की बेचैनी के कवि हैं। वे अपनी कविताओं में सामाजिक असमानता, राजनीतिक विद्रूपता, पूंजी का दुश्चक्र, राजनीति और पूंजी का गठजोड़, मध्यवर्गीय मनुष्य का स्वार्थ और कायरता आदि पर अपनी बेबाक राय रखते हैं। वस्तुतः मुक्तिबोध एक खुशहाल और शोषणविहीन समाज चाहते थे, जिसमें सबको अपना मुक्ततम और श्रेष्ठतम विकास करने का अवसर मिले।

मुक्तिबोध अपनी कविताओं में निहित वैचारिकी, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनीतिक चेतना, शोषणमुक्त वर्गविहीन समाज की स्थापना का स्वप्न तथा अपनी अभिनव भाषा, बिम्ब और प्रतीक योजना को लेकर हिन्दी के विशिष्ट कवि हैं।

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना मध्यवर्गीय चेतना और प्रामाणिक अनुभूतियों के कवि हैं। नई कविता के प्रतिनिधि कवि के रूप में विख्यात सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने अपनी कविता के विषय मध्यवर्ग के संघर्षों, स्वार्थों के साथ ही लोक–जीवन के अलक्षित प्रसंगों को बनाया है। सर्वेश्वरदयाल सक्सेना एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने बदलते हुए यथार्थ को पहचाना। सर्वेश्वर का अपने परिवेश के साथ सिर्फ रागात्मक ही नहीं बल्कि उनमें अपने परिवेश को लेकर एक बेचैनी और उदासी का भी सम्बन्ध है। सर्वेश्वर अपनी कविता में निजी सुख–दुख के साथ ही समकालीन जगत के बाह्य यथार्थ को भी चित्रित करते हैं। वे जहां निजी सुख–दुख का चित्रण करते हैं वह भी अपनी व्याप्ति में सार्वजनिक पीड़ा की अभिव्यक्ति

करता है। कवि वैयक्तिक चेतना से सामाजिक चेतना तक पहुंचता है। इस बिन्दु पर आकर कवि का कवि धर्म और उद्देश्य व्यापक हो जाता है। यह सम्प्रेषण की एक समर्थ प्रक्रिया है जो कवि अपनी रचनाओं के माध्यम से पूरा करता है।

टिप्पणी

सर्वेश्वर एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने नई कविता का मुहावरा बदल दिया। भाषा का इतना रचनात्मक प्रयोग सर्वेश्वर से पहले किसी कवि ने नहीं किया था। प्रयोगवाद और नई कविता की सांस्कृतिक शब्दावली के वर्चस्व के बीच सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने लोकजीवन की भाषा और शब्दों की प्रतिष्ठा दिलाई।

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना नई कविता के एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने अपने काव्य के माध्यम से हिन्दी कविता का विस्तार किया। नये विषय, भाषा के नये मुहावरे, कहने की नई शैली के साथ ही जनता और कविता के बीच के सम्बन्ध को और अधिक मजबूत किया।

3.7 मुख्य शब्दावली

- **समीप** : नजदीक।
- **शिकस्त** : पराजय, हार।
- **आश्रित** : किसी के सहारे रहना।
- **तूणीर** : बाण।
- **प्रयास** : कोशिश।
- **अकिंचन** : गरीब।
- **दंश** : दर्द, पीड़ा।
- **परिवेश** : वातावरण।
- **उपेक्षा** : तिरस्कार।
- **विषैला** : जहरीला।
- **अहेरी** : शिकारी।
- **भूमिसुत** : पृथ्वी का पुत्र।
- **धीरज** : धैर्य, हौसला।
- **अधीर** : धैर्यहीन।
- **अश्रु** : आंसू।
- **पीड़ा** : दुख।
- **कुतूहल** : उत्सुकता।

3.8 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर

टिप्पणी

1. वैद्यनाथ मिश्र।
2. मैथिली काव्य संग्रह 'पत्रहीन नग्न गाछ' के लिए।
3. (क) सही (ख) गलत।
4. सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन।
5. 1943 में।
6. (क) गलत (ख) सही।
7. 'नया खून' में।
8. 13 नवम्बर, 1917 को श्यौपुर, ग्वालियर (मध्य प्रदेश)।
9. (क) सही (ख) गलत।
10. सहायक सम्पादक के पद पर।
11. सन् 1982 में।
12. (क) सही (ख) गलत।

3.9 अभ्यास हेतु प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. नागार्जुन के संक्षिप्त जीवन–परिचय का उल्लेख कीजिए।
2. अज्ञेय के प्रयोगवाद को परिभाषित कीजिए।
3. मुक्तिबोध के मार्क्सवादी दृष्टिकोण को समझाइए।
4. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की काव्य विशेषताएं बताइए।
5. नागार्जुन की जनपक्षधरता को स्पष्ट कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. आधुनिक काल के कवियों का साहित्य में क्या योगदान है? वर्णन कीजिए।
2. नागार्जुन की 'उनको प्रणाम' व 'अकाल और उसके बाद' शीर्षक कविताओं की व्याख्या कीजिए।
3. अज्ञेय के प्रयोगवाद की विस्तार से समीक्षा कीजिए।
4. मुक्तिबोध की काव्यगत विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
5. सर्वेश्वरदयाल सक्सेना एवं नागार्जुन की काव्यगत चेतना का तुलनात्मक विश्लेषण कीजिए।

3.10 आप ये भी पढ़ सकते हैं

टिप्पणी

- रामस्वरूप चतुर्वेदी, *अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या,* भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली।
- चंद्रकांत देवताले, *मुक्तिबोध : कविता और जीवन विवेक,* राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली (2003)
- डॉ. शशि शर्मा, *समकालीन कविता : अज्ञेय और मुक्तिबोध के संदर्भ में,* वाणी प्रकाशन नई दिल्ली।
- डॉ. उर्मिला जैन, *आधुनिक हिन्दी काव्य में क्रांति की विचारधाराएं।*
- डॉ. प्रकाश चंद्र भट्ट, *नागार्जुन : जीवन और साहित्य।*
- यतींद्रनाथ गौड़, *बाबा नागार्जुन, जीवनी और चुनिंदा साहित्य।*
- नागार्जुन, *'हजार हजार बांहों वाली'* काव्य संग्रह एवं अन्य कवि के काव्य संग्रह।

इकाई 4 व्यावहारिक हिन्दी

टिप्पणी

इकाई की रूपरेखा

4.0 परिचय
4.1 इकाई के उद्देश्य
4.2 पत्र लेखन
 4.2.1 प्रभावी पत्र लेखन की विशेषताएं
 4.2.2 पत्र–लेखन के प्रकार
4.3 संक्षेपण, पल्लवन एवं टिप्पण
 4.3.1 संक्षेपण
 4.3.2 पल्लवन
 4.3.3 टिप्पण
4.4 सारांश
4.5 मुख्य शब्दावली
4.6 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर
4.7 अभ्यास हेतु प्रश्न
4.8 आप ये भी पढ़ सकते हैं

4.0 परिचय

हिन्दी, भारतीय-आर्य-भाषा परिवार की भाषा है। संस्कृत भाषा से लेकर पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि सोपानों से गुजरती हुई हिन्दी आज समूचे भारत की संपर्क भाषा बन गई है। हिन्दी का विकास अंतर्क्षेत्रीय भाषा, राष्ट्रभाषा, राजभाषा और अंतराष्ट्रीय भाषा के रूप में हो रहा है। हमारे जन-जीवन, सामाजिक-सांस्कृतिक संप्रेषण, ज्ञान-विज्ञान और सर्जनात्मक साहित्य की भाषा के रूप में विकसित हिन्दी हमारी ही नहीं, अपितु पूरे विश्व की शिक्षा व्यवस्थाओं में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर चुकी है। इसी का परिणाम है कि हिन्दी अपने देश में मातृभाषा, प्रथम भाषा, द्वितीय भाषा आदि रूपों में पढ़ी-पढ़ाई जा रही है और यह भारत के बाहर अनेक देशों में भी अध्ययन-अध्यापन का विषय है।

भाषा सामान्यत: संप्रेषण का माध्यम है। दो या दो से अधिक व्यक्ति जिस वर्ग के होते हैं, वहां भाषा का रूप बदल जाता है। एक प्रकार से भाषा तो वह साधन है, जिसके माध्यम से एक व्यक्ति अपने मनोभावों को दूसरे के समक्ष व्यक्त करता है। 'संवाद' की स्थिति भाषा द्वारा ही संभव है। हिन्दी के इसी संप्रेषण को दैनिक जीवन में प्रयुक्त करने के माध्यम को व्यावहारिक या कामकाजी हिन्दी कहा जाता है।

सरलतम शब्दों में कह सकते हैं कि "जीवन की जरूरतों की पूर्ति के लिए उपयोग में लाई जाने वाली हिन्दी ही 'व्यावहारिक या कामकाजी हिन्दी' है। इसके विभिन्न रूप हैं, जैसे पत्राचार, पत्रकारिता, भाषा, कम्प्यूटिंग, मीडिया-लेखन, अनुवाद आदि।"

व्यावहारिक हिन्दी के अनेक रूप विकसित हुए हैं, जो कार्यालयों में किए जा रहे काम-काज के स्वरूप के अनुसार निर्मित हुए हैं इसमें प्रमुख हैं–प्रारूपण, पत्र-लेखन, संक्षेपण, पल्लवन, टिप्पण।

प्रस्तुत इकाई में व्यावहारिक हिन्दी के विभिन्न रूपों-पत्र लेखन, संक्षेपण, पल्लवन, टिप्पण आदि के प्रकारों एवं विशेषताओं का वर्णन किया गया है।

टिप्पणी

4.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- व्यावहारिक हिन्दी के बारे में जान पाएंगे;
- पत्र लेखन के प्रकार एवं विशेषताओं को जान पाएंगे;
- संक्षेपण की कार्य विधि एवं महत्व को समझ पाएंगे;
- पल्लवन की विशेषताओं के बारे में जान पाएंगे;
- टिप्पण के आवश्यक नियमों को समझ पाएंगे;
- संक्षेपण और टिप्पण के अंतर को समझ पाएंगे।

4.2 पत्र लेखन

पत्र मानव सभ्यता के विकास के वाहक हैं। आज के वैज्ञानिक युग में संचार-माध्यमों के विकास के द्वारा पत्राचार से हजारों मील दूर बैठे आत्मीयों से संपर्क स्थापित किया जा सकता है। पत्र आज की दुनिया में वैचारिक प्रगति के पहिए हैं। लिपि के विकास से पूर्व चित्रों अथवा विभिन्न संकेतों के माध्यम से सूचना-संप्रेषण का काम किया जाता था। पत्र-लेखन में क्षमता प्राप्त करना प्रत्येक सभ्य एवं शिष्ट व्यक्ति की कामना होती है। पत्र को हम विश्वबंधुत्व का एक प्रबल माध्यम भी कह सकते हैं। दुनिया के अनेक साधारण और असाधारण व्यक्तियों ने पत्रों के द्वारा मित्र बनाकर जीवन में महती सफलता प्राप्त की है। हर व्यक्ति किसी न किसी रूप में इन पत्रों से जुड़ा हुआ है। किसी भी महापुरुष, नेता, साहित्यकार द्वारा लिखे गए पत्रों के द्वारा हम उसकी चिंतनकला, विचारधारा, जीवन दर्शन, देश-विदेश नीति तथा अन्य बहुत-सी उपयोगी क्षेत्रों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

4.2.1 प्रभावी पत्र लेखन की विशेषताएं

पत्र लेखन की विशेषताएं निम्न हैं-

1. **स्पष्टता**–पत्र किसी भी प्रकार का हो, उसमें स्पष्टता होनी चाहिए, यदि कोई पत्र-प्राप्तकर्ता पत्र लिखने वाले के मंतव्य को स्पष्ट रूप से ग्रहण न कर पाए तो ऐसी स्थिति में पत्र का उद्देश्य खत्म हो जाता है।
2. **संक्षिप्तता**–संक्षिप्तता एक आदर्श पत्र-लेखन का मूलभूत गुण है। अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए आवश्यक शब्दों का प्रयोग ही करना चाहिए। एक अच्छा पत्र तभी संक्षिप्त माना जाता है, जब उसमें प्रयुक्त किया गया एक-एक शब्द उपयोगिता और आवश्यकता लिए हुए हो।

टिप्पणी

3. **मौलिकता**–पत्र की प्रस्तुति नवीन और मौलिक ढंग से होनी चाहिए। ऐसा करने से जहां कही हुई बात पत्र-प्राप्तकर्ता के हृदय को प्रसन्न करती है, वहीं उस पर अपना एक विशेष प्रभाव भी छोड़ती है।
4. **सुसंबद्धता**–पत्र लिखते समय जिस विषय का पत्र प्राप्तकर्ता तक पहुंचता है, प्रेषक उसी को मुख्य रूप से प्रस्तुत करे। पत्र में मुख्य विषय से हटकर कही गई कोई अन्य बात पत्र की एकान्विति या सुसंबद्धता को भंग कर देती है। पत्र में निर्दिष्ट सभी बातें एकसूत्रता या तारतम्यता में कही गई होनी चाहिए।
5. **यथार्थता**–इस गुण का संबंध मुख्य रूप से औपचारिक पत्रों से है, क्योंकि इस प्रकार के पत्रों में तथ्य-प्रस्तुति का होना आवश्यक होता है। औपचारिक पत्रों के व्यावसायिक और कार्यालयी– दोनों रूपों के पत्रों में यह गुण अहम् भूमिका निभाता है।
6. **संपूर्णता**–पत्र लिखने वाले के लिए यह जरूरी होता है कि वह अपने कथ्य या मंतव्य को संपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करे। उसे पढ़ने के उपरांत पत्र प्राप्तकर्ता के मन में किसी भी प्रकार की जिज्ञासा या शंका नहीं रहनी चाहिए।
7. **सहजता और सरलता**–सहजता का अर्थ है स्वाभाविकता। पत्र में लिखी हर बात सहज और अकृत्रिम होनी चाहिए। सरलता से अभिप्राय भाषा की सरलता से है। पत्र की भाषा में संप्रेषणीयता का गुण होना चाहिए।
8. **शालीनता**–शालीनता का गुण औपचारिक और अनौपचारिक दोनों प्रकार के पत्रों में आवश्यक है। इसमें पत्र लिखने वाले के व्यक्तित्व, प्रतिष्ठा, पद, व्यावहारिक आचरण और स्वभाव की झलक स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।
9. **प्रभावान्वित**–उत्कृष्ट पत्र-लेखन का महत्वपूर्ण गुण उसका समग्र प्रभावान्वित होना है। पत्र की भाषा, शैली और प्रस्तुतीकरण इस प्रकार होना चाहिए कि पत्र प्राप्तकर्ता के हृदय पर विशेष छाप छोड़े।

पत्र-लेखन में विशेष उल्लेखनीय बातें

पत्र एक ऐतिहासिक दस्तावेज है, जो लिखने वाले के हाथ से छूटकर किसी अन्य के हाथ में जाता है। उसका सदुपयोग अथवा दुरुपयोग भी हो सकता है। किसी ने ठीक ही कहा है कि बोलते समय एक बार सोचो और लिखते समय तीन बार। भावावेश में कभी मत लिखो। क्रोध, द्वेष आदि के आवेश में लिखे गए पत्रों के लिए बड़े-बड़े दिग्गजों को क्षमा-याचना करते हुए देखा गया है। लिख चुकने के बाद संपूर्ण पत्र को एक बार सावधानी से पढ़ लेना चाहिए, जिससे शीघ्रता में लिखी गई वर्तनी आदि की अशुद्धियों को ठीक किया जा सके तथा फालतू बातों को पत्र से काट दिया जाए। एक सफल पत्र तैयार करने के लिए, उसे काट-छांट आदि से बचाने के लिए समझदार लोग पत्र की कच्ची रूपरेखा पहले तैयार कर लेते हैं। प्राप्तकर्ता का पता लिफाफे आदि पर सावधानीपूर्वक लिखा जाना चाहिए, जिसमें जनपद, प्रांत तथा पिन कोड आदि का उल्लेख पत्र को उसके गंतव्य तक पहुंचाने के लिए अत्यंत अनिवार्य है। यदि पत्र में प्रमाण स्वरूप कुछ प्रमाण-पत्र लगाने पड़ें, तो उन पर पहले क्रमांक डालें, फिर पत्र के अंत में बाईं ओर उनका उल्लेख करें, जैसे-

संलग्नक– 1. हाई स्कूल प्रमाण-पत्र, 2. चरित्र प्रमाण-पत्र आदि।

टिप्पणी

4.2.2 पत्र–लेखन के प्रकार

पत्र-लेखन के निम्न प्रकार हैं-

1. कार्यालयी पत्र

राजकीय सहायता प्राप्त संस्थाओं एवं कार्यालयों द्वारा किसी भी संस्था, व्यक्ति या अन्य कार्यालयों को जो पत्र लिखे जाते हैं उन्हें कार्यालयी पत्र कहते हैं। कार्यालयी पत्रों की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

(क) **स्पष्टता**- पत्र की विषय-वस्तु बिल्कुल स्पष्ट होनी चाहिए, जिससे पत्र को पाने वाला उसके सही रूप को ग्रहण कर सके। पत्र-लेखक को पत्र की स्पष्टता का ध्यान रखना चाहिए।

(ख) **अचूकता–** पत्र लिखने वाले को कार्यालयी पत्र लिखते समय उसमें प्रस्तुत विधान, अवतरण, संदर्भ और उसके तथ्य को ध्यान में रखना चाहिए। इसके लिए बहुत सावधानी से उसका मसौदा तैयार करना चाहिए।

(ग) **संक्षिप्तता–**पत्र लिखते समय अनावश्यक शब्द-प्रयोग, एक ही बात को बार-बार न लिखकर पत्र को संक्षिप्त व केवल आवश्यक जानकारी देते हुए लिखना चाहिए।

(घ) **परिपूर्णता–**परिपूर्ण पत्र हम उसे कहेंगे जिसमें पत्र के विषय और उद्देश्य से संबंधित सारी जानकारियां उस पत्र में आ जाएं। पूर्णता के लिए हस्ताक्षर, दिनांक, क्रमांक का होना आवश्यक है।

(ङ) **भाषा–**व्याकरण की दृष्टि से कार्यालयी पत्र की भाषा शुद्ध, सरल एवं स्पष्ट होनी चाहिए।

कार्यालयी पत्र के रूप

केंद्र सरकार के विभिन्न कार्यालयों में अनेक स्तर पर पत्राचार होता है जिसके अनेक रूप होते हैं, जिनका संक्षिप्त रूप में विवरण किया जा रहा है। ये पत्र निम्न प्रकार के होते हैं-

1. सरकारी पत्र- कार्यालयी पत्रों में सरकारी पत्रों का प्रयोग सबसे अधिक किया जाता है। इन्हें आधिकारिक एवं नियमित पत्र भी कहते हैं। सरकारी पत्रों का प्रयोग एक सरकार द्वारा दूसरी सरकार को, उसके अधीन राज्य सरकार को, निर्वाचन आयोग को, संघ लोक सेवा आयोग, योजना आयोग, अर्ध-सरकारी आयोगों एवं निकायों को, विभिन्न अर्ध-सरकारी/गैर सरकारी संघों, संरचनाओं, प्रांतीय सरकारों के प्रमुख मामलों में भारत सरकार को तथा अपने क्षेत्र के उच्च न्यायालयों, आयोगों एवं निगमों, विभागीय अध्यक्षों एवं अधिकारियों को, सरकार से अलग सार्वजनिक प्रतिष्ठानों एवं स्वतंत्र कार्यालयों आदि के लिए किया जाता है।

निम्नलिखित बातों का सरकारी पत्र लिखते समय ध्यान रखना चाहिए-

1. पत्र की संख्या
2. कार्यालय का नाम
3. प्रेषक का नाम एवं पद
4. प्राप्तकर्ता का नाम, पद एवं पता
5. दिनांक
6. संबोधन
7. पत्र की मुख्य विषय वस्तु
8. स्वनिर्देश
9. हस्ताक्षर
10. संलग्नक, यदि हो तो

टिप्पणी

सरकारी पत्र के कुछ उदाहरण आगे दिए जा रहे हैं जो निम्न प्रकार से हैं-

उदाहरण 1

नई दिल्ली
दिनांक 6 जुलाई 2015

प्रेषक:

विनोद कुमार शर्मा
डेस्क अधिकारी
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
नई दिल्ली।

सेवा में,

अध्यक्ष
महाराष्ट्र हिन्दी परिषद
पुणे-38

विषय: हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए स्वैच्छिक संस्थाओं को आर्थिक सहायता योजना के तहत दिए जाने वाले अनुदान के संबंध में।

महोदय,

आपके दिनांक 12 मई, 2015 के पत्र संख्या 1/02/15 के संबंध में मुझे यह कहने का निर्देश हुआ है कि आप अपना प्रस्ताव निर्धारित प्रपत्र में सभी आवश्यक विवरण/दस्तावेज के साथ इस मंत्रालय को यथाशीघ्र प्रेषित करें, ताकि इस संबंध में कार्यवाही की जा सके।

संलग्न: योजना की प्रति

भवदीय
विनोद कुमार शर्मा
डेस्क अधिकारी

उदाहरण 2

भारत सरकार

क्रम संख्या 02/102/9/05
सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय
दिनांक: 5 जून, 2015

सेवा में,

महानिदेशक
आकाशवाणी, नई दिल्ली।

विषय: निदेशक के पद का स्थायीकरण

टिप्पणी

महोदय,

उपर्युक्त विषय पर आपके दिनांक 10 अप्रैल, 2015 के पत्र संख्या 10/100/6 के संदर्भ में मुझे यह सूचित करने का निर्देश हुआ है कि राष्ट्रपति ने सूचना एवं प्रसारण सेवाओं के महानिदेशालय में विद्यमान अस्थायी निदेशक के पद को दिनांक 1 जुलाई 2015 से स्थायी बनाने हेतु स्वीकृति प्रदान कर दी है।

उक्त स्वीकृति हेतु वित्त मंत्रालय ने अपनी सहमति दिनांक 15 मई, 2015 की अपनी औपचारिक टिप्पणी संख्या 11/110 वि, के अनुसार प्रदान की है।

भवदीय

ह.

सूर्य प्रकाश शर्मा
अवर सचिव, भारत सरकार
नई दिल्ली

उदाहरण 3

दिनांक 10 जनवरी, 2015

संदर्भ सं./षा.प्र.इ/900/84

प्रेषक :

शाखा प्रबंधक
इटावा

श्री रमेश मिश्र
16, कृष्णा कुंज
राजनाथ चौक, पाली

विषयः जमाराशि-आपका बचत बैंक खाता सं. 1369

प्रिय महोदय,

आपको सादर सूचित किया जाता है कि हमने अपने बैंक की इस शाखा में उपरोक्त खाते में रुपए 1,60,768 (रुपए एक लाख साठ हजार सात सौ अड़सठ) की राशि जमा कर दी है। यह राशि आपकी भविष्य निधि की है।

भवदीय

ह.

शाखा प्रबंधक

टिप्पणी

2. **अर्ध-सरकारी पत्र-** सरकारी कार्यों के लिए अर्ध-सरकारी पत्रों का प्रयोग निम्नलिखित उद्देश्यों के लिए किया जाता है-

(क) पत्र पाने वाले का ध्यान किसी भी विषय की तरफ व्यक्तिगत रूप से आकर्षित करना।

(ख) किसी भी सरकारी कार्य को करने की विधि के बारे में अधिकारियों द्वारा बिना किसी औपचारिकता के आपस में विचार-विमर्श करना।

(ग) यदि कोई समस्या सरकारी अनुस्मारक देने पर भी नहीं सुलझती, तो उसे जल्दी निपटाने के लिए किसी विशेष अधिकारी का ध्यान आकर्षित करना।

अर्ध-सरकारी पत्र अधिकतर विशेष अधिकारी को ही लिखा जाता है। इसमें भेजने वाले की भाषा सरल, स्पष्ट एवं विनम्र होनी चाहिए। पत्र के अंत में भेजने वाले के केवल हस्ताक्षर ही होते हैं, उसके पद का नाम आदि नहीं लिखा जाता है।

उदाहरण 1

भारतीय साधारण बीमा निगम

संदर्भ सं./6 (अ.स.प.) 2015
प्रधान कार्यालय
मुंबई

दिनांक 25 जून, 2015

प्रिय श्री डॉ. सौरभ,

आपके आंचलिक प्रबंधक के पत्र से ज्ञात हुआ है कि आपने हाल ही में पीएच. डी. की उपाधि प्राप्त कर ली है। आपके द्वारा अर्जित इस उच्च स्तरीय शैक्षिक उपाधि पर हमें गर्व है। इस अवसर पर हमारे प्रबंधक महोदय एवं समस्त कर्मचारियों की ओर से हार्दिक बधाई स्वीकार करें। आशा है, आपका अर्जित ज्ञान निगम में हिन्दी के प्रयोग में वृद्धि के लिए सहायक सिद्ध होगा।

शुभकामनाओं सहित

आपका

ह.

(प्रहलाद शर्मा)

डॉ. सौरभ जोशी
राजभाषा अधिकारी
भारतीय साधारण बीमा निगम,
आंचलिक कार्यालय, पुणे-24

टिप्पणी

उदाहरण 2

(अर्ध-सरकारी पत्र)

अ. सं. पत्र संख्या 5-6/70-75

भारत सरकार
रेल मंत्रालय
नई दिल्ली

दिनांक 22 अप्रैल, 2015

प्रिय श्री नायडू जी,

आपका ध्यान इस मंत्रालय के पत्र दि. 3 मार्च, 2011 के क्रम संख्या 5/12/23-25 की ओर आकृष्ट किया जाता है। उक्त पत्र में कर्मचारियों को स्थायी करने के संदर्भ में विशिष्ट नियमावली की प्रतिलिपि मांगी गई थी, ताकि केंद्रीय मंत्रालय से संबंधित निर्देशों का अध्ययन किया जा सके, परंतु अभी तक नियमावली की प्रतिलिपि प्राप्त नहीं हुई है।

नियमावली के न मिलने के कारण, स्थायी न किए जाने वाले कर्मचारियों में असंतोष की भावना पनपती जा रही है, इसलिए शीघ्र ही नियमावली भेजने की व्यवस्था करें, ताकि इस संबंध में इस कार्यालय में उचित कार्यवाही की जा सके।

आपका
ह.
(कमल प्रसाद द्विवेदी)

श्री नायडू
संयुक्त सचिव, वित्त मंत्रालय
भारत सरकार, नई दिल्ली।

3. **कार्यालय ज्ञापन**–कार्यालय ज्ञापन का प्रयोग सरकार के विभिन्न मंत्रालयों के बीच आपस में संपर्क करने एवं सूचना देने के अलावा मंत्रालयों के अधीन कार्यालयों, विभागों तथा अधिकारियों के पास कोई सूचना भेजने के लिए किया जाता है। इस तरह के पत्र अन्य पुरुष में लिखे जाते हैं।

उदाहरण

भारत सरकार
रक्षा मंत्रालय
नई दिल्ली

सं. 10/12/75

दिनांक 10 नवम्बर 2015

विषय: राष्ट्रीय सैनिक स्कूल पूना में हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकों का अभाव।

इस मंत्रालय के दिनांक 2 सितंबर, 2011 के पत्र संख्या 4/11/70 के संदर्भ में अधोहस्ताक्षरी को यह निवेदन करने का निर्देश हुआ है कि रक्षा मंत्रालय द्वारा संचालित सैनिक स्कूलों में शिक्षा मंत्रालय द्वारा तैयार की गई हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकें समान रूप से निर्धारित की गई हैं। इस मंत्रालय को यह सूचना मिली है कि राष्ट्रीय सैनिक स्कूल, पूना को वे पाठ्य-पुस्तकें अभी प्राप्त नहीं हुई हैं।

अत: अनुरोध किया जाता है कि सैनिक स्कूल, पूना को हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकें यथाशीघ्र भिजवाने की व्यवस्था की जाए, ताकि जनवरी में स्कूल खुलते ही छात्रों को पुस्तकें प्राप्त हो सकें।

ह.
भाग चंद
अवर सचिव, भारत सरकार

सेवा में
अपर सचिव, शिक्षा मंत्रालय
भारत सरकार, नई दिल्ली।

4. **ज्ञापन**- सरकारी कार्यालयों में ज्ञापन का प्रयोग कर्मचारियों की नियुक्तियों, अधिकारियों की नियुक्तियों, तैनातियों, स्थानांतरण, वेतनवृद्धि, प्रार्थनापत्रों, याचिकाओं, आवेदन-पत्रों की स्वीकृति के लिए किया जाता है। इसके अलावा, कार्यालयों को आवश्यक आदेश आदि भेजने के लिए भी ज्ञापन का प्रयोग किया जाता है। इसमें संबोधन और स्वनिर्देश नहीं होता तथा ज्ञापन के अंत में भेजने वाले का पद व हस्ताक्षर होते हैं।

उदाहरण

भारत सरकार
स्वास्थ्य मंत्रालय

नई दिल्ली 23 जून, 2015

क्रम संख्या 27/13/86 अ.ब.

विषय: प्राथमिक पाठशालाओं के छात्रों के स्वास्थ्य की जांच संबंधी व्यवस्था।

भारत सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय ने यह निर्णय लिया है कि सभी राज्यों में प्राथमिक शाला में पढ़ने वाले छात्रों के स्वास्थ की जांच की जाए।

इसीलिए सभी राज्य सरकारों से यह अनुरोध है कि वे इस दिशा में शीघ्र कदम उठाएं।

पी.एल. माथुर
अवर सचिव, भारत सरकार

प्रतिलिपि प्रेषित:
भारत की सभी राज्य सरकारों को।

5. **अनुस्मारक**- जब किसी मंत्रालय या कार्यालय से, पूर्व पत्र में मांगी गई सूचना, निर्णय या टिप्पणी समय पर प्राप्त नहीं होती उस समय अनुस्मारक का प्रयोग किया जाता है। अनुस्मारक सरकारी और अर्ध-सरकारी पत्र के रूप में लिखा जा सकता है।

उदाहरण 1

अ.स. पत्र संख्या 6/12/24

दिनांक 6 जुलाई 2015
सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया
प्रधान कार्यालय, मुम्बई

टिप्पणी

टिप्पणी

विषय : बैंक की हिन्दी प्रयोग रिपोर्ट संबंधी

सेवा में,

श्री विकास गुप्ता

हिन्दी अधिकारी

क्षेत्रीय कार्यालय

महोदय,

हम आपका ध्यान इस कार्यालय के दिनांक 4 दिसंबर, 2011 के परिपत्र सं./प्र./हिन्दी/100 की ओर आकृष्ट कराते हैं, जिसमें बैंक की हिन्दी प्रयोग संबंधी रिपोर्ट तुरंत भेजने के निर्देश दिए गए थे। हमें खेद है कि आपके अंचल क्षेत्र की रिपोर्ट हमें अभी तक प्राप्त नहीं हुई है। कृपया उक्त रिपोर्ट तुरंत भेज दें।

भवदीय

संजय त्यागी

वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी

उदाहरण 2 (ज्ञापन)

संख्या-च-403/28/78

रेल सेवा आयोग **दिनांक 3 मई, 2015**

दक्षिण क्षेत्र, चेन्नई

सेवा में,

श्री विश्वनाथ शास्त्री

भरतपुर, राजस्थान

विषय: टी. एक्स. आर. पद का चुनाव।

श्री विश्वनाथ शास्त्री को सूचित किया जाता है कि वे जनवरी, 2015 में ली गई उक्त पद की चयन-परीक्षा में उत्तीर्ण घोषित किए गए हैं, अत: वे 20 मई, 2015 को प्रातः 10.00 बजे डॉक्टरी जांच के लिए इस कार्यालय में उपस्थित हों।

विकास शर्मा

उपाध्यक्ष,

रेलवे सर्विस कमीशन

6. **परिपत्र**- परिपत्र के माध्यम से मंत्रालयों व विभिन्न विभागों द्वारा उनके अधीनस्थ कार्यालयों, विभागों तथा अनुभागों को सूचना, निर्देश और आदेश भेजे जाते हैं।

टिप्पणी

उदाहरण 1.

ओरिएंटल बैंक ऑफ कॉमर्स

विभागीय कार्यालय

दिनांक 25 मार्च, 2015

सेवा में,

शाखा प्रबंधक,

ओरिएंटल बैंक ऑफ कॉमर्स

विषय: प्रस्तावित शाखाओं के लिए कर्मचारियों से स्थानांतरण के आवेदन-पत्र की मांग।

सूचित किया जाता है कि निम्नलिखित स्थानों पर हमारे बैंक की शाखाएं खोलने का प्रस्ताव है-

1. हबीबगंज (लखनऊ)
2. सीतापुर
3. कटरा रामजस
4. भाटापारा

अत: बैंक के कार्यरत कर्मचारियों से टंकक, लिपिक, खजांची तथा अधीनस्थ पदों के लिए आवेदन-पत्र आमंत्रित किए जा रहे हैं। इच्छुक कर्मचारी अपना आवेदन-पत्र शाखा-प्रबंधक के माध्यम से निम्नलिखित बातों की जानकारी देते हुए भेज सकते हैं-

1. आवेदक का नाम व पता।
2. बैंक में सेवा आरंभ की तिथि।
3. वर्तमान कार्य का स्वरूप।
4. आहरित विशेष भत्ते, यदि हों।
5. चुने गए स्थानों के क्रम।

आवेदन पत्र इस कार्यालय में दो सप्ताह के अन्दर पहुंच जाने चाहिए।

भवदीय

सहायक विभागीय प्रबंधक

(प्रशासन)

उदाहरण 2

नई दिल्ली, 28 जून 2015

संख्या सा./परि./100

भारतीय डाक तार विभाग,

डाक तार महानिदेशालय

7. **कार्यालय आदेश**-कार्यालय आदेश का प्रयोग किसी अधिकारी के द्वारा मंत्रालय, विभाग, प्रभाग, अनुभाग एवं कार्यालय के कर्मचारियों के लिए संबंधित कार्य करने के लिए किया जाता है। अधिकारी द्वारा दिए गए आदेशों का पालन करना संबंधित कर्मचारियों का कर्तव्य हो जाता है। अधिकतर ये कार्यालय आदेश कर्मचारियों की छुट्टी मंजूर करने के लिए, वेतन-वृद्धि जारी करने, पदोन्नति करने या उसे रोकने के लिए, प्रयोग किए जाते हैं।

टिप्पणी

उदाहरण-

भारत सरकार

रेल मंत्रालय

नई दिल्ली

क्रम संख्या 100/1

दिनांक 10 जुलाई 2015

कार्यालय आदेश

भारतीय रेल सेवा में अधीक्षक के पद पर नियुक्त डॉ. नरेंद्र को, उनकी पदवृद्धि पर दिनांक 1 अगस्त, 2010 से रेल मंत्रालय के सचिवालय से स्थानापन्न रूप में प्रशासन अधिकारी के पद पर नियुक्त किया गया है। अगले आदेश तक उनकी नियुक्ति सामान्य अनुभाग 'अ' में कर दी गई है।

रीना कुमारी

अपर सचिव, भारत सरकार

प्रतिलिपि निम्नलिखित को सूचनार्थ भेजी जाती है-

1. मंत्रालय के सभी विभाग, अनुभाग।
2. डॉ. सुरेशचंद्र, प्रशासन अधिकारी।

   सामान्य अनुभाग 'अ'

8. **सूचना**–कई बार सरकार जन-साधारण को या किन्हीं संबंधित व्यक्तियों को सूचित करने के लिए, नौकरी हेतु रिक्त स्थानों की, नीलामी की, निविदा की, न्यायालयीन नोटिस की, कार्यालय के स्थान परिवर्तन की सूचनाएं प्राय: समाचार-पत्रों में प्रकाशित करवाती है। लेकिन इन सूचनाओं का रूप प्रेस नोट व प्रेस विज्ञप्तियों से बिल्कुल अलग होता है। इसमें सूचना प्रकाशित करने वाले कार्यालयों का नाम और अंत में हस्ताक्षरकर्ता का नाम व पता लिखा जाता है। ये सूचनाएं संक्षिप्त, स्पष्ट व सुनिश्चित होती हैं।

उदाहरण

दिनांक 8 जनवरी 2015

महाराष्ट्र सरकार

(पुलिस विभाग)

टेंडर सूचना

महाराष्ट्र राज्य पुलिस विभाग द्वारा पुलिस कर्मचारियों की वर्दियां बनवाने के लिए स्वीकृत ठेकेदारों से 30 जनवरी, 2015 को दोपहर 2.00 बजे तक मुहर बंद टेंडर आमंत्रित किए जाते हैं।

विशिष्ट विवरणों की सूची प्रति सेट 5 रुपए अदा करने पर अधोहस्ताक्षरी के कार्यालय से प्राप्त की जा सकती है।

टिप्पणी

यदि कोई अन्य जानकारी अपेक्षित हो तो ठेकेदार 29 जनवरी, 2015 तक प्रतिदिन दोपहर 2.00 बजे से 3.00 तक अधोहस्ताक्षरी से व्यक्तिगत रूप से मिल सकते हैं।

ह.

पुलिस अधीक्षक

महाराष्ट्र राज्य पुलिस

9. **प्रेस विज्ञप्ति**- सरकार के किसी भी निर्णय को विस्तृत रूप में प्रचारित करने के लिए प्रेस विज्ञप्ति या प्रेस नोट का प्रयोग किया जाता है। इन्हें समाचार-पत्रों में ही प्रकाशित किया जाता है। प्रेस विज्ञप्ति किसी विषय पर सरकार का नपा-तुला बयान है और प्रेस नोट सरकार की ओर से दी जाने वाली जानकारी है।

उदाहरण

सोमवार, दिनांक 2 अगस्त, 2015 को सायंकाल 5.00 बजे से पूर्व प्रसारित, प्रकाशित न किया जाए।

प्रेस विज्ञप्ति

विषय: भारत तथा पाकिस्तान के बीच राजनैतिक संबंध।

भारत सरकार और पाकिस्तान की सरकार इस बात पर सहमत हो गई हैं कि दोनों के बीच मित्रतापूर्ण संबंध स्थापित किए जाएं। आशा है कि इस व्यवस्था से दोनों देशों में पारस्परिक संबंध और भी अधिक सुदृढ़ हो जाएंगे, जो दोनों के लिए लाभकारी होंगे।

मुख्य सूचना अधिकारी, प्रेस ब्यूरो, नई दिल्ली को प्रेस विज्ञप्ति जारी करने तथा उसे विस्तृत रूप से प्रसारित करने के लिए प्रेषित।

ह.

ललित पांडे

अपर सचिव, भारत सरकार

विदेश मंत्रालय

नई दिल्ली,

दिनांक 15 जुलाई 2015

(इसके प्रारंभ में यह निर्देश होता है कि इसे कब छापा जाए। यह निर्देश नकारात्मक होता है)

10. **अन्य कार्यालयों के पत्र**–सरकारी कार्यालयों के अलावा अन्य कार्यालय भी होते हैं। इनमें बस इतना ही अंतर होता है कि सरकारी कार्यालयों के पत्रों की एक निश्चित रूपरेखा होती है, जबकि अन्य कार्यालयों के पत्रों को लिखते समय आवश्यकतानुसार छूट ली जा सकती है। अन्य कार्यालयों में– सेवाभावी संस्थाओं के कार्यालय, विश्वविद्यालयों व महाविद्यालयों के कार्यालय तथा व्यावसायिक प्रचार/विस्तार/शर्तों आदि के लिए स्थापित किए गए कार्यालय आते हैं। इनमें अधिकतर सरकारी पत्र, अर्ध-सरकारी पत्र, ज्ञापन, परिपत्र, सूचना, तार आदि का प्रयोग किया जाता है।

टिप्पणी

उदाहरण 1

दिनांक 12 जून 2011

विद्या बुक्स

(विद्यालयी एवं महाविद्यालयी पुस्तकों के वितरक व विक्रेता)

58, नेताजी सुभाषचन्द्र मार्ग,

तार: विद्या, अहमदाबाद

दूरभाष 3517

सेवा में,

श्री सन्मार्ग प्रकाशन

दिल्ली-110007

प्रिय महोदय,

कृपया लौटती डाक से अपने प्रकाशनों का नवीनतम सूचीपत्र भिजवाने का कष्ट करें, साथ ही अपनी व्यावसायिक शर्तें भी लिखें। यदि आपकी शर्तें संतोषजनक और आकर्षक पाई गईं तो आपके प्रकाशन की पुस्तकें हम अपनी दुकान में विक्रय के लिए रखना चाहते हैं।

आपका पत्र मिलने पर आपको पुस्तकों के लिए आदेश भेजा जाएगा।

धन्यवाद।

भवदीय

व्यवस्थापक

विद्या बुक्स

अहमदाबाद

2. व्यावसायिक पत्र

पत्र लिखना अपने आप में एक कला है। यह प्राचीन समय से चली आ रही है, व्यावसायिक जगत में मौखिक शब्दों की अपेक्षा लिखित शब्दों का महत्व अधिक है, क्योंकि व्यावसायिक क्षेत्रों में पत्र अपना अलग ही महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। अत: इस क्षेत्र में भी पत्र लिखने की अपनी ही एक कला होती है, ऐसे पत्र बड़ी सूझ-बूझ के साथ लिखे जाते हैं। इस सूझ-बूझ के बिना हम अपनी समस्या और कार्य सही रूप में नहीं करवा सकते। व्यावसायिक क्षेत्र में मूल्य-पत्र, विज्ञापन-पत्र, क्रयादेश-पत्र, विक्रय-पत्र, अनुरोध-पत्र एवं निविदा पत्र आदि आते हैं। वर्तमान समय में व्यावसायिक क्षेत्र में पत्रों का अपना अलग ही महत्व है।

पत्र कई प्रकार के होते हैं। व्यक्ति, संदर्भ, विषय और क्षेत्र के अनुसार पत्रों को लिखने का तरीका भी अलग-अलग होता है। व्यावसायिक पत्रों को लिखते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए–

टिप्पणी

(क) **प्रेषक का नाम व पता**–व्यावसायिक पत्रों में सबसे ऊपर प्रेषक का नाम व पता लिखा होता है, जिससे पत्र पाने वाले को पत्र देखते ही पता चल जाता है कि पत्र किसने भेजा है तथा कहां से आया है। प्रेषक का नाम व पता ऊपर दाएं कोने में लिखा जाता है। साथ में फोन नं. फैक्स नंबर तथा ई-मेल आदि भी लिखा जाता हैं।

(ख) **पत्र पाने वाले का नाम व पता**– पत्र के बायीं ओर पत्र प्राप्त करने वाले का नाम व पता लिखा जाता है तथा कभी-कभी उसका केवल नाम या पदनाम या दोनों भी दिए जाते हैं। जैसे-नाम, पदनाम, कार्यालय का नाम, स्थान, जिला, शहर व पिन कोड आदि।

(ग) **विषय संकेत**- व्यावसायिक पत्रों में यह आवश्यक है कि पत्र पाने वाले के नाम व पते के पश्चात बायीं ओर जिस विषय में पत्र लिखा गया हो, उस विषय को संक्षेप में लिखा जाए, ताकि जिससे पत्र को देखते ही पता चल जाए कि पत्र किस विषय में है और उसे आगे की कार्यवाही के लिए उससे संबंधित अधिकारी के पास भेजा जा सके। उदाहरण के लिए-विषय-नियुक्ति पत्र।

(घ) **संबोधन**–पत्र भेजने वाला सबसे पहले, पत्र पाने वाले के लिए आवश्यकतानुसार विभिन्न प्रकार के संबोधन सूचक शब्दों का प्रयोग करता है। जैसे- प्रिय महोदय, या प्रिय महोदया, माननीय/मानवीय, महामहिम आदि।

(ङ) **पत्र की मुख्य सामग्री**– संबोधन के बाद हम पत्र के मूल विषय पर आते हैं। यह नये पैराग्राफ से शुरू किया जाता है। यदि व्यावसायिक पत्रों में किसी विषय पर पहले पत्राचार हो चुका हो या हो रहा हो तो उसके संदर्भ में सबसे पहले संकेत दिया जाना चाहिए; जैसे- उपर्युक्त विषय पर कृपया दिनांक का अपना पत्र सं. देखें। कोई भी नया तथ्य, नवीन तर्क, नई मांग तथा नया स्पष्टीकरण अलग अनुच्छेद से ही शुरू करना चाहिए। व्यावसायिक पत्रों में विषयों को एक-दूसरे से अलग रखना चाहिए, आपस में मिलाना नहीं चाहिए।

(च) **अभिव्यक्ति शैली**- हमारे पत्र लिखने की शैली स्पष्ट होनी चाहिए, इसकी भाषा स्पष्ट, सरल व सहज होनी चाहिए। वाक्य छोटे होने चाहिए। पत्र पूरी तरह स्पष्ट होना चाहिए, जिससे प्राप्त करने वाले के मन में संदेह न रहे। अगर यह सब बातें पत्र में नहीं होंगी तो पत्र प्राप्त करने वाला पत्र पढ़कर संतुष्ट नहीं हो पाएगा। इससे उसे नाराजगी भी हो सकती है।

(छ) **समापन सूचक शब्द**– पत्र समाप्त होने पर भेजने वाला अपने हस्ताक्षर से पहले प्राप्तकर्ता से अपने संबंध के विषय में कुछ शब्दों का प्रयोग करता है। जैसे- आपका आज्ञाकारी, विनीत, शुभाकांक्षी आदि। व्यावसायिक पत्रों में अधिकतर 'भवदीय' शब्द का प्रयोग होता है। आज के समय में ऐसे पत्रों में बाएं कोने में यह सब लिखा जाता है। पहले दाहिने तरफ लिखा जाता था।

(ज) **हस्ताक्षर और नाम**– पत्र समाप्ति के बाद नीचे भेजने वाले के हस्ताक्षर और फिर उसका पूरा नाम कोष्ठक में दिया जाता है। कभी-कभी बड़े अधिकारी की ओर से कोई अन्य अधिकारी या कर्मचारी पत्र पर हस्ताक्षर करता है तो ऐसे में 'कृते' प्राचार्य, 'कृते' निदेशक आदि लिखा जाता है।

टिप्पणी

(झ) **संलग्नक–** मूल पत्र के साथ कभी-कभी जरूरी कागजात भी भेजने पड़ते हैं। उन्हें ही पत्र में 'संलग्न' या संलग्नक कहते हैं। 'संलग्नक' भवदीय शब्द के ठीक बायीं ओर लिखा जाता है। यहां पर 'संलग्न पत्र' शीर्षक लिखकर सब पत्रों या कागजों का विवरण संकेत के रूप में लिखा जाता है। ये संकेत संख्या 1, 2, 3 के द्वारा क्रमशः देनी चाहिए।

(ञ) **पुनश्च–** पुनश्च शब्द का अर्थ होता है- 'एक बार पुनः'। कभी-कभी पत्र लिखते समय कोई महत्वपूर्ण बात छूट जाती है। पत्र पूरा टाइप होकर आ जाता है। तब जो बात छूट गई है, उसको लिखने के लिए समापनसूचक शब्द, हस्ताक्षर, संलग्नक आदि लिखने के बाद अंत में सबसे नीचे 'पुनश्च' शीर्षक देकर छूटा हुआ अंश लिख दिया जाता है, फिर एक बार अपने हस्ताक्षर कर दिए जाते हैं।

व्यावसायिक पत्र का नमूना

रबर स्टाम्प

प्रेषक का नामः — पता
पद नाम — फैक्स संख्या ....
पत्र संख्या/संदर्भः............. — टेलीफोन नं. ....

पाने वाले का नाम — दिनांकः.......................
पद नाम
कार्यालय
पूरा पता

विषयः ....

प्रिय महोदय/महोदया

पत्र की विषय-वस्तु

आभार या धन्यवाद ज्ञापन

संलग्नकः 1. — समापन सूचक शब्द
2. — भवदीय
3. — हस्ताक्षर

सूचनार्थ प्रतिलिपि — (पूरा नाम)
1. नाम व पता............ — पद नाम
2. नाम व पता ....

पुनश्चः छूटा हुआ अंश लिखना

हस्ताक्षर

ऐसे पत्रों का संबंध व्यक्ति के अपने व्यवसाय से संबंधित होता है। एक व्यापारी/व्यापारिक संस्था की ओर से दूसरी व्यापारी संस्था के नाम लिखे जाने वाले पत्र को व्यावसायिक पत्र

टिप्पणी

कहते हैं। इसमें व्यापारी माल भेजने संबंधी निर्देश, नया माल मंगवाने के लिए, राशि के भुगतान के विषय में जानकारी देता है। इनकी भाषा सरल, सहज व स्पष्ट होती है।

व्यावसायिक पत्रों को हम निम्नलिखित भागों में बांट सकते हैं-

1. दर (मूल्य) जानने के लिए।
2. मूल्य-सूची मंगाने के लिए।
3. वस्तु-विशेष का नमूना मंगाने के लिए।
4. विक्रय-प्रस्ताव संबंधी पत्र।
5. क्रयादेश संबंधी पत्र।
6. व्यापारिक संदर्भ संबंधी पत्र।
7. भुगतान संबंधी पत्र।
8. बीमा-पत्र।
9. बैंक पत्र।
10. निविदा पत्र।
11. एजेंसी लेन-देन संबंधित पत्र।

व्यावसायिक पत्रों में संबोधन के लिए महोदय, प्रिय महोदय, मान्यवर व श्रीमान आदि का प्रयोग किया जाता है।

व्यावसायिक पत्र

बिजली के बिल की शिकायत संबंधी पत्र

पंजीकृत

51/10, शांति नगर, मेरठ — दिनांक -20-5-2015

सेवा में
अधिशासी अभियंता
मेरठ बिजली सप्लाई कंपनी
(वितरण शाखा)
मेरठ।

महोदय,

विषय-मीटर-संख्या एम. एल. 1050

निवेदन है कि इस बार उक्त मीटर संख्या के संबंध में मेरे पास अत्यधिक बढ़ा हुआ बिल भेजा है। पिछले दस वर्षों के अभिलेख द्वारा स्पष्ट हो जाएगा कि मेरा बिल 350 रुपए से अधिक कभी नहीं आया। परंतु इस बार के बिल की देय धनराशि 900 रुपए से अधिक दिखाई गई है। मेरी समझ में नहीं आता, इतना बिल क्यों भेजा गया है।

आपसे निवेदन है कि आप इस मामले में गंभीरतापूर्वक आवश्यक जानकारी प्राप्त करके पता लगाएं कि किस प्रकार से लापरवाही करके उपभोक्ता को परेशान करने का प्रयास किया गया है।

टिप्पणी

आशा है, आप आवश्यक कार्यवाही करके संशोधित बिल भिजवाने की कृपा करेंगे। मूल बिल संलग्न है।

सधन्यवाद

भवदीय

ह. महीपाल सिंह

संलग्नक-1

बिजली का मूल बिल

कुछ अन्य पत्रों का विवरण भी यहां दिया जा रहा है–

नियुक्ति स्वीकृति-पत्र

सेवा में,

प्रबंधक,

सर्वश्री जिंदल एंड कंपनी,

लाल डिग्गी सरदार शहर।

25/15 नागर कॉलोनी

खतौली

दिनांक 15 मई, 2015

महोदय,

मेरी नियुक्ति की स्वीकृति संबंधी आपका दिनांक 28.6.2015 का पत्र संदर्भ एल/252/2014-15 प्राप्त हुआ। मैं दिनांक 3.7.2015 को पूर्वाह्न कार्यभार संभालने हेतु आपके कार्यालय में उपस्थित होऊंगा।

सधन्यवाद

भवदीय

ह.

सौरभ मिश्रा

व्यावहारिक पत्र

पुत्र का माता के नाम पत्र

दिनांक-5 अप्रैल, 2015

बी.आर. अंबेडकर होस्टल

महाराजा कालेज, दिल्ली

आदरणीय माताजी,

सादर चरण स्पर्श।

आपका पत्र मुझे समय पर मिल गया था, लेकिन विश्वविद्यालय परीक्षा में व्यस्त होने के कारण मैं पत्र का उत्तर तुरंत नहीं दे पाया। मेरी चिंता बिलकुल भी न करें, मैं ठीक प्रकार से हूं। अब मेरा स्वास्थ्य भी ठीक है। यहां मेरी पढ़ाई ठीक चल रही है। सभी प्रोफेसर अच्छे

और छात्रों के शुभचिंतक हैं। वे खूब मन लगाकर पढ़ाते हैं और छात्रों की समस्याओं पर भी अच्छी तरह से ध्यान देते हैं।

होस्टल के वार्डन तो हम लोगों की फिक्र अपने बच्चों की तरह करते हैं। वे हमेशा इस बात का ध्यान रखते हैं कि छात्रों को किसी प्रकार का कष्ट न हो। मेरे कमरे का साथी भी बहुत अच्छा है और वह जयपुर का रहने वाला है। वहां उसके पिताजी का सोने-चांदी का कारोबार है। उसका व्यवहार मेरे प्रति भाई जैसा है। सायंकाल को हम लोग विश्वविद्यालय के क्रीड़ा मैदान पर हॉकी और वॉलीबाल खेलते हैं। विश्वविद्यालय की हॉकी की टीम में सदस्य के रूप में मेरा चयन हो गया है। टीम शीघ्र ही अंतर-विश्वविद्यालयी हॉकी प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए कोलकाता जाएगी। आप आशीर्वाद दें कि हमारी टीम विजयी होकर लौटे। मैं दशहरे की छुट्टियों में घर आऊंगा।

टिप्पणी

आप अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखें तथा पत्र का उत्तर शीघ्र देने की कृपा करें। रामू एवं राजी को आशीर्वाद। पिताजी को चरण स्पर्श।

आपका प्यारा बेटा

शिवांश

परीक्षा में असफल हो जाने पर भाई को धैर्य बंधाने हेतु पत्र

125-डी, साकेत, जयपुर

दिनांक -3 मई, 2015

प्रिय चिरंजीव अनिल,

शुभ आशीर्वाद।

आशा है, तुम सकुशल होगे। मुझे पिताजी द्वारा भेजे गए पत्र से ज्ञात हुआ कि तुम विश्वविद्यालय की मुख्य परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो गए हो। यह जानकर मुझे बहुत दुःख हुआ। मैं कभी सोच भी नहीं सकता था कि तुम विश्वविद्यालय की परीक्षा में फेल हो सकते हो। अवश्य ही कोई विशेष कारण रहा होगा जो तुम उत्तीर्ण नहीं हो पाए।

खैर, जो हुआ उसे अब भूल जाओ। दुःखी होने की आवश्यकता नहीं है। मत भूलो कि 'गिरते हैं शहसवार ही मैदान-ए-जंग में'। इस बार मैं कुछ और किताबें भेज रहा हूं। विश्वविद्यालय की परीक्षा के फार्म अगले माह निकलने वाले हैं। अभी से पूर्ण मनोयोग के साथ पढ़ाई शुरू कर दो। यदि जरूरत समझो तो ट्यूशन ले लेना। अन्य किसी मदद की आवश्यकता हो तो लिखना। मैं शीघ्र ही एक सप्ताह की छुट्टी लेकर घर आऊंगा। तब इस बारे में विस्तार से बात करेंगे।

पिताजी व माताजी को चरण स्पर्श। सोनू व प्रीति को आशीर्वाद।

सस्नेह

तुम्हारा शुभचिंतक

रंजन गर्ग

टिप्पणी

सामाजिक पत्र

पुरस्कार प्राप्ति पर बधाई पत्र

55/35 रेलवे रोड सहारनपुर

दिनांक-3 अप्रैल, 2015

प्रिय योगेश,

आज के समाचार-पत्र में यह पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई कि तुम्हें अपनी श्रेष्ठ रचना 'क्षितिज के पार' पर वर्ष 2014 का 'साहित्य श्री' पुरस्कार प्रदान करने की घोषणा भाषा साहित्य सम्मेलन द्वारा की गई। मेरे विचार से हिन्दी-साहित्य जगत में यह श्रेष्ठ पुरस्कार है। इसे प्राप्त करना वास्तव में असामान्य प्रतिभा का द्योतक है। इस दृष्टि से यह स्पृहणीय भी है। यह तुम्हारे अनवरत अध्ययन एवं अध्यवसाय का सुफल है। इसके लिए हार्दिक बधाई स्वीकार करो। ईश्वर से प्रार्थना है कि भविष्य में तुम्हें इससे भी उच्चतर श्रेणी का पुरस्कार व सम्मान मिले।

तुम्हारे इस प्रकार पुरस्कृत होने पर हमारे समस्त मित्र एवं शुभचिंतक अपने आपको गौरवान्वित अनुभव करते हैं।

हिन्दी के प्रति की गई तुम्हारी सेवाएं चिरस्मणीय रहेंगी। हमारी हार्दिक कामना है कि तुम अधिकाधिक उत्साह से मां भारती के भंडार को भरने में संलग्न रहो।

तुम्हारा शुभेषी

मनोज

वैवाहिक पत्र

मान्यवर,

श्रीमती एवं श्री...............

20/2, शास्त्री नगर, मेरठ

अपनी सुपुत्री

सौभाग्याकांक्षिणी...........

एवं

चिरंजीव...........

(सुपुत्र श्रीमती एवं श्री.........)

के

विवाह के शुभ अवसर पर

आपको सपरिवार सादर निमंत्रित करते हैं। कृपया कार्यक्रमानुसार सपरिवार सम्मिलित होकर उत्सव की शोभा बढ़ाएं और नव-युगल को आशीर्वाद प्रदान कर हमें कृतार्थ करें।

वैवाहिक कार्यक्रम

दिनांक ....

स्वागत बारात....................6 बजे सायं

वर स्वागत ....10 बजे रात्रि

दिनांक ....

विदा.............................तारों की छांव में

उत्तराकांक्षी	दर्शनाभिलाषी
....	....
....	....

टिप्पणी

4.3 संक्षेपण, पल्लवन एवं टिप्पण

4.3.1 संक्षेपण

'संक्षेप' शब्द से 'संक्षिप्त' बना है, जिसका अर्थ है लघु या छोटा। संक्षेपण उस विधि को कहते है जो विस्तृत को लघु अथवा बड़े को छोटा करने की प्रक्रिया को व्यक्त करता है। संक्षिप्तीकरण से तात्पर्य किसी ऐसे लेख आदि से है जो किसी बड़े आकार वाले लेख, निबंध तथा वक्तव्य आदि का संक्षिप्त किया हुआ अथवा सार रूप में प्रस्तुत किया हुआ रूप है।

• संक्षेपण का महत्व

आधुनिक समाज में सबके लिए एक ऐसे मानसिक प्रशिक्षण की आवश्यकता है, जिसमें कम से कम शब्दों का प्रयोग करते हुए लेखन संबंधी कामकाज को त्वरित ढंग से पूरा किया जा सकता हो। संक्षेपण की इस कला और कुशलता से छात्रों के पठन पाठन तथा लेखन में भी सरलता, स्पष्टता, स्वच्छता और प्रभावकारिता जैसी विशेषताएं उत्पन्न होती हैं। उसमें शब्द-संयम, भाव संयम और चिंतन संयम की क्षमता बढ़ती है। अतः हम कह सकते हैं कि संक्षेपण से हमारे श्रम और समय की बचत होती है।

• संक्षेपण की विधि

1. मूल पाठ को सावधानीपूर्वक तब तक पढ़ा जाए (एक, दो, तीन बार तक) जब तक उसका आशय पूर्णतः स्पष्ट न हो जाए।
2. वाचन के बाद पाठ के मुख्य बिंदुओं को रेखांकित कर दिया जाए।
3. उसके बाद केंद्रीय भाव को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त शीर्षक का चुनाव किया जाए। अच्छे शीर्षक का चयन छात्र की योग्यता और बुद्धिमता का परिचायक होता है।
4. रेखांकित किए गए मूल बिंदुओं अथवा मुख्य कथनों को ध्यान में रख कर अपनी शब्दावली में उसको स्पष्ट करें।
5. मूल पाठ को अनिवार्य रूप से एक-तिहाई कलेवर में लिखने का प्रयास करें।
6. उत्तम पुरुष अथवा मध्यम पुरुष के स्थान पर अन्य पुरुष का प्रयोग किया जाए।
7. इस प्रारूपण में से भी अनावश्यक बातों और शब्दों को काट-छांट कर प्रारूप को अंतिम रूप दिया जाए।

अपनी प्रगति जांचिए

1. पत्र-लेखन किस हिन्दी का प्रमुख कार्य है?
2. स्पष्टता, संक्षिप्तता और मौलिकता किस प्रकार के लेखन से संबंधित है?
3. सही-गलत बताइए-
   (क) सरकार के किसी भी निर्णय को प्रचारित की गई सूचना या नोट को प्रेस विज्ञप्ति कहा जाता है।
   (ख) अंग्रेजी के ड्राफ्ट शब्द का प्रयोग पल्लवन के लिए किया जाता है।

टिप्पणी

8. संक्षेपण को अंतिम रूप देने से पहले उसका प्रारूप अथवा रूपरेखा तैयार करनी चाहिए।
9. अवतरण के मूल कथ्य की आलोचना कभी न की जाए। उदाहरणों, दृष्टांतों अथवा लोकोक्तियों व मुहावरों तथा जहां तक हो सके, विशेषणों आदि से भी बचना चाहिए और सीधे उद्धृत अंश अथवा अवतरण के मूल कथ्य पर ही ध्यान केंद्रित रखना चाहिए। एक आदर्श संक्षेपण में, मूल कथ्य में न तो लेखक अपनी ओर से कुछ जोड़ता है और न कुछ कम करता है।
10. एक आदर्श संक्षेपण में बोधगम्यता, संक्षिप्तता तथा प्रभावोत्पादकता आदि गुणों का निर्वाह होना चाहिए।

संक्षेपण के संबंध में निम्नलिखित बातें अनिवार्य रूप से ध्यान देने योग्य हैं–

1. संक्षेपण में मूल रचना के कथ्य अथवा अभिप्राय में तनिक भी अंतर नहीं आना चाहिए।
2. मूल रचना के आकार को लगभग एक-तिहाई रूप में रह जाना चाहिए।
3. लेखक अपनी ओर से उदाहरण अथवा उद्धरण आदि न दे।
4. अनावश्यक और अप्रासंगिक बातों का समावेश नहीं होना चाहिए।
5. संक्षेपण में व्यास-शैली के स्थान पर समास-शैली का प्रयोग किया जाता है।
6. मूल रचना का संक्षिप्तीकृत रूप प्रभावशाली और आकर्षक होना चाहिए।

• संक्षेपण की विशेषताएं/गुण

संक्षेपण में निम्नलिखित विशेषताओं या गुणों का समावेश होता है–

1. **संक्षिप्तता**– संक्षेपण का केंद्र-बिंदु ही संक्षिप्तता है। अनावश्यक बातों के लिए संक्षेपण में कोई स्थान नहीं होता। इसमें दृष्टांत देकर व्याख्या का कोई प्रश्न ही नहीं उठता, वरन मूल अनुच्छेद/अवतरण के सभी विचारों को कम-से-कम शब्दों में रखने का प्रयास किया जाता है।
2. **समाहार शक्ति**–संक्षेपण में 'गागर में सागर' समेट लेने की अद्भुत क्षमता होनी चाहिए। सतसई के दोहे इसका सटीक उदाहरण हैं, जो देखने में तो छोटे लगते हैं परंतु अपनी बात को स्वतः स्पष्ट करने में पूर्णतया सक्षम हैं।
3. **अभिव्यक्ति में स्पष्टता**– संक्षिप्तता का तात्पर्य यह नहीं है कि कोई ऐसी बात छूट जाए जो आवश्यक है या संक्षेपण अस्पष्ट हो जाए। यदि मूल अनुच्छेद को पढ़ने की आवश्यकता पड़े तो फिर संक्षेपण तैयार करने से लाभ ही क्या? सार लेखन की अभिव्यक्ति स्पष्ट होनी चाहिए, जिससे कि सार-लेख को पढ़ने से सब कुछ स्पष्ट हो जाए।
4. **तारतम्यता**– संक्षेपण में तारतम्यता का होना भी नितांत आवश्यक है। असंबद्ध विचारों का पाठक पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अच्छे संक्षेपण में अनुच्छेद के सभी वाक्य

टिप्पणी

एक दूसरे से शृंखलाबद्ध रूप में जुड़े रहते हैं। इसमें जहां एक विचार से दूसरे विचार में तारतम्य रहना चाहिए, वहीं मूल भाव भी सुरक्षित रहना चाहिए।

5. **विवेचनात्मकता**– संक्षेपण के लिए यह भी आवश्यक है कि संक्षेपक/सार लेखक पैनी बुद्धि का परिचायक हो। उसमें तथ्यों को परखने और उनका सही विवेचन दर्शाने की क्षमता होनी चाहिए।
7. **पूर्णता**– संक्षेपण में मूलभाव पूर्ण रूप से सुरक्षित रहना बहुत जरूरी है, यही संक्षेपण की पूर्णता है।
8. **प्रभावोत्पादकता**– संक्षेपण के भावों में जहां निश्चित क्रम बना रहना चाहिए, वहीं उसके समग्र रूप का प्रभावोत्पादक होना आवश्यक है। क्रम यदि बिखरा है तो इसके प्रभावी होने में बाधा पड़ती है। भावों में क्रमबद्धता, संक्षेपण को प्रभावशाली बनाने में सहायता करती है।

संक्षेपण विषयक कुछ अन्य उल्लेखनीय बातें

1. संक्षिप्तीकरण करते समय संबद्ध अवतरण का शीर्षक देना संक्षेपण का अंग तो नहीं है, लेकिन उपयुक्त और सटीक शीर्षक से संक्षेपणकर्ता की सूझ-बूझ और बुद्धिमत्ता का परिचय अवश्य मिलता है। उपयुक्त शीर्षक-चयन से परीक्षक यह जान लेता है कि परीक्षार्थी अवतरण के केंद्रीय भाव को समझता है।
2. कभी-कभी अवतरण में कुछ वाक्यों-वाक्यांशों या शब्दों को रेखांकित करके उनका अर्थ पूछ लिया जाता है। यह अर्थ बहुत संक्षिप्त और सटीक होना चाहिए।
3. अवतरण के संक्षेपण के लिए जो कच्चा काम (Rough-Work) करें, वह उत्तर-पुस्तिका के अंतिम पृष्ठ पर करें। बाद में उसे काट दें।
4. सारांश और संक्षेपण के अंतर को ध्यान में रखते हुए ही संक्षेपण करें।
5. जिन क्लिष्ट शब्दों का अर्थ आपको न आता हो, उनको बार-बार पढ़-कर संपूर्ण अवतरण में उनके आशय को ही लिखें।
6. पारिभाषिक शब्दों के अतिरिक्त अवतरण के शब्दों-वाक्यों की पुनरावृत्ति न करें। पूरा लिख चुकने पर एक बार आद्योपांत पढ़ लें।

संक्षेपण के उदाहरण

अवतरण (1)

प्रेमचंद के सामने एक ऐसा युगीन-परिवेश था जिसमें देश धीरे-धीरे बंटता और टूटता जा रहा था। वर्ष 1914 तक औद्योगिक विकास मंद गति से होने के कारण साम्राज्यवादी शोषण अत्यंत तीव्र और गांव की अर्थव्यवस्था पंगु हो गई थी। इसका सबसे अधिक बुरा प्रभाव कारीगरों, हरिजनों, मजदूरों और छोटे किसानों पर पड़ा। अर्थव्यवस्था की इस स्थिति ने सूदखोरों और महाजनों की कतार पैदा कर दी। किसान अपनी ही जमीन पर मजदूर होता गया। जमीन जोतने वाला भू-स्वामित्व के अधिकार से वंचित होकर खेतिहर मजदूर होने लगा। यह वर्ग भुखमरी से बचने के लिए बड़ी संख्या में रोजी-रोटी की तलाश में शहरों की ओर भागने लगा। वहां भी पूंजीपतियों ने उनका मनमाना शोषण किया। प्रेमचंद जी ने गोदान में किसानों की व्यक्तिगत

टिप्पणी

तथा वर्गीय विसंगतियों व अंतर्विरोधों को बहुत तटस्थता से पहचाना है, लेकिन इस अंतर्विरोध-उद्घाटन से किसानों की बेबसी और यातना की नियति ही अधिक खुलती है। इसका कारण यह है कि यह सुविधा-भोगी वर्ग से दुहा गया है। यह कैसी बिडंबना है कि पैसा सारी व्यवस्था के केंद्र में है। जमींदार, उसका कारिंदा, पटवारी, छोटे जमींदार, पुरोहित आदि बाह्य दृष्टि से भले ही अलग-अलग हों, किंतु किसानों का शोषण करते समय इनकी एकता देखते ही बनती है।

उक्त अवतरण का संक्षेपण

शीर्षक : प्रेमचंद के मजदूर - किसान

संक्षेपण– प्रेमचंद के समय का सामाजिक परिवेश ऐसा था जिसमें तीव्र साम्राज्यवादी शोषण के कारण ग्रामीण अर्थव्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई थी। जमींदार, उसके कारिंदे पटवारी, छोटे जमींदार तथा पुरोहित आदि बड़े शोषण-तंत्र के पुर्जे थे। इनके शोषण से किसान भू-स्वामित्व से वंचित होकर अपनी ही भूमि पर मजदूरी करने लगा। गांव के शोषकों से बचकर कृषक वर्ग नगरों की ओर त्राण पाने गया, तो वहां भी पूंजीपतियों के शोषण से बच न सका।

अवतरण (2)

कबीर के साहित्य में राम की परिकल्पना का मूल आधार भारतीय दार्शनिक चिंतन तो अवश्य है पर उसे अपनी सहज सहानुभूति में ढालकर कबीर ने जिस विशिष्ट भावना को आत्मसात किया है, वह विभिन्न 'वादों' की सीमाओं का अतिक्रमण कर उसका अपना निजी राम बन गया। इसलिए यह राम अद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद, इस्लामी एकेश्वरवाद, सिद्धों के शून्यवाद तथा योगियों के अलख निरंजन आदि की परम तत्व संबंधी धारणाओं से अनेक बिंदुओं पर साम्य स्थापित करता हुआ भी इन सबसे सर्वथा पृथक है। इसका अर्थ यह नहीं कि उन्होंने दार्शनिक आचार्यों की तरह राम या परमतत्व संबंधी कोई नई स्थापना की है और न यह ही, कि उन्होंने दर्शकों से थोड़ा बहुत इकट्ठा कर 'भानुमति का कुनबा' ही खड़ा किया है। वे बहुश्रुत थे और विविध मतों के अनुयायियों की संगति से उनके विचारों की स्थूल बातें ग्रहण कर ली थीं। इन्हीं विचारों को उन्होंने अपनी जीवन दृष्टि और स्वानुभूति के निष्कर्ष पर चढ़ाकर, जैसा उपयुक्त समझा, वैसा ही सामने रखा। अतः कबीर-साहित्य का यह राम किसी दर्शन-विशेष की उत्पत्ति न होकर उनकी अपनी उपलब्धि है। इसी परिप्रेक्ष्य में कबीर की 'राम' की परिकल्पना का विचार करना युक्ति युक्त है।

उक्त अवतरण का संक्षेपण

शीर्षकः कबीर के राम

संक्षेपण– अद्वैतवाद आदि अनेक दार्शनिक मत-वादों से समानता रखते हुए भी कवि की स्वानुभूति की आंच में तपकर, वाद-मुक्त होकर 'राम', कबीर साहित्य में 'कबीर का अपना राम' बन गया है। कबीर अनेक महापुरुषों के उपदेश से लाभान्वित हुए थे। इसीलिए अनेक मतावलंबियों के मतों के सार रूप को ग्रहण कर उन्होंने अपनी अनुभूति और जीवन-दृष्टि की कसौटी पर परखते हुए अपनी नवीन दृष्टि के आलोक में राम के स्वरूप को प्रस्तुत किया।

टिप्पणी

अवतरण (3)

साहित्य का आधार जीवन है। इस नींव पर साहित्य की दीवार खड़ी होती है। उसकी अटारियां, मीनारें और गुंबद बनते हैं, लेकिन बुनियाद मिट्टी के नीचे दबी पड़ी है। उसको देखने को जी नहीं चाहेगा, जीवन परमात्मा की सृष्टि है, इसलिए अनंत है, अबोध है, अगम्य है। साहित्य मनुष्य की सृष्टि है, इसीलिए सुबोध है, सुगम है और मर्यादाओं से परिचित है। जीवन परमात्मा को अपने कार्यों का जवाबदेह है या नहीं, हमें मालूम नहीं, लेकिन साहित्य तो मनुष्य के सामने जवाबदेह है। इसके अपने कानून हैं, जिनसे वह इधर-उधर नहीं हो सकता। जीवन का उद्देश्य ही आनंद है। मनुष्य जीवन पर्यंत आनंद की ही खोज में लगा रहता है। किसी को वह रत्न-द्रव्य में मिलता है, किसी को भरे पूरे परिवार में, किसी को लंबे-चौड़े भवन में तो किसी को ऐश्वर्य में। लेकिन साहित्य का आनंद इससे ऊंचा है, इससे पवित्र है। उसका आधार सुंदर और सत्य है। वास्तव में सच्चा आनंद सुंदर और सत्य से मिलता है। उसी आनंद को दर्शाना, वही आनंद उत्पन्न करना साहित्य का उद्देश्य है। ऐश्वर्य या भोग के आनंद में ग्लानि छिपी रहती है। उससे अरुचि भी हो सकती है। पश्चाताप भी हो सकता है। पर 'सुंदर' से जो आनंद प्राप्त होता है, वही अखंड एवं अमर है।

ऐसे 'आनंद' साहित्य में 'नीरस' कहे गए हैं। प्रश्न होगा, वीभत्स में कोई आनंद है? अगर ऐसा न होता तो वह रसों में ही क्यों गिना जाता? हां, है। वीभत्स में सुंदर और सत्य मौजूद है। भारतेंदु ने श्मशान का वर्णन किया है, वह कितना वीभत्स है! प्रेतों और पिशाचों का अधजले मांस के लोथड़े, हड्डियों को चटर-चटर चबाना, वीभत्स की पराकाष्ठा है। लेकिन वह वीभत्स होते हुए भी सुंदर है, क्योंकि उसकी सृष्टि पीछे आने वाले स्वर्गीय दृश्य के आनंद को तीव्र करने के लिए हुई है। साहित्य तो हर एक रस में 'सुंदर' खोजता है– राजा के महल में, रंक की झोंपड़ी में, पहाड़ के शिखर पर, गंदे नालों के अंदर, ऊषा की लाली में, सावन-भादों की अंधेरी रात में और क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है कि रंक की झोंपड़ी में जितनी आसानी से सुंदर मूर्तिमान दिखाई देता है, उतना महलों में तो वह खोजने से भी मुश्किल से मिलता है। जहां मनुष्य अपने मौलिक, यथार्थ, अकृत्रिम रूप में है, वहीं आनंद है। आनंद कृत्रिमता और आडंबर से कोसों दूर भागता है। सत्य का कृत्रिम से क्या संबंध? अतएव हमारा विचार है कि साहित्य में केवल एक रस है, और वह शृंगार है। कोई रस साहित्यिक दृष्टि से रस नहीं रहता और न उस रचना की गणना ही साहित्य में की जा सकती है जो शृंगारविहीन और असुंदर है। जो रचना केवल वासना-प्रधान हो, जिसका उद्देश्य कुत्सित भावों को जगाना हो, जो केवल बाह्य जगत से संबंध रखे, वह साहित्य नहीं। जासूसी उपन्यास अद्भुत होता है, लेकिन हम उसे साहित्य उसी समय कहेंगे जब उसमें सुंदर का समावेश हो।

उक्त अवतरण का संक्षेपण

शीर्षक : सुंदर और सत्य ही आनंद

संक्षेपण– जीवन ही साहित्य का आधार है, परंतु जीवन में अनेक चित्र ऐसे होते हैं, जो रम्य नहीं होते। लेकिन साहित्य में असुंदर वस्तु भी आकर्षक रूप में प्रस्तुत की जाती है, क्योंकि साहित्य का उद्देश्य ही प्रत्येक रचना को सरस रूप में प्रस्तुत करना है। सत्य एवं सुंदर का आकर्षक रूप साहित्य में प्राप्त होता है, जो सर्वथा रुचिप्रद होता

टिप्पणी

है। सांसारिक ऐश्वर्यजन्य आनंद अरुचिकर एवं ग्लानिप्रद भी हो सकता है परंतु साहित्यानंद तो शाश्वत एवं रम्य है। वीभत्स दृश्य वैसे तो अरुचिकारक होते हैं, परंतु हरिश्चंद्रजी का श्मशान वर्णन भी लोकोत्तर एवं चमत्कारपूर्ण है, क्योंकि उसमें नैसर्गिकता है। साहित्य द्वारा मनुष्य के श्रेष्ठ भावों को उद्‌बुद्ध किया जाता है। जासूसी उपन्यास भी यदि सत्य एवं सुंदर हों तो वे भी चमत्कारोत्पादक एवं श्रेष्ठ साहित्य हो सकते हैं।

अवतरण (4)

आधुनिक संस्कृति मूलतः बुद्धिवादी और विश्लेषण-प्रिय है, जिसमें ज्ञान की अपार महिमा है, परंतु हृदय के स्रोत निरंतर सूखते जा रहे हैं। जिसे शिक्षा कहकर चलाया जा रहा है, वह सूचना मात्र है। उसमें अनुभूति को जगह नहीं मिली है। फलतः आज का शिक्षित मनुष्य व्यर्थता से भर गया है। कविता का स्रोत है–आनंद, जिज्ञासा एवं रहस्य। हमारे ज्ञान की परिधि इतनी विस्तृत हो गई है कि कुछ भी अप्रत्याशित नहीं रह गया है। काव्यरूढ़ियां आज हास्यास्पद जान पड़ती हैं। अद्‌भुत का थोड़ा भी स्पंदन जीवन में शेष नहीं रह गया है। वैसे, ज्ञान और कविता में निरंतर विरोध ही हो, यह आवश्यक नहीं, क्योंकि विज्ञान रहस्योन्मुखी है। इसमें जिज्ञासा और समाधान के अनेक सूत्र हैं। परंतु आज विज्ञान विशेषता के उस संसार में पहुंच गया है, जहां तालिकाओं का राज्य है और मानव-शिशु तथ्यों की मरुभूमि में खो गया है। फल यह हुआ कि हम अहं के स्तूप बन गए हैं। हम चमत्कृत होने में मानहानि समझते हैं। हमारी सहज अंतर्वृत्तियां जड़ होती जा रही हैं।

उक्त अवतरण का संक्षेपण

शीर्षक : अनुभूति राहत शिक्षा

संक्षेपण– आधुनिक शिक्षा अनुभूति-पक्ष से रहित है। इसमें बुद्धि की प्रधानता होने से मनोगत विकारों का कोई स्थान नहीं है, इसीलिए यह आकर्षक भी नहीं रही है। कविता और विज्ञान में कोई बैर-भाव नहीं, फिर भी आधुनिक विज्ञान रहस्यों का प्रतिपादन करने के कारण महत्वशाली बन गया है। अतः मानव आज सहृदय न रहकर तथ्यग्राही बन गया है।

कुछ अवतरण अभ्यासार्थ

1. लाखों अहिंदी भाषियों ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा का दर्जा दिया, उसे राष्ट्रीय गौरव के शिखर पर बैठाया। लेकिन विपरीत परिस्थितियों ने धीरे-धीरे उसे एक-एक सीढ़ी उतारना शुरू कर दिया और अब राष्ट्रभाषा मात्र संपर्क-भाषा बन कर रह गई है। इसका कारण यह है कि अब हिन्दी का कार्य सरकार के भरोसे छोड़ दिया गया है। सरकारी कर्मचारी/अधिकारी राजतंत्र चला सकते हैं, लोकतंत्र नहीं। सरकारी कर्मचारी/अधिकारी हिन्दी को संपर्क भाषा के रूप में फाइलों में जिंदा रख सकते हैं, व्यवहार में नहीं। राष्ट्रभाषा के रूप में वे इसे अपेक्षित प्रतिष्ठा नहीं दे सकेंगे। लोकतंत्र और राष्ट्रभाषा दोनों को साथ-साथ चलना चाहिए। हम भाग्यशाली हैं कि लोकतंत्र को लंगड़ा बनाने वाली शक्तियां प्रबल नहीं हो पाईं, लेकिन राष्ट्रभाषा के रास्ते पर कांटे बिखरने वाले कम नहीं हुए, इसीलिए अब हिन्दी की वकालत हिन्दी

टिप्पणी

में नहीं, दूसरी भाषाओं के माध्यम से होगी, तभी हिन्दी का पक्ष मजबूत होगा, वरना हिन्दी की सारी विशेषताएं तर्क के तराजू में हल्की पड़ती जाएंगी।

2. जिस प्रकार धार्मिक क्षेत्र में भारत के ज्ञान, भक्ति तथा कर्म के समन्वय की प्रसिद्धि
है तथा जिस प्रकार वर्ण और आश्रम-चतुष्टय के निरूपण द्वारा इस देश में
साहित्यिक समन्वय का सफल प्रयास हुआ है, ठीक उसी प्रकार साहित्य तथा
अन्यान्य कलाओं में भी भारतीय प्रवृत्ति समन्वय की ओर रही है। साहित्यिक
समन्वय से हमारा तात्पर्य साहित्य में प्रदर्शित सुख-दुख, उत्थान-पतन, हर्ष-विषाद
आदि विरोधी तथा विपरीत भावों के समीकरण तथा एक अलौकिक आनंद में उनके
विलीन होने से है। साहित्य के किसी अंग को लेकर देखिए, सर्वत्र यही समन्वय
दिखाई देगा। भारतीय नाटकों में भी सुख और दुःख के प्रबल घात-प्रतिघात दिखाए
गए हैं, पर सबका अवसान आनंद में ही किया गया है। इसका प्रधान कारण यह है
कि भारतीयों का ध्येय सदा से जीवन का आदर्श स्वरूप उपस्थित करके उसका
उत्कर्ष करने और उसे उन्नत बनाने का रहा है।

3. भारत वर्ष की मिट्टी में युग के अनुरूप महापुरुषों को जन्म देने का अद्‌भुत गुण
है। आज से पांच सौ वर्ष पहले का देश अनेक कुसंस्कारों में उलझा था। जातियों,
संप्रदायों, धर्मों और संकीर्ण कुलाभिमानों से वह खंडित और विच्छिन्न हो गया था।
देश में नये धर्म के आगंतुकों के कारण एक ऐसी समस्या उठ खड़ी हुई थी, जो इस
देश के हजारों वर्षों के लंबे इतिहास से अपरिचित थी। ऐसे ही दुर्घटना काल में इस
देश की मिट्टी ने ऐसे अनेक महापुरुषों को उत्पन्न किया, जो सड़ी रूढ़ियों, मृतप्राय
आचारों, बासी विचारों ओर अर्थहीन संकीर्णताओं के विरुद्ध प्रहार करने में कुंठित
नहीं हुए और इन जर्जर बातों से परे सब में विद्यमान नई ज्योति और नया जीवन
प्रदान करने वाले महान् जीवन-देवता की महिमा प्रतिष्ठित करने में सफल हुए। इन
संतों की ज्योतिष्क मंडली में गुरु नानकदेव ऐसे संत हैं, जो शरत्काल के पूर्ण चंद्र
की तरह स्निग्ध, उसी प्रकार शांत-निर्मल, उसी प्रकार रश्मि के भंडार थे।

4. पुरुषार्थ वह है जो पुरुष को सप्रयासरत रखे, साथ ही सहयुक्त भी रखे। यह जो
सहयोग है, सच में पुरुष और भाग्य का ही है। पुरुष अपने अहं से वियुक्त होता है,
तभी भाग्य से संयुक्त होता है। लोग जब भाग्य को पुरुषार्थ से अलग और विपरीत
करते हैं, तो कहना चाहिए कि वे पुरुषार्थ को ही उसके अर्थ से विलग और विमुख
कर देते हैं। पुरुष का अर्थ क्या पशु का ही अर्थ है? बल-विक्रम तो पशु में ज्यादा
होता है। दौड़-धूप निश्चय ही पशु अधिक करता है। लेकिन यदि पुरुषार्थ पशुचेष्टा
के अर्थ से कुछ भिन्न और श्रेष्ठ है तो इस अर्थ में कि वह केवल हाथ-पैर चलाना
नहीं है, न क्रिया का वेग और कौशल है, बल्कि वह स्नेह और सहयोग की भावना
है। सूक्ष्म भाषा में कहें, तो उसकी कर्तव्य-भावना है। वासना से पीड़ित होकर पशु
में अद्‌भुत पराक्रम देखा जा सकता है। किंतु यह पुरुष के लिए ही संभव है कि वह
आत्म-विसर्जन में पराक्रम कर दिखाए।

5. यह अध्यापक का काम है कि वह अपने छात्र में चित्त एकाग्र करने का अभ्यास
डाले। एकाग्रता ही आत्म-साक्षात्कार की कुंजी है। एकाग्रता का उपाय यह है कि छात्र

टिप्पणी

में मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा का भाव उत्पन्न किया जाए और उसे निष्काम कर्म में प्रवृत्त किया जाए। दूसरे के सुख को देखकर सुखी होना मैत्री और दुःख देखकर दुखी होना करुणा है। किसी को अच्छा काम करते देखकर प्रसन्न होना और उसका प्रोत्साहन करना मुदिता और दुष्कर्म का विरोध करते हुए अनिष्टकारी से शत्रुता न करना उपेक्षा है। ज्यों-ज्यों ये भाव जागते हैं, त्यों-त्यों ईर्ष्या-द्वेष में कमी होती है। निष्काम कर्म भी राग-द्वेष को नष्ट करता है। ये बातें हंसी-खेल नहीं हैं, परंतु चित्त को उधर फेरना तो होगा ही, सफलता चाहे बहुत धीरे ही प्राप्त हो। इस प्रकार का प्रयास भी मनुष्य को ऊपर उठाता है।

6. व्यक्ति के लिए घुमक्कड़ी से बढ़कर कोई धर्म नहीं। जाति का भविष्य घुमक्कड़ी पर निर्भर करता है, इसीलिए मैं कहूंगा कि हरेक तरुण और तरुणी को घुमक्कड़ व्रत ग्रहण करना चाहिए, इसके विरुद्ध दिए जाने वाले सारे प्रमाणों को झूठ और व्यर्थ का समझना चाहिए। यदि माता-पिता विरोध करते हैं, तो समझना चाहिए कि वे भी प्रहलाद के माता-पिता के नवीन संस्करण हैं। यदि हित-बांधव बाधा उपस्थित करते हैं, समझना चाहिए कि वे दिवांध हैं। यदि धर्माचार्य कुछ उल्टा-सीधा तर्क देते हैं, तो समझ लेना चाहिए कि इन्हीं ढोंगियों ने संसार को कभी सरल और सच्चे पथ पर चलने नहीं दिया। यदि राज्य और राजसी नेता अपनी कानूनी रुकावटें डालते हैं, तो हजारों बार की तजुर्बा की हुई बात है कि महानदी के वेग की तरह घुमक्कड़ की गति को रोकने वाला दुनिया में कोई पैदा नहीं हुआ। बड़े-बड़े कठोर पहरे वाली राज्य-सीमाओं को घुमक्कड़ों ने आंख में धूल झोंककर पार कर लिया।

7. राष्ट्र का तीसरा अंग जन की संस्कृति है। मनुष्य ने युगों-युगों में जिस सभ्यता का निर्माण किया, वही उसके जीवन का श्वास-प्रश्वास है। बिना संस्कृति के जन की कल्पना निरर्थक है, संस्कृति ही जन का मस्तिष्क है। संस्कृति के विकास और अभ्युदय के द्वारा ही राष्ट्र की वृद्धि संभव है। राष्ट्र के समग्र रूप में भूमि और जन के साथ-साथ जन की संस्कृति का भी महत्वपूर्ण स्थान है। यदि भूमि और जन को अपनी संस्कृति से विहीन कर दिया जाए, तो राष्ट्र का लोप समझना चाहिए। जीवन के विटप का पुष्प संस्कृति है। संस्कृति के सौंदर्य और सौरभ में ही राष्ट्रीय जन के जीवन का सौंदर्य और यश अंतर्निहित है। ज्ञान और कर्म दोनों के पारस्परिक प्रकाश की संज्ञा संस्कृति है। भूमि पर बसने वाले जन ने ज्ञान के क्षेत्र में जो सोचा है और कर्म के क्षेत्र में जो रचा है, दोनों के रूप में हमें राष्ट्रीय संस्कृति के दर्शन मिलते हैं।

8. कर्तव्य वह वस्तु है, जिसे करना हम लोगों का परम धर्म है और जिसके न करने से हम और लोगों की दृष्टि से गिर जाते हैं और अपनी कुरुचि से नीच बन जाते हैं। प्रारंभिक अवस्था में कर्तव्य का करना बिना निर्वाह के नहीं हो सकता, क्योंकि पहले-पहल मन आप ही उसे करना नहीं चाहता। इसका प्रारंभ भी घर से ही होता है, क्योंकि यहां लड़कों का कर्तव्य माता-पिता के प्रति और माता-पिता का कर्तव्य लड़कों के प्रति दिखाई पड़ता है। इनके अतिरिक्त पति-पत्नी, स्वामी-सेवक और स्त्री-पुरुष के परस्पर अनेक कर्तव्य हैं। घर के बाहर हम मित्रों, पड़ोसियों और अन्य

टिप्पणी

व्यक्तियों के परस्पर कर्तव्य को देखते हैं, इसलिए संसार में मनुष्यों का जीवन कर्तव्यों से भरा पड़ा है। जिधर देखो, उधर कर्तव्य ही कर्तव्य दिखाई पड़ते हैं। बस, इसी कर्तव्य का पालन करना हम लोगों का धर्म है और इसी से हम लोगों के चरित्र की शोभा बढ़ती है। कर्तव्य करना न्याय पर निर्भर है और वह न्याय ऐसा है, जिसे समझने पर हम लोग प्रेम के साथ उसे कर सकते हैं।

9. स्वावलंबी मनुष्यों की यश-कीर्ति पूर्णिमा की चंद्रिका के समान चारों ओर फैलती है। उनका यशगान चारण और भाट शताब्दियों तक किया करते हैं। कवियों और लेखकों की लेखनी उनकी धवल कृतियों का बखान किया करती है। उनका अभिनय रंगशालाओं तथा चित्रपटों पर हुआ करता है। पाठक और श्रोता मनोरंजन के अतिरिक्त उनसे नित्य नए पाठ सीखा करते हैं। मनुष्य की कीर्ति उसकी शारीरिक सुंदरता नहीं वरन् उसकी पुण्य-कृतियों से फैलती है।

10. लेखक का काम बहुत से अंशों में मधुमक्खियों के काम से मिलता है। मधुमक्खियां मधु के लिए कोसों का चक्कर लगाती हैं और अच्छे-अच्छे फूलों पर बैठकर उनसे रस लेती हैं। तभी तो उनके मधु में संसार की सर्वश्रेष्ठ मधुरता रहती है। यदि आप अच्छे लेखक बनना चाहें तो आपको यही वृत्ति ग्रहण करनी चाहिए। फिर आपकी रचनाओं में भी मधु का सा माधुर्य आने लगेगा। कोई अच्छी उक्ति, कोई अच्छा विचार, भले ही वह दूसरों से ग्रहण किया गया हो, पर यदि मनन कर आप उसे अपनी रचना में स्थान देंगे तो वह आपका ही हो जाएगा। मननपूर्वक लिखी हुई वस्तु के संबंध में शीघ्र किसी को यह कहने का साहस न होगा कि यह अमुक स्थान से ली गई है। जो बात आप भली-भांति आत्मसात कर लेंगे वह फिर आपकी ही हो जाएगी।

11. प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा अभ्यास करके प्रयास-शक्ति या परिश्रम-शक्ति को प्रबल रखो। पानी में डूबने का मौका कभी ही पड़ता है परंतु यदि तैरने का अभ्यास नहीं किया गया तो डूबते समय पछताना ही पड़ेगा। जो सौदागर जहाज पर माल ले जाते हैं, वे अपने माल का बीमा कराते हैं और हमेशा बीमे के लिए फीस देते हैं। उसमें उन्हें कोई लाभ नहीं होता। परंतु यदि जहाज डूब जाए तो उन्हें अपने माल का पूरा मूल्य मिलता है और बीमा की फीस देने का आनंद मालूम होता है। इसी प्रकार करने का अभ्यास बना रहे तो किसी समय पर कोई भी कठिनाई आ पड़े, अभ्यासी आदमी सुखपूर्वक उस कठिनाई को पार कर लेगा। इसीलिए छोटी-छोटी बातों में भी उचित परिश्रम करने ओर उचित ध्यान देने की बात बच्चों में होनी चाहिए।

12. प्रायः लोग प्रश्न करते हैं– अहिंसा का क्या अर्थ है? अहिंसावादी को प्याज, टमाटर का भक्षण करना चाहिए या नहीं? इस प्रश्न पर सभी को उलझन है। मैं कहता हूं अहिंसा का इन बातों से कोई संबंध नहीं। यह आपकी इच्छा पर निर्भर करता है। आप चाहें तो इनका भोग करिए ओर चाहें तो मत करिए, किंतु एक सच्चा अहिंसक बनने के लिए आपको इस बात का ध्यान अवश्य रखना होगा कि आप स्वयं को क्रोध, प्रतिशोध, घृणा आदि से दूर रखें। आप अपने संकीर्ण दृष्टिकोण को व्यापक व उदार बनाएं, मन में जो विषैले जंतु कुंडली मारकर बैठे हैं, उन्हें दूर भगाएं, मन

टिप्पणी

को साफ रखें तथा सबके प्रति समता भाव बनाए रखें। मैं कहता हूं यही अहिंसा है। सच्ची अहिंसा ही सच्ची मानवता है और सच्ची मानवता ही सच्ची अहिंसा है।

13. जीवन की सादगी से तात्पर्य अभाव एवं दरिद्रता से नहीं है। एक समय रूखी-सूखी खाने वाले किसान, जंगल में पड़े रहने वाले कंजर और एक कमीज में जाड़ा बिताने वाले भिखमंगे का जीवन सादा नहीं कहा जा सकता। वे शराब के सेवन और कपड़ों की चोरी से नहीं हिचकिचाते। यही कारण है कि उनके विचार उच्च तो क्या एक साधारण व्यक्ति से भी गए-बीते होते हैं। दरिद्रता में पलने पर भी उनका मन ठाठ-बाट के जीवन में रमता रहता है। सादा जीवन होने के लिए धनी होना अनिवार्य शर्त नहीं है। गरीब आदमी भी संतोष करके उच्च विचार रख सकता है। अधिकतर उच्च विचार रखने वाले साधु या पंडित निर्धन ही रहे हैं।

- **वाक्य संक्षेपण अथवा संक्षिप्त शब्दावली के उदाहरण–**

शब्दावली/वाक्य-खंड	**शब्द-संक्षेप**
हृदय को विदीर्ण करने वाला	हृदय-विदारक
दूसरों के काम में दखल देना	हस्तक्षेप
काम करने में चतुर	सिद्धहस्त
जानने की इच्छा	जिज्ञासा
जिसका कोई नाथ (भरण-पोषण करने वाला) न हो	अनाथ
जिसके हृदय में ममता न हो	निर्मम
जिसके समान कोई दूसरा न हो	अद्वितीय
जिसके आने की तिथि मालूम न हो	अतिथि
जिससे हानि की आशंका न हो	निरापद
जिस पर विचार करने की आवश्यकता हो	विचारणीय
जिसका कोई वारिस न हो	लावारिस
जिसने मृत्यु को जीता हो	मृत्युंजय
वह जो कम खर्च करता हो	मितव्ययी
जो जलकर राख हो जाए	भस्मीभूत
समझ में आने योग्य	बोधगम्य
जिसने बहुत सुना हो	बहुश्रुत
जैसे पहले था वैसे ही	पूर्ववत
वह वस्तु जिसके आर-पार दिखाई पड़े	पारदर्शी
कतार में बंधा/रखा हुआ	पंक्तिबद्ध
भले-बुरे का विचार न करने वाला	अविवेकी
अतिथि से सादर मिलना	अगवानी

टिप्पणी

ऐसे स्थान पर रहना जहां कोई पता न पा सके	अज्ञातवास
नीचे की ओर जाने वाला	अधोमुखी
जिसके बिना काम न चल सके	अनिवार्य
जो अवश्य हो, टले नहीं	अवश्यंभावी
जो नियत समय से पहले या पीछे हो	असामयिक
आज्ञा मानने वाला	आज्ञाकारी
किसी घटना का अचानक हो जाना	अकस्मात
संकट का समय	आपातकाल
वह जो किसी के न रहने पर उसकी संपत्ति का मालिक हो	उत्तराधिकारी
जिसका चित्त उदार हो	उदारमना
बहुत जगने के कारण अलसाया हुआ	उनींदा
दूसरे के सहारे पर गुजर करने वाला	उपजीवी/परजीवी
अन्य स्थान से आए हुए लोगों की बस्ती	उपनिवेश
एक ही पर श्रद्धा रखने वाला	एकनिष्ठ
काम करने के लिए कमर बांधे हुए	कटिबद्ध
सब लोगों के प्रयोग में आने वाला	सार्वजनिक
वर्तमान समय से संबंध रखने वाला	समसामयिक
सब-कुछ जानने वाला	सर्वज्ञ
मेहनत कर पेट भरने वाला	श्रमजीवी
जो वेतन लेकर काम करता है	वेतनभोगी
एक स्थान से दूसरे स्थान को हटाया हुआ	स्थानान्तरित
जो दूसरे के स्थान पर अस्थायी रूप से कार्य करे	स्थानापन्न
जिसकी आशा न की गई हो	आशातीत
जो भेदा न जा सके	अभेद्य
कम बोलने वाला	मितभाषी
जो स्मरण रखने योग्य हो	स्मरणीय
जो सबके आगे रहता है	अग्रणी
जिसे देख/सुन कर दुःख हो	दुःखद
युग का निर्माण करने वाला	युग निर्माता
जिसका मन किसी दूसरी ओर हो	अन्यमनस्क
जहां तक हो सके	यथासाध्य/यथासंभव
आदि से अंत तक	आद्योपांत, आद्यंत
तर्क के द्वारा माना जा चुका हो	तर्कसम्मत

टिप्पणी

जिस पर विश्वास किया गया हो/किया जा सके	विश्वस्त
क्षण भर में नष्ट होने वाला	क्षणभंगुर
नियत समय पर किया जाने वाला कार्य	समयबद्ध
नियत समय पर मिलने संबंधी वचन का पालन करने वाला	समयनिष्ठ
किसी रूप में प्राप्त राशि का अंश जो प्रत्येक व्यक्ति के हिस्से में आए	लाभांश
जो नुकसान हो चुका है उसकी भरपाई करना	प्रतिकर
जो लोक में संभव न हो	अलौकिक
शक्ति के अनुसार	यथाशक्ति
समय के अनुसार	यथासमय
याचना करने वाला	याचक

शब्द निर्माण में भी संक्षेपण का विशेष महत्व है। शब्द निर्माण में संक्षेपीकरण के कुछ उदाहरण नीचे दिए जा रहे हैं-

नार्थ एटलांटिक ट्रीटी ऑर्गेनाइजेशन	नाटो
इंडियन पीपुल थियेट्रिकल पिक्चर एसोसिएशन	इप्टा
युनाइटेड नेशंस एजुकेशनल साइंटिफिक एंड कल्चरल ऑर्गेनाइजेशन	यूनेस्को
इंडियन नेशनल ट्रेड यूनियन कांग्रेस	इंटक
इंडियन मूवी पिक्चर एसोसिएशन	इम्पा
साउथ-ईस्ट एशियन ट्रीटी ऑर्गेनाइजेशन	सीटो

इन शब्दों के अलावा दैनिक जीवन में समाचार-पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से अनेक लंबे वाक्यों के संक्षिप्त रूप देखने, पढ़ने व सुनने को मिलते हैं, जैसे–

सेल्फ एंप्लाइड वीमेंस एसोसिएशन	सेवा
एसोसिएशन ऑफ वॉलेंटरी एजेंसीज फॉर रूरल डेवलपमेंट	एवार्ड
भारतीय जनता पार्टी	भाजपा
भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी	भाकपा
भारतीय लोकदल	भालोद

4.3.2 पल्लवन

पल्लवन को वृद्धिकरण, विषदीकरण, संवर्धन या भाव-विस्तार आदि भी कहते हैं। डॉ. राघव प्रकाश पल्लवन के संदर्भ में लिखते हैं, "पल्लवन में किसी संक्षिप्त गूढ़ विचार-भाव, सूक्ति को विस्तार से स्पष्ट करने की आवश्यकता होती है। लेखकों द्वारा रची गई या समाज में परंपरा से चली आती हुई कुछ सूक्तियां ऐसी होती हैं कि सामान्य व्यक्ति उनके मूल आशय को अच्छी तरह समझ नहीं सकता। ऐसी स्थिति में हमें उस उक्ति को खोलकर उदाहरण देते हुए

टिप्पणी

इस तरह से स्पष्ट करना चाहिए कि वह संक्षिप्त गूढ़ बात सभी को सहजता से बोधगम्य हो जाए।" अतः स्पष्ट है कि "लेखक के मूल लेख या वक्ता के कथन को विस्तार के साथ लिखने या अभिव्यक्त करने की क्रिया को पल्लवन या भाव विस्तार कहते हैं।" पल्लवन हेतु निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए-

1. दिए गए मूल वाक्य, सूक्ति लोकोक्ति पर ध्यानपूर्वक लिखने हेतु रूपरेखा का निर्माण किया जाना चाहिए।
2. विचारों का विकास अत्यंत सोच-विचार के साथ, सहज संबद्धता के साथ होना चाहिए।
3. पल्लवन के लिए उदाहरणों और दृष्टांतों का यथासंभव प्रयोग किया जाना चाहिए।
4. पल्लवन के लिए भाषा और उसकी अभिव्यक्ति स्पष्ट, मौलिक तथा सरल होनी चाहिए।
5. पल्लवन हेतु व्यास शैली का प्रयोग किया जाना चाहिए, वृद्धिकरण अन्य शैली में करें।
6. वृद्धि-करण के आकार की कोई निश्चित सीमा तो नहीं है, किंतु उसे अनावश्यक एवं अप्रासंगिक विस्तार देकर बहुत लंबा लिखना अपेक्षित नहीं है। पुनरावृत्ति तो होनी ही नहीं चाहिए। इसका उद्देश्य उस उक्ति में छिपे हुए विचारों को स्पष्ट करना है।
7. वृद्धिकरण 8 पंक्तियों से लेकर एक पृष्ठ तक हो सकता है।
8. वृद्धिकरण में मूल अवतरण का प्रसंग या संदर्भ देना जरूरी नहीं है, न ही उसके शब्दों का अर्थ समझाकर उसकी व्याख्या करने की आवश्यकता है। उस उक्ति के साहित्यिक सौंदर्य का उद्घाटन भी जरूरी नहीं है। इस प्रकार वृद्धिकरण व्याख्या न होकर अवतरण के विचार को विस्तार देना तथा बढ़ाना मात्र है।

1. **लोकोक्ति**–जीवन एक फूल है प्रेम उसकी सुगंध

पल्लवन- प्रकृति ने फूलों के रूप में मानव को इतनी महत्वपूर्ण सौगात सौंपी है कि उसका जीवन फूलों का संसर्ग होते ही महक उठता है। महक या सुगंध पुष्प-जगत का निष्कर्ष है तो मानव-जगत का निष्कर्ष है प्रेम। यदि जीवन में से प्रेम को हटा दिया जाए तो वह बिना सुगंध के फूल की तरह हो जाएगा। सुगंध है तो फूल है। ज्ञात रहे कि जिन फूलों में सुगंध नहीं होती, उन्हें प्रयोग में नहीं लिया जाता अपितु फेंक दिया जाता है। ठीक इसी प्रकार, यदि जीवन में प्रेम न हो तो यह सांसों का श्मशान स्थल बनकर रह जाएगा। किसी ने सच कहा है कि जीवन एक फूल है और प्रेम उसकी सुगंध।

2. **लोकोक्ति**-''अधजल गगरी छलकत जाय" अथवा "थोथा चना बाजे घना''

पल्लवन- गंभीरता एक दुर्लभ गुण है। किसी भी प्रकार की समृद्धि को संभाल पाना सबके वश की बात नहीं होती। प्रायः देखने में आता है कि अल्पज्ञानी, अल्पधनी या अल्पबली ही अधीर होते हैं। जो वास्तव में ज्ञानी, धनी या बली होते हैं वे अपना बखान नहीं करते, आत्म-प्रशंसा से दूर रहते हैं। छोटी नदी तनिक-सा जल बढ़ने पर

उमड़कर बहने लगती है, समुद्र में कभी बाढ़ नहीं आती। वृक्ष और बादल भी वृद्धि होने पर नीचे ही झुकते हैं। अल्पज्ञानी ही अधिक बोलते हैं। योग्य लोग समय पर अपनी योग्यता का प्रदर्शन करते हैं।

टिप्पणी

3. **लोकोक्ति-** "न नौ मन तेल होगा, न राधा नाचेगी"

पल्लवन- पर्याप्त सामग्री के अभाव में अपेक्षित कार्य नहीं हो सकता है। अतः न नौ मन तेल होगा, न राधा नाचेगी। अर्थात जब पूरे मन तथा शक्ति से कार्य ही नहीं किया जाएगा तो कार्य भी पूरा नहीं होगा। इस तरह जब समय को टाला जाता है तो काई भी काम नहीं होता। कार्य करने के लिए अपने काम मे मन लगाना चाहिए। जब तक अपने काम को निष्ठापूर्वक नहीं किया जाता, तब तक काम अच्छा नहीं होता है। किसी कार्य को पूरा करने के लिए संबंधित पर्याप्त सामग्री का होना आवश्यक है, और जब तक सामग्री अर्थात निष्ठा का अभाव होगा, काम पूरा नहीं हो सकता।

4. **लोकोक्ति-** "जहां सुमति तहं संपति नाना।"

पल्लवन- जब मनुष्य में सुमति अर्थात सद्बुद्धि होती है तो वह अच्छे मार्ग तथा धर्म का अनुसरण करता है। सद्बुद्धि के प्रभाव से मनुष्य के वैभव एवं सुख-संपत्ति की वृद्धि होती है। इसी प्रकार जब कुमति से व्यक्ति अंधा होता है तो उसके दुष्प्रभाव में वह अधर्म के मार्ग पर चलने लगता है और इस प्रयास में सर्वस्व गंवा देता है। सर्वत्र कलह एवं झगड़ों में वृद्धि होती है। सुमति से सब कार्य बन जाते हैं और मनुष्य वास्तविक शांति को प्राप्त कर लेता है। सुमति मनुष्य को धर्म तथा ज्ञान की ओर ले जाती है। यदि मनुष्य कुमति से चलता है तो विपत्तियां बढ़ जाती हैं और मनुष्य को निराशा के साथ विफलताओं का सामना भी करना पड़ता है।

5. **लोकोक्ति-** "जो गरजते हैं वो बरसते नहीं।"

पल्लवन- वस्तु के रूप पर मनुष्य को मोहित नहीं होना चाहिए। रूप की अपेक्षा गुण को अधिक महत्व देना चाहिए। इसी प्रकार बरसने वाले बादल गरजते नहीं, वे तो बिना गरजे ही जल की वर्षा कर देते हैं। जलयुक्त बादल शब्दहीन होते हैं। इसी प्रकार शीलयुक्त गुण-संपन्न व्यक्ति अहंकार से हीन होते हैं। नम्रता ही उनके चरित्र का प्रमुख गुण होता है। करनी अच्छे गुणों की द्योतक है। करने वाले कहते नहीं, कहने वाले करते नहीं।

6. **लोकोक्ति-** "करत-करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान।"

पल्लवन- सुजान अर्थात सुज्ञानी होने के लिए प्रतिभा का अपना महत्व तो है ही, प्रतिभा के अलावा ज्ञान का एक और विकल्प है, और वह है अभ्यास, निरंतर अभ्यास। प्रतिभा ज्ञान को प्राप्त करने की आधारभूत एवं प्रथम शर्त है। उत्कृष्ट प्रतिभा बहुत कम समय में सूक्ष्म से सूक्ष्म ज्ञान को प्राप्त कर लेती है। आदि गुरु शंकराचार्य, विवेकानंद आदि ऐसी जन्मजात प्रतिभाएं थीं जिन्होंने बहुत कम आयु में न केवल अपनी परंपरा के उत्कृष्ट ज्ञान को प्राप्त कर लिया बल्कि ऐसे अद्भुत और नये ज्ञान का सृजन किया कि उनकी विद्वता के सम्मुख विश्व नत-मस्तक हुआ।

टिप्पणी

किंतु यदि किसी में जन्मजात प्रतिभा कम है तो भी निराश होने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि प्रतिभा के बाद ज्ञान का दूसरा आधार अभ्यास है। यदि व्यक्ति कम प्रतिभाशाली है किंतु खूब अभ्यास करता है, तो वह भी ज्ञानी बन सकता है। अभ्यास की बारंबारता से स्मृति और समझ की रेखाएं घनी होती हैं, समझ का बहुत-सा कार्य आदत में बदल जाता है, बुद्धि को अधिक प्रयोग में लेने से उसमें पैनापन बढ़ता है। मानव बुद्धि की सामर्थ्य बहुत अधिक है, हम उसका बहुत कम उपयोग कर पाते हैं। अतः यदि हम अभ्यास की आवृति को बढ़ा देते हैं तो प्रतिभा का अधिकाधिक उपयोग कर सकेंगे।

7. **लोकोक्ति-** "दूर के ढोल सुहावने होते हैं।"

पल्लवन-दूर के ढोल सुहावने होते हैं। इस लोकोक्ति का अर्थ यह है कि दूर से हमें वस्तु अत्यंत प्रिय लगती है। जिस प्रकार कहीं दूर बजते हुए ढोल की आवाज सुनने पर अत्यंत मधुर लगती है, उस ढोल की मधुरता में कई नवयुवक या युवतियां अपने वैवाहिक जीवन की मादक कल्पना करने लगते हैं, कि उनका वह संसार कितना सुखमय होगा। दूर से बजता हुआ यही ढोल जब पास बजने लगता है तो उसकी आवाज अत्यंत कटु और कर्कश लगने लगती है। यह ढोल जैसे ही घर में बजने लगेगा तो उसका कोलाहल और बढ़ जाएगा। अर्थात वैवाहिक जीवन के यथार्थ में आते ही व्यक्ति को उस विवाहरूपी ढोल की यथार्थता एवं कर्कशता का अनुभव होने लगता है।

सच ही कहा है कि यर्थात जगत और काल्पनिक जगत में बहुत अंतर होता है, यथार्थ की कठोरता का अनुभव व्यक्ति के लिए सुखद नहीं होता। कहा भी गया है कि "हर चमकने वाली चीज सोना नहीं होती", ठीक उसी प्रकार दूर के ढोल सुहावने होते हैं, क्योंकि उसमें कल्पना का रोमांचकारी रंगीन संसार होता है।

8. **लोकोक्ति-** "निंदक नियरे राखिए, आंगन कुटी छवाय।"

पल्लवन- व्यक्ति सामान्यतः अपने आलोचक से दूर भागता है, वह केवल उसकी उपेक्षा ही नहीं करता, बल्कि प्रत्यालोचना भी करने लगता है और इस प्रकार अपने आलोचक का मुंह बंद करने की कोशिश करता है। लेकिन कबीर ने व्यक्ति के विकास में आलोचक की भूमिका को बहुत ऊंचा स्थान दिया है।

हमें अपने आलोचक को इतना निकट रखना चाहिए कि वह दिन-रात, उठते-बैठते, खाते-पीते हमारे संपर्क में रहे तथा हमारी कमियां बताता रहे। हम आलोचक को इतने निकट, कि अपने आंगन में ही रखें और आंगन में उसको कोई कष्ट न हो इसके लिए उसकी कुटिया भी हम बना दें। अर्थात एक व्यक्ति को चाहिए कि वह अपने आलोचक के निरंतर संपर्क में रहे, उससे संवाद बनाए रखे ताकि उससे हमें अपनी कमजोरियों की जानकारी मिलती रहे और हम निरंतर अपना दोष-निवारण करते रहकर विकास-पथ पर अग्रसर हो सकें।

व्यक्ति को अपने आप अपनी कमजोरियों का ज्ञान होना कठिन है और बिना कमजोरियों को दूर किए वह विकास नहीं कर सकता, इसलिए विकास की कुंजी

आलोचक के हाथ में है। दरअसल, सीखने का भाव, जिज्ञासा का भाव हमें आलोचक के समीप ले जाता है और पूर्णता का भाव दंभ पैदा करके आलोचक से परे ले जाता है। ज्ञानी व्यक्ति इसीलिए आलोचक को सम्मान देता है, उसकी आलोचना को गंभीरता से सुनता है तथा उसके अनुसार अपने में सुधार करता है। इसलिए आलोचक से प्राप्त होने वाले लाभ के बारे में कबीर ने साखी की अगली पंक्ति में कहा है-

टिप्पणी

"बिन पानी साबुन बिना, निर्मल करे सुभाय।"

अर्थात हमारे स्वभाव में बिना अपनी ओर से कुछ किए निर्मल-सी स्वच्छता प्राप्त होती है।

4.3.3 टिप्पणी

संक्षिप्तीकरण, पत्र-लेखन तथा प्रारूपण के समान ही टिप्पण भी कार्यालयों के कामकाज की पारस्परिक प्रणाली की महत्वपूर्ण कड़ी है। टिप्पण शब्द भी ऊपर के तीनों पारिभाषिक शब्दों की तरह अंग्रेजी से ही लिया गया है। यह शब्द Noting के अर्थ में चलता है, जिसका अर्थ है–टिप्पणी या संक्षिप्त राय देना। कार्यालयों में समय पर प्राप्त होने वाले पत्रों पर आदि से अंत तक कार्यवाही करते हुए विभिन्न स्तरों के अधिकारी, प्रधान अधिकारी द्वारा अंतिम निर्णय दे दिए जाने तक जो 'नोट' या अभ्युक्तियां (Remarks) लिखते हैं, उन्हीं को टिप्पण कहा जाता है।

- **अच्छी टिप्पणी की विशेषताएं**

1. संक्षिप्तता
2. सुस्पष्टता एवं सरलता
3. विषयानुरूपता
4. तर्कयुक्तता तथा तथ्यात्मकता
5. क्रमबद्धता या शृंखलाबद्धता
6. नियमानुकूलता
7. प्रामाणिकता
8. निष्पक्षता
9. समाधानपरकता
10. पूर्णता या स्पष्टता

- **टिप्पणी के कुछ आवश्यक नियम**

1. पत्र पर निर्धारित स्थान (प्राय: बाईं ओर) पर ही टिप्पणी लिखी जानी चाहिए।
2. पत्र में विवेच्य बिंदुओं को जिस क्रम से प्रस्तुत किया गया हो, उसी क्रम में उन बिंदुओं पर टिप्पणी देनी चाहिए।

3. टिप्पणी अन्य पुरुष में ही प्राय: लिखी जाती है।
4. टिप्पणी लिखने से पूर्व संदर्भित पत्र की क्रम संख्या तथा संदर्भ संख्या आदि का अंकन अवश्य होना चाहिए।
5. टिप्पणी लेखक को तटस्थ रहकर नियमानुकूल टिप्पणी देनी चाहिए।
6. अनुच्छेदों को संख्याबद्ध करके क्रम से लिखना चाहिए।
7. विवेच्य विषय के पूरे हवाले देते हुए टिप्पणी लिखनी चाहिए।
8. टिप्पणी पूर्ण अध्ययन और वास्तविकता की पूरी छानबीन करके लिखी जानी चाहिए।
9. टिप्पणी लिखने के बाद टिप्पणकार को बाईं ओर अपने लघु हस्ताक्षर (नाम के आद्यक्षर (INITIALS) करने चाहिए तथा तारीख भी डालनी चाहिए।
10. जिन नियमों, उपनियमों के आधार पर टिप्पणी लिखनी हो, हो सके तो उनका पूरा या उनके वांछित अंश का उद्धरण देना चाहिए।
11. अंत में, संदर्भित पत्र को संबंधित फाइल और टिप्पण के स्थान पर चिह्न (Flag) लगाकर मुख्य अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत कर दिया जाना चाहिए।

टिप्पणी

- **टिप्पणी के प्रकार**

टिप्पणी मुख्यत: छह प्रकार की होती है–

(1) सामान्य टिप्पणी, (2) सूक्ष्म टिप्पणी, (3) संपूर्ण टिप्पणी, (4) विभागीय टिप्पणी, (5) अनौपचारिक टिप्पणी, (6) नित्यक्रमिक टिप्पणी।

1. **सामान्य टिप्पणी**- कार्यालय में ऐसे बहुत से पत्र आते हैं जिनका उत्तर साधारण-सा होता है। इनके लिए पिछले इतिहास आदि का संकेत करने की आवश्यकता नहीं होती। ऐसे पत्र नई कार्यवाही का प्रारंभ करते हैं। उन पर की गई टिप्पणी सामान्य या संक्षिप्त टिप्पणी कहलाती है।
2. **सूक्ष्म टिप्पणी**– कार्यालय में प्राप्त अनेक पत्र संबंधित अधिकारियों के देखने के पश्चात फाइल के ऊपरी भाग पर नत्थी कर दिए जाते हैं। ऐसे पत्र शाखाधिकारी, उपसचिव आदि को भेजे जाते हैं। वे उस पर सूक्ष्म टिप्पणी लिखते हैं। सूक्ष्म टिप्पणी पत्र के बाईं ओर लिखी जाती है। ऐसी टिप्पणियां बहुत छोटी होती हैं, इसीलिए इन्हें सूक्ष्म टिप्पणी कहते हैं। इनको 'टीप' भी कह दिया जाता है। मंत्री और उच्चाधिकारी इन्हीं का प्रयोग करते हैं।
3. **संपूर्ण टिप्पणी**– कुछ पत्रों के विषय विवादग्रस्त होते हैं। ऐसे पत्रों पर टिप्पणी देना सरल नहीं होता है। उनके विषय में पूरी जानकारी प्राप्त करनी पड़ती है, जिसके लिए एक लंबी प्रक्रिया अपनाई जाती है। पहले पुरानी फाइलों में से उनका पूर्ण विवरण देखना पड़ता है, फिर उससे संबंधित नियमों, अधिनियमों, कुछ समय पूर्व लिखे निर्णयों आदि का सूक्ष्म अध्ययन करना पड़ता है। इसके बाद टिप्पणी में विषय का पूर्ण इतिहास संक्षेप में अंकित किया जाता है। पत्र से संबंधित समस्या का विवरण देने के पश्चात विभिन्न तर्कों एवं तथ्यों से युक्त कुछ सुझाव भी दिए जाते हैं। ऐसी

टिप्पणी

टिप्पणियों को संपूर्ण टिप्पणी कहा जाता है। ये लिपिकों द्वारा तैयार की जाती हैं। तत्पश्चात आदेश के लिए उच्चाधिकारी के समक्ष प्रस्तुत की जाती हैं।

4. **विभागीय टिप्पणी–** कुछ पत्रों में ऐसे मुद्दे भी होते हैं जिन पर कोई एक अनुभाग स्वयं टिप्पणी नहीं लिख सकता। उनके लिए भिन्न-भिन्न विभागों से अलग-अलग आदेश प्राप्त किए जाते हैं। टिप्पणीकार प्रत्येक मुद्दे पर अलग-अलग टिप्पणी तैयार करके उन पर आदेश प्राप्त करता है। ऐसी टिप्पणियों को अनुभागीय अथवा विभागीय टिप्पणी कहते हैं।
5. **अनौपचारिक टिप्पणी–** जिन टिप्पणियों में संपूर्ण नियमों का पालन किया जाता है, उन्हें औपचारिक टिप्पणी कहा जाता है तथा जिन टिप्पणियों में नियमों के पालन का बंधन नहीं होता उन्हें अनौपचारिक टिप्पणी कहते हैं। प्राय: अनौपचारिक टिप्पणी एक मंत्रालय से दूसरे मंत्रालय तथा एक कार्यालय से दूसरे कार्यालय को भेजी जाती है। ये प्राय: किसी पत्र की जानकारी प्राप्त करने के लिए भेजी जाती हैं। ऐसी टिप्पणियों के संबंध में प्राप्त होने वाले उत्तर भी अनौपचारिक पत्र कहलाते हैं।
6. **नित्यक्रमिक टिप्पणी–** कार्यालय में छोटी-छोटी बातों से संबंधित तैयार की जाने वाली टिप्पणियां नित्यक्रमिक टिप्पणी कहलाती हैं। ऐसी टिप्पणियां अभिलेख के लिए नहीं रखी जाती।

• टिप्पणी और संक्षेपण में अंतर

1. संक्षेपण में अवतरण के कथन को ज्यों का त्यों प्रामाणिक और सत्य मानकर उसे संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करना होगा, जबकि टिप्पण लिखते समय टिप्पणीकार को तथ्यात्मकता तथा नियमानुकूलता आदि की दृष्टि से उसकी समीक्षा करनी होती है।
2. संक्षेपण में संक्षेपणकार अपनी ओर से कुछ भी जोड़ नहीं सकता। दिए गए वक्तव्य पर ही उसे अपना कौशल दिखाना है, जबकि टिप्पणी लेखक यदि आवश्यक समझता है, तो संबंधित नियमों, उपनियमों आदि का भी उल्लेख कर सकता है।
3. टिप्पणीकार पत्र-लेखक के वक्तव्य को संक्षेपणकार की तरह अंतिम सत्य नहीं मानता। उसकी भूमिका निर्णायक की भी होती है।
4. संक्षेपणकार की भूमिका तटस्थता और निस्संगतापूर्ण होती है, जबकि टिप्पणीकार संदर्भित पत्र पर की गई कार्यवाही का महत्वपूर्ण अंग बन जाता है।
5. संक्षेपण में लेखक उदाहरण और दृष्टांत आदि नहीं दे सकता, जबकि टिप्पणकार मिलते-जुलते अन्य मामलों का हवाला देकर अपने टिप्पण की प्रामाणिकता सिद्ध कर सकता है।
6. संक्षेपण हमेशा मूल से छोटा (1/3) होना चाहिए, जबकि टिप्पणी में ऐसी कोई सीमा नहीं होती। कभी-कभी टिप्पणी मूल से भी बड़ी हो जाती है।

• कार्यालय-टिप्पणी में बहुलता से प्रयुक्त होने वाले कुछ महत्वपूर्ण वाक्यांश

1. मुझे आपके पत्र की पावती (Acknowledgement) भेजने का निर्देश हुआ है।
2. मुझे यह निर्देश दिया गया है कि मैं आपको सूचित करूं/आपसे अनुरोध करूं.....

टिप्पणी

3. आपके दिनांक .... के पत्रांक .... के संदर्भ में।
4. आपका ध्यान उद्योग-मंत्रालय के औद्योगिक विकास विभाग के दिनांक .... के इसी संख्या के कार्यालय ज्ञापन की ओर आकर्षित किया जाता है।
5. कृपया .... के संबंध में दिनांक .... के अपने पत्रांक .... की ओर ध्यान दें।
6. प्रतिलिपि, सूचना एवं आवश्यक कार्यवाही के लिए निम्नलिखित को भेजी जा रही है।
7. इस संबंध में मुझे कहना है, आपको सूचना देनी है कि ....
8. आपने जिस ज्ञापन का उल्लेख किया है, उसके संबंध में अनुरोध है कि.......
9. निम्न कागज-पत्रों की एक-एक प्रतिलिपि सूचना निर्देशन/आवश्यक कार्यवाही शीघ्र अनुपालन के लिए भेजी जा रही है।
10. आपसे इस मामले की वर्तमान स्थिति की सूचना देने का अनुरोध है।
11. कृपया शीघ्र उत्तर देने का कष्ट करें।
12. इसे मूल रूप में ही इस टिप्पणी के साथ लौटाया जाता है कि अपेक्षित सूचना इस कार्यालय के दिनांक .... के पत्रांक .... के द्वारा पहले ही भेजी जा चुकी है।
13. इस प्रस्ताव पर विचार करने के पूर्व हम उन कागजात को देखना चाहते हैं, जिनका इस कार्यवाही से संबंध है।
14. पत्र मिलने की सूचना दे दी गई है।
15. यात्रा-भत्ता संबंधी बिल देख लिए गए हैं। वे सब यथातथ्य हैं। भुगतान की स्वीकृति दे दी जाए।
16. इसकी अनुमति देना जनहित में न होगा।
17. इस व्यय के लिए इस वित्तीय-वर्ष के बजट में व्यवस्था है।
18. कार्यालय की टिप्पणी नियमानुकूल है, आदेश जारी कर दिया जाए।
19. श्री .... को सूचित कर दिया जाए कि उनके आवेदन पर सक्रिय रूप से विचार हो रहा है। निर्णय शीघ्र ही भेज दिया जाएगा।
20. प्रार्थना-पत्र उचित माध्यम से नहीं आया है, इस पर विचार नहीं हो सकता।
21. प्रारूप पर स्वीकृति दी जा रही है।
22. तुरंत अनुस्मारक (Reminder) भेजा जाए।
23. मामला अभी मंत्रालय के विचाराधीन है।
24. केंद्रीय कार्यालय से परामर्श किया जाए।
25. अपेक्षित जानकारी आवेदक से मंगाई जा रही है, मिलते ही भेज दी जाएगी।
26. उत्तर का प्रारूप अनुमोदन के लिए प्रस्तुत है।
27. विचाराधीन पत्र की प्राप्ति की सूचना अभी नहीं भेजी गई है।

टिप्पणी

28. हम स्वीकृति देने में अक्षम हैं।
29. रिकॉर्ड कर दिया जाए।
30. प्रस्ताव सर्वथा नियमानुकूल है।
31. अंतिम निर्णय किया जा चुका है।
32. इस पर कोई टिप्पणी नहीं करनी है।
33. कृपया संबंधित कागज-पत्र शीघ्र लौटाएं।
34. आवश्यक कार्यवाही हेतु अग्रेषित।
35. आगे कोई कार्यवाही अपेक्षित नहीं है।
36. संबंधित आदेश चिह्नित कर दिए गए हैं।
37. फाइल कर दिया गया है।
38. कृपया देख लें।
39. देख लिया, सही है, धन्यवाद।
40. आदेश के लिए प्रस्तुत है।

विस्तृत टिप्पणियों के उदाहरण

1. इस पर हमारी ओर से कोई कार्यवाही किए जाने की जरूरत नहीं दिखती। यदि अनुमति हो तो कागजों को रिकार्ड कर दिया जाए।
2. प्रस्ताव पर विचार करने से पूर्व हम मंत्रालय से उन कागजों को साथ लगा देने का अनुरोध करते हैं, जिनमें ये रियायतें स्वीकृत की गई थीं।
3. .... मंत्रालय ने जो कागज मांगे हैं, वे इस फाइल के साथ लगा दिए गए हैं।
4. मूल रूप में ही इस टिप्पणी के साथ लौटाया जाता है कि अपेक्षित सूचना पहले ही इस कार्यालय के दिनांक .... पत्र सं. .... द्वारा भेजी जा चुकी है।
5. इस विषय से संबंधित कागज-पत्र .... अनुभाग को स्थानांतरित कर दिए गए हैं। अनुभाग कृपया इस बारे में आगे की कार्यवाही के लिए देख ले।
6. आवेदन पत्र ठीक ही लगता है। मंजूरी के मसौदे के अनुसार आवश्यक अनुमति देने में हमें कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।
7. निदेशक के निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई औचित्य दिखाई नहीं पड़ता है।
8. समय पर रिपोर्ट पेश करने की व्यवस्था की जा रही है।

टिप्पणी

टिप्पणी के उदाहरण

उदाहरण 1

प्रेषक-

अशोक सिंह

शोधार्थी

हिन्दी- विभाग

जयपुर, राजस्थान

संदर्भ -रिस/हि./2334/2014-15

प्रति,

कुल सचिव

राज.विश्वविद्यालय; जयपुर।

विषय : शोध-कार्य की अवधि बढ़ाने के संबंध में।

मान्यवर,

निवेदन है कि मेरा शोध विषय दिनांक 28.3.2014 को विश्वविद्यालय की रिसर्च डिग्री कमेटी के द्वारा स्वीकृत किया गया था। मेरी लंबी बीमारी के कारण निर्धारित अवधि में मेरा शोध कार्य पूरा नहीं हो सका। दिनांक 25.10.2015 को मेरे कार्य की निर्धारित अवधि समाप्त हो रही है। आपसे प्रार्थना है कि इस कार्य को पूर्ण करने के लिए मुझे एक वर्ष का अतिरिक्त समय और दिया जाए।

भवदीय

ह. अशोक सिंह

दिनांक 25.04.2015

संलग्नक:

स्टेट बैंक ऑफ इंडिया का सौ रुपए का ड्राफ्ट।

शोध निदेशक की संस्तुति

यह प्रार्थना पत्र इस संस्तुति के साथ अग्रेषित किया जाता है कि शोधार्थी ने बड़ी लगन और तत्परता से लगभग तीन चौथाई कार्य पूर्ण कर लिया है। रुग्णता के कारण उसके कार्य में व्यवधान आया है। अतः शोधार्थी को एक वर्ष का अतिरिक्त कार्यकाल और प्रदान करने की कृपा की जाए।

ह./

दिनांक 05.05.2015

संबंधित विभागीय अधिकारी की टिप्पणी

टिप्पणी

श्रीमान,

शोधार्थी का प्रार्थना पत्र नियमानुकूल है। आवेदन के साथ शोध अवधि बढ़ाने के लिए निर्धारित शुल्क (सौ रुपए) का बैंक-ड्राफ्ट भी संलग्न है।

ह./

कार्यभारी (प्रभारी)

शोध-विभाग

राज. विश्वविद्यालय

कुल सचिव की अंतिम टिप्पणी

शोधार्थी के इस आवेदन को आगामी शोध-समिति की बैठक में विचारार्थ रखा जाए।

ह./

दिनांक 15.05.2015

कुल सचिव

राज. विश्वविद्यालय

उदाहरण 2

विषय- जिला परिषदों द्वारा लेखा परीक्षा शुल्क से मुक्त किए जाने की प्रार्थना।

महोदय,

उपर्युक्त विषय में मुझे यह कहने का निर्देश हुआ है कि संबंधित मामला प्रशासन वित्त (लेखा परीक्षा) अनुभाग के विचाराधीन है। लिए गए निर्णय से यथासमय अवगत कराया जाएगा।

भवदीय

गोपी शर्मा

महासचिव

टिप्पणी

अतिरिक्त मुख्य अधिकारी

उपसचिव उ. प्र. शासन, लखनऊ का पत्र अवलोकनार्थ प्रस्तुत है। लेखा परीक्षा शुल्क से मुक्ति पाने का प्रश्न शासन के वित्त (लेखा परीक्षा) अनुभाग के विचाराधीन है, निर्णय की प्रतीक्षा की जाए, सूचनार्थ।

राम सिंह

दिनांक 20/06/2015

उदाहरण 3

टिप्पणी

सेवा में,

श्रीमान कार्यकारी अधिकारी

नगर पालिका,

चौमू।

मान्य महोदय,

निवेदन है कि जाड़े का मौसम आरंभ हो गया है, किंतु इस वर्ष मुझे अभी तक नगरपालिका की ओर से गर्म कोट नहीं मिला है। आपसे करबद्ध प्रार्थना है कि मुझे यथाशीघ्र गर्म कोट दिलाने की कृपा की जाए। इसके लिए मैं आपका अत्यंत आभारी होऊंगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक:

सेवा

सफाई कर्मचारी

नगर पालिका चौमू

टिप्पणी

इस वर्ष नगरपालिका के किसी भी सफाई कर्मचारी को गर्म कोट नहीं दिया गया है, क्योंकि अभी तक शासन से उक्त मद के लिए बजट की स्वीकृति नहीं आई है। इस संबंध में शासन को लिखा जा चुका है। स्वीकृति की प्रत्याशा में गर्म कोट दिया जा सकता है।

ह. कार्यालय अधीक्षक

04.10.2015

उदाहरण 4

सेवा में,

प्राचार्य महोदय

मेरठ कॉलेज,

मेरठ।

आदरणीय प्राचार्य महोदय,

सेवा में सविनय निवदेन है कि आज प्रातः काल 10 बजे जब मैं कॉलेज आ रहा था, अकस्मात मुझ पर पांच-छह लड़कों ने आक्रमण कर दिया। इनमें से दो लड़कों के हाथों में छोटे-छोटे डंडे भी थे। मैं इन्हें पहचानता हूं। ये हमारे कॉलेज के बी.ए. (प्र.व.) के छात्र हैं। इनमें से दो के नाम हैं- बलभद्र प्रसाद शर्मा तथा शिवेंद्र मोहन। इन्होंने मुझे यह भी धमकी दी है कि यदि मैं इनकी रिपोर्ट करूंगा तो मुझे इसके परिणाम भुगतने होंगे। आपसे प्रार्थना है कि उक्त छात्रों को उचित दंड दिया जाए, जिससे भविष्य में वे ऐसी हरकतें न करें।

आपका आज्ञाकारी शिष्य

सुरेशचंद्र

बी.ए. (द्वि. व.)

दिनांक: 12.04.2015

टिप्पणी

पृष्ठांकन

मुख्य अनुशासक,

इस संदर्भ में आवश्यक जांच-पड़ताल करके मुझसे मिलने का कष्ट कीजिए।

ह............

प्राचार्य 12.04.2015

टिप्पणी

आपके द्वारा पृष्ठांकित, श्री सुरेशचंद्र के दिनांक 12.04.2015 के प्रार्थना-पत्र के संदर्भ में मैंने बलभद्र प्रसाद शर्मा, शिवेंद्र मोहन तथा अन्य छात्रों से पूछताछ की जिससे ज्ञात हुआ कि दिनांक 12.04.2015 को उक्त दोनों छात्रों ने सुरेशचंद्र की पिटाई की। इन दोनों ने लिखित रूप में क्षमायाचना कर ली है, जिसकी प्रति संलग्न है। प्रथम अपराध होने के कारण इस बार इन्हें क्षमा करते हुए भविष्य के लिए कड़ी चेतावनी दी जाए।

मुख्य अनुशासक

16.04.2015

उदाहरण 5

कार्यालय जिला नियोजन अधिकारी, अलवर

पत्रांक 944/विविध/जी.सी./2014-15 **दिनांक 20 अगस्त, 2015**

प्रेषक:

जिला नियोजन अधिकारी

अलवर।

सेवा में,

सचिव

जिला परिषद

अलवर।

विषयः ग्राम-समूह बानसूर की पेयजल योजना व स्वच्छता-कार्यक्रम।

महोदय,

अधिशासी अभियंता, स्वायत्त शासन अभियंत्रण विभाग (राजस्थान) जयपुर ने सूचित किया है कि आदर्श ग्राम के लिए चुने गए इस जनपद के बानसूर देवमल विकास खंड में स्थित बानसूर पेयजल योजना का प्राकलन तैयार हो चुका है, जिसकी अनुमानित लागत 2 लाख 60 हजार रुपए है।

भवदीय

जिला नियोजन अधिकारी, अलवर

टिप्पणी

मुख्याधिकारी

जिला नियोजन अधिकारी, अलवर का दिनांक 20 अगस्त, 2015 का पत्रांक 944/विविध /जी.सी./2009-2010 अवलोकनार्थ प्रस्तुत है। इस पत्र के अनुसार बानसूर विकास क्षेत्र में स्थित ग्राम बानसूर पेयजल योजना के 2.60 लाख रुपए के प्राकलन का प्रस्ताव परामर्शदात्री समिति की 30 अगस्त, 2011 की बैठक में पारित होना है। अतः परामर्शदात्री समिति की बैठक में उक्त प्रस्ताव रखने की अनुमति प्रदान की जाए, जिससे प्रस्ताव पारित करा कर शासन की आगामी कार्वाई हेतु अग्रेषित किया जा सके।

मोहन सिंह

24.8.2015

उदाहरण-6

सेवा में,

प्राचार्य महोदया,

कनोडिया गर्ल्स महाविद्यालय, मेरठ

महोदया,

निवेदन है कि विगत रात्रि से ज्वर तथा शीत से आक्रांत होने के कारण मैं महाविद्यालय आने में असमर्थ हूं। अतः मुझे दिनांक 8 से 11 मार्च, 2015 तक का अवकाश प्रदान करने की कृपा करें।

सधन्यवाद।

भवदीया

प्राध्यापिका, हिन्दी-विभाग

दिनांक: 8.3.2015

टिप्पणी

.... अपने देय संपूर्ण आकस्मिक अवकाश का उपभोग कर चुकी हैं। ऐसी स्थिति में इन्हें दिनांक 8 से 11 मार्च, 2015 तक का उपार्जित अवकाश दिया जा सकता है, जो देय है।

आदेशार्थ

लिपिक

दिनांक 8.3.2015

4.4 सारांश

आज के वैज्ञानिक युग में संचार-माध्यमों के विकास के द्वारा पत्राचार से हजारों मील दूर बैठे आत्मीयों से संपर्क स्थापित किया जा सकता है। पत्र आज की दुनिया में वैचारिक प्रगति के पहिए हैं। लिपि के विकास से पूर्व चित्रों अथवा विभिन्न संकेतों के माध्यम से सूचना-संप्रेषण

टिप्पणी

अपनी प्रगति जांचिए

4. विस्तृत को लघु या बड़े को छोटा करने की प्रक्रिया को क्या कहा जाता है?
5. भाव विस्तार, वृद्धिकरण, संवर्धन आदि किस विधि के अंतर्गत किया जाता है?
6. सही-गलत बताइए-

(क) टिप्पणी छह प्रकार की होती है।

(ख) टिप्पण शब्द अंग्रेजी के ड्राफ्ट शब्द से लिया गया है।

टिप्पणी

का काम किया जाता था। पत्र-लेखन में क्षमता प्राप्त करना प्रत्येक सभ्य एवं शिष्ट व्यक्ति की कामना होती है। पत्र को हम विश्वबंधुत्व का एक प्रबल माध्यम भी कह सकते हैं। दुनिया के अनेक साधारण और असाधारण व्यक्तियों ने पत्रों के द्वारा मित्र बनाकर जीवन में महती सफलता प्राप्त की है। हर व्यक्ति किसी न किसी रूप में इन पत्रों से जुड़ा हुआ है। किसी भी महापुरुष, नेता, साहित्यकार द्वारा लिखे गए पत्रों के द्वारा हम उसकी चिंतनकला, विचारधारा, जीवन दर्शन, देश-विदेश नीति तथा अन्य बहुत-सी उपयोगी क्षेत्रों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

पत्र एक ऐतिहासिक दस्तावेज है, जो लिखने वाले के हाथ से छूटकर किसी अन्य के हाथ में जाता है। उसका सदुपयोग अथवा दुरुपयोग भी हो सकता है। किसी ने ठीक ही कहा है कि बोलते समय एक बार सोचो और लिखते समय तीन बार। भावावेश में कभी मत लिखो। क्रोध, द्वेष आदि के आवेश में लिखे गए पत्रों के लिए बड़े-बड़े दिग्गजों को क्षमा-याचना करते हुए देखा गया है। लिख चुकने के बाद संपूर्ण पत्र को एक बार सावधानी से पढ़ लेना चाहिए, जिससे शीघ्रता में लिखी गई वर्तनी आदि की अशुद्धियों को ठीक किया जा सके तथा फालतू बातों को पत्र से काट दिया जाए। एक सफल पत्र तैयार करने के लिए, उसे काट-छांट आदि से बचाने के लिए समझदार लोग पत्र की कच्ची रूपरेखा पहले तैयार कर लेते हैं। प्राप्तकर्ता का पता लिफाफे आदि पर सावधानीपूर्वक लिखा जाना चाहिए, जिसमें जनपद, प्रांत तथा पिन कोड आदि का उल्लेख पत्र को उसके गंतव्य तक पहुंचाने के लिए अत्यंत अनिवार्य है।

कार्यालयी पत्रों में सरकारी पत्रों का प्रयोग सबसे अधिक किया जाता है। इन्हें आधिकारिक एवं नियमित पत्र भी कहते हैं। सरकारी पत्रों का प्रयोग एक सरकार द्वारा दूसरी सरकार को, उसके अधीन राज्य सरकार को, निर्वाचन आयोग को, संघ लोक सेवा आयोग, योजना आयोग, अर्ध-सरकारी आयोगों एवं निकायों को, विभिन्न अर्ध-सरकारी/गैर सरकारी संघों, संरचनाओं, प्रांतीय सरकारों के प्रमुख मामलों में भारत सरकार को तथा अपने क्षेत्र के उच्च न्यायालयों, आयोगों एवं निगमों, विभागीय अध्यक्षों एवं अधिकारियों को, सरकार से अलग सार्वजनिक प्रतिष्ठानों एवं स्वतंत्र कार्यालयों आदि के लिए किया जाता है।

पत्र लिखना अपने आप में एक कला है। यह प्राचीन समय से चली आ रही है, व्यावसायिक जगत में मौखिक शब्दों की अपेक्षा लिखित शब्दों का महत्व अधिक है, क्योंकि व्यावसायिक क्षेत्रों में पत्र अपना अलग ही महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। अत: इस क्षेत्र में भी पत्र लिखने की अपनी ही एक कला होती है, ऐसे पत्र बड़ी सूझ-बूझ के साथ लिखे जाते हैं। इस सूझ-बूझ के बिना हम अपनी समस्या और कार्य सही रूप में नहीं करवा सकते। व्यावसायिक क्षेत्र में मूल्य-पत्र, विज्ञापन-पत्र, क्रयादेश-पत्र, विक्रय-पत्र, अनुरोध-पत्र एवं निविदा पत्र आदि आते हैं। वर्तमान समय में व्यावसायिक क्षेत्र में पत्रों का अपना अलग ही महत्व है।

आधुनिक समाज में सबके लिए एक ऐसे मानसिक प्रशिक्षण की आवश्यकता है, जिसमें कम से कम शब्दों का प्रयोग करते हुए लेखन संबंधी कामकाज को त्वरित ढंग से पूरा किया जा सकता हो। संक्षेपण की इस कला और कुशलता से छात्रों के पठन पाठन तथा लेखन में भी सरलता, स्पष्टता, स्वच्छता और प्रभावकारिता जैसी विशेषताएं उत्पन्न होती हैं। उसमें शब्द-संयम, भाव संयम और चिंतन संयम की क्षमता बढ़ती है। अत: हम कह सकते हैं कि संक्षेपण से हमारे श्रम और समय की बचत होती है।

टिप्पणी

पल्लवन को वृद्धिकरण, विषदीकरण, संवर्धन या भाव-विस्तार आदि भी कहते हैं। डॉ. राघव प्रकाश पल्लवन के संदर्भ में लिखते हैं, "पल्लवन में किसी संक्षिप्त गूढ़ विचार-भाव, सूक्ति को विस्तार से स्पष्ट करने की आवश्यकता होती है। लेखकों द्वारा रची गई या समाज में परंपरा से चली आती हुई कुछ सूक्तियां ऐसी होती हैं कि सामान्य व्यक्ति उनके मूल आशय को अच्छी तरह समझ नहीं सकता। ऐसी स्थिति में हमें उस उक्ति को खोलकर उदाहरण देते हुए इस तरह से स्पष्ट करना चाहिए कि वह संक्षिप्त गूढ़ बात सभी को सहजता से बोधगम्य हो जाए।" अत: स्पष्ट है कि "लेखक के मूल लेख या वक्ता के कथन को विस्तार के साथ लिखने या अभिव्यक्त करने की क्रिया को पल्लवन या भाव विस्तार कहते हैं।"

संक्षिप्तीकरण, पत्र-लेखन तथा प्रारूपण के समान ही टिप्पण भी कार्यालयों के कामकाज की पारस्परिक प्रणाली की महत्वपूर्ण कड़ी है। टिप्पण शब्द भी ऊपर के तीनों पारिभाषिक शब्दों की तरह अंग्रेजी से ही लिया गया है। यह शब्द Noting के अर्थ में चलता है, जिसका अर्थ है–टिप्पणी या संक्षिप्त राय देना। कार्यालयों में समय पर प्राप्त होने वाले पत्रों पर आदि से अंत तक कार्यवाही करते हुए विभिन्न स्तरों के अधिकारी, प्रधान अधिकारी द्वारा अंतिम निर्णय दे दिए जाने तक जो 'नोट' या अभ्युक्तियां (Remarks) लिखते हैं, उन्हीं को टिप्पण कहा जाता है।

4.5 मुख्य शब्दावली

- **संक्षेपण** : सार लेखन।
- **ज्ञापन** : बोधक, सूचक।
- **आक्रांत** : पीड़ित।
- **आकस्मिक** : अचानक।
- **अवकाश** : छुट्टी।
- **सिद्धहस्त** : काम में चतुर।
- **मितव्ययिता** : कम व्यय।
- **स्वयंमेव** : अपने आप।
- **व्यवधान** : बाधा, रुकावट।
- **अनुपालना** : ध्यान रखना।
- **पल्लवन** : वृद्धिकरण, भाव-विस्तार।
- **जिज्ञासा** : जानने की इच्छा।

4.6 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर

1. व्यावहारिक या कार्यालयी हिन्दी का।
2. पत्र लेखन से।

3. (क) सही (ख) गलत।
4. संक्षेपण।
5. पल्लवन।
6. (क) सही (ख) गलत।

टिप्पणी

4.7 अभ्यास हेतु प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. कार्यालयी पत्र के विभिन्न रूपों का परिचय दीजिए।
2. पत्र लेखन की उपयोगिता बताइए।
3. संक्षेपण का अर्थ बताइए।
4. पल्लवन का महत्व स्पष्ट कीजिए।
5. टिप्पणी और संक्षेपण में अंतर बताइए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. पत्र-लेखन की अवधारणा स्पष्ट करते हुए पत्र-लेखन के गुण और विशेषताएं बताइए।
2. संक्षेपण का महत्व बताते हुए उसकी विधि और विशेषताओं का विवेचन कीजिए।
3. टिप्पणी का अर्थ बताते हुए टिप्पणी के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख कीजिए।
4. पल्लवन, संक्षेपण एवं टिप्पणी का तुलनात्मक विश्लेषण कीजिए।
5. पल्लवन एवं टिप्पणी की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

4.8 आप ये भी पढ़ सकते हैं

1. विनोद कुमार प्रसाद, *भाषा और प्रौद्योगिकी*, वाणी, नई दिल्ली।
2. प्रेमचंद पातंजलि, *व्यावसायिक हिन्दी*, वणी, नई दिल्ली।
3. प्रेमचंद पातंजलि, *आधुनिक विज्ञापन*, नई दिल्ली।
4. विनोद गोदरे, *प्रयोजनमूलक हिन्दी*, वाणी, नई दिल्ली।
5. रविन्द्रनाथ श्रीवास्तव, *प्रयोजनमूलक हिन्दी*, केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा।
6. दंगल झाल्टे, *प्रयोजनामूलक हिन्दी, सिद्धांत और प्रयोग*, वाणी, नई दिल्ली।
7. शिवनारायण चतुर्वेदी, *टिप्पणी प्रारूप*, वाणी, नई दिल्ली।
8. शिवनारायण चतुर्वेदी, *प्रालेखन प्रारूप*, वाणी, नई दिल्ली।
9. माणिक मृगेश, *राजभाषा हिन्दी*, वाणी, नई दिल्ली।
10. कैलाशचन्द्र भाटिया, *राजभाषा हिन्दी*, वाणी, नई दिल्ली।
11. महेशचन्द्र गुप्त, *प्रशासनिक हिन्दी, ऐतिहासिक संदर्भ*, वाणी नई दिल्ली।
12. रहमतुल्लाह, *व्यावसायिक हिन्दी*, वाणी, नई दिल्ली।
13. भोलनाथ तिवारी एवं विजय कुलश्रेष्ठ, *पत्र-व्यवहार निर्देशिका*, वाणी, नई दिल्ली।
14. भोलनाथ तिवारी, *प्रारूपण, टिप्पण और प्रूफ-पठन*, वाणी, नई दिल्ली।

टिप्पणी

इकाई 5 अनुवाद

टिप्पणी

इकाई की रूपरेखा

5.0 परिचय
5.1 इकाई के उद्देश्य
5.2 अनुवाद : सामान्य परिचय
- 5.2.1 अनुवाद – अर्थ एवं स्वरूप
- 5.2.2 अनुवाद के क्षेत्र
- 5.2.3 अनुवाद के स्वरूप
- 5.2.4 अनुवाद के प्रकार
- 5.2.5 अनुवाद के गुण
- 5.2.6 अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद

5.3 पारिभाषिक शब्दावली : सामान्य परिचय
- 5.3.1 पारिभाषिक शब्दावली : अर्थ एवं परिभाषा
- 5.3.2 पारिभाषिक शब्दावली की विशेषताएं
- 5.3.3 पारिभाषिक शब्दों के प्रकार
- 5.3.4 चुने हुए 150 पारिभाषिक शब्द

5.4 सारांश
5.5 मुख्य शब्दावली
5.6 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर
5.7 अभ्यास हेतु प्रश्न
5.8 आप ये भी पढ़ सकते हैं

5.0 परिचय

प्रयोजनमूलक हिन्दी आज की सबसे बड़ी भाषिक आवश्यकता है। प्रयोजनमूलक एक पारिभाषिक शब्द है। आधुनिक समय में विज्ञान, प्रौद्योगिकी, विधि और सरकारी कार्यालयों में भाषा प्रयोग का दायरा बहुत अधिक बढ़ा, जिसके कारण हिन्दी भाषा में प्रयोग के स्तर पर परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की गई, और उसी के फलस्वरूप प्रयोजनमूलक हिन्दी का स्वरूप सामने आया। हिन्दी के इस नये स्वरूप प्रयोजनमूलक हिन्दी के मुख्य तीन तत्व हैं– पारिभाषिक शब्दावली, अनुवाद और भाषिक संरचना।

हम जिस दुनिया में रहते और स्वयं को अभिव्यक्त करते हैं, उस दुनिया की हमारी समझ भाषा और ज्ञान की परम्परा से बनती है। जैसे–जैसे दुनिया का स्वरूप परिवर्तित होता है, वैसे–वैसे उसे जानने–समझने की प्रविधि भी बदलती जाती है। दुनिया का स्वरूप अत्यधिक विस्तृत है। इसलिए इस दुनिया में भाषा और ज्ञान के स्तर पर भी अत्यधिक विविधता है। उन सबको जानना–समझना हमारी प्रगति के लिए आवश्यक है। अतः दुनिया भर की भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान को समझने के लिए अनुवाद एक श्रेष्ठ माध्यम है। अनुवाद के द्वारा ही हम भिन्न–भिन्न भाषाओं में उपलब्ध ज्ञान को समझते हैं। आज दुनिया भर में अनुवाद की महत्ता बढ़ती जा रही है। ज्ञान, विज्ञान, विधि और न्यायालय, सरकारी

कार्यालय, शिक्षा, जनसंचार, साहित्य, संस्कृति, व्यापार और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध के क्षेत्र में आज अनुवाद की अनिवार्यता एवं आवश्यकता को भुलाया नहीं जा सकता।

टिप्पणी

इसी प्रकार प्रयोजनमूलक हिन्दी के दूसरे तत्व 'पारिभाषिक शब्दावली' को देखा–समझा जा सकता है। पारिभाषिक शब्दावली को अंग्रेजी में 'टेक्निकल टर्मिनालॉजी' कहा जा सकता है। पारिभाषिक शब्दावली विशेष क्षेत्र में विशिष्ट एवं निश्चित अर्थ रखती हैं। पारिभाषिक शब्दावली किसी विशेष क्षेत्र की संकल्पनाओं और विचारों को सटीक अर्थ देने वाली होती है। पारिभाषिक शब्दावली निश्चित अर्थों में पारिभाषित होती है। इसकी सीमा बंधी होती है। ज्ञान के क्षेत्र में पारिभाषिक शब्दावली का महत्व निर्विवाद है। पारिभाषिक शब्दावली द्वारा ही हम किसी विशिष्ट विचार, अर्थ को कम से कम शब्दों में व्यक्त कर पाते हैं। आज साहित्य, मानविकी, समाज विज्ञान, प्रौद्योगिकी, विज्ञान, कार्यालय, प्रशासन, जनसंचार, चिकित्सा, ज्योतिष, अंतरिक्ष, कम्प्यूटर, विधि और संगीत आदि क्षेत्रों में पारिभाषिक शब्दावली का सफलतापूर्वक प्रयोग हो रहा है।

प्रस्तुत इकाई में हम अनुवाद और पारिभाषिक शब्दावली के सन्दर्भ में विस्तार से समझेंगे साथ ही अनुवाद और पारिभाषिक शब्दावली के प्रयोग एवं महत्व से भी परिचित होंगे।

5.1 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप–

- अनुवाद की परिभाषा, अर्थ और स्वरूप से परिचित हो पाएंगे;
- अनुवाद के प्रकार और प्रक्रिया को जान पाएंगे;
- ज्ञान के सन्दर्भ में अनुवाद के महत्व को समझ पाएंगे;
- पारिभाषिक शब्दावली की परिभाषा, अर्थ एवं स्वरूप से परिचित हो पाएंगे;
- पारिभाषिक शब्दावली के प्रयोग और महत्व को समझ पाएंगे।

5.2 अनुवाद : सामान्य परिचय

अनुवाद भाषा की एक रचनात्मक प्रक्रिया है। आज जिस तरह से सारी दुनिया एक दूसरे के समीप आ रही है उसमें अनुवाद का महत्व बढ़ता जा रहा है। एक दूसरे की संस्कृति, इतिहास, भाषा और साहित्य से परिचित होने के लिए अनुवाद की आवश्यकता पड़ती है। भूमंडलीकरण की प्रक्रिया आरम्भ होने के बाद तो दुनिया के कई सारे देश एक दूसरे के साथ बड़े पैमाने पर व्यापारिक सम्बन्ध बना रहे हैं, जिसके लिए एक दूसरे की भाषा, सांस्कृतिक परम्पराओं आदि को जानने–समझने के लिए भी अनुवाद ही सबसे सशक्त माध्यम बन कर उभरा है।

भारत बहुभाषा–भाषी और कई संस्कृतियों का देश है। आपसी विभिन्नता के बाद भी प्राचीनकाल से ही भारतीय भाषाओं एवं संस्कृतियों में आदान–प्रदान अनुवाद के माध्यम से

चलता रहा है। केवल भारतीय साहित्य की बात करें तो पौराणिक महाकाव्यों में रामायण और महाभारत को लगभग सभी संस्कृतियों एवं भाषाओं में व्यापक प्रतिष्ठा प्राप्त है। राम–कथा का मूल आधार वाल्मीकि रामायण है। वाल्मीकि रामायण से ही राम–कथा को दूसरी भाषाओं और संस्कृतियों ने ग्रहण किया। जैसे, कम्ब रामायण (तमिल), असमिया रामायण (असम), पंजाबी रामायण (पंजाबी), रंगनाथ रामायण (तेलुगु) तथा अध्यात्म रामायण के आधार पर अध्यात्म रामायणम् (मलयालम), नेपाली रामायण (नेपाली) तथा रामकथा के अन्य विकसित रूपों के आधार पर बंगला रामायण (बंगला), उड़िया रामायण (उड़िया), तोखे रामायण, भावार्थ रामायण आदि ग्रन्थ लिखे गये। इसी तरह कृष्ण कथा को भी विभिन्न भारतीय भाषाओं में लिखा गया है। कृष्ण काव्य का आविर्भाव सबसे पहले तमिल में हुआ। कन्नड़ में 'जगन्नाथ–विजय ग्रंथ' में कृष्ण से सम्बन्धित लीलाओं का वर्णन है। उड़िया में 'महाभारत', असमिया में शंकरदेव 'कृष्णकीर्तन' कृष्ण काव्य की प्रथम रचना है। ने 'कृष्णकाव्य' का प्रचार–प्रसार किया। कृष्ण–कथा और रामकथा की परंपरा भारतवर्ष की लगभग सभी भाषाओं में पायी जाती है। बाह्य रूप–विधान में थोड़ा बहुत अन्तर होते हुए भी विभिन्न भारतीय भाषाओं में लिखे गये कृष्ण और रामकथा आपसी आदान–प्रदान के उदाहरण हैं। एक भाव–भूमि, एक चिन्तन–धारा, एक भक्ति–धारा, एक सांस्कृतिक सूत्र पूरे भारत की एकता को और अधिक मजबूत करती रही है। साहित्य और संस्कृति में एकता का यह सूत्र अनुवाद के द्वारा ही सम्भव हो सका।

टिप्पणी

प्राचीनकाल में अनुवादक को 'दोभाषिया' कहा जाता था। एक ऐतिहासिक तथ्य सिकन्दर और पोरस के युद्ध के बारे में यह है कि जब पोरस को सिकन्दर के सामने लाया गया तो सिकन्दर ने पोरस से पूछा कि 'आपके साथ कैसा व्यवहार किया जाय?' तो पोरस ने सिकन्दर से कहा कि 'जैसा एक राजा दूसरे राजा के साथ करता है।' इतिहास में दर्ज है कि पोरस के उस जबाव से सिकन्दर इतना प्रभावित हुआ कि वह अपने विश्वविजय के संकल्प को छोड़ वापस यूनान चला गया। इसमें एक रोचक बात यह है कि यूनान के सिकन्दर और भारत के पोरस के बीच यह पूरी बातचीत किस तरह हुई होगी? जबकि दोनों भिन्न भाषा–भाषी थे। तो यह तय है कि यह पूरी बातचीत किसी दोभाषिये (अनुवादक) के माध्यम से ही हुई होगी। इसका अर्थ है कि 326 ईसापूर्व दुनिया का इतिहास और एक विश्वविजेता के संकल्प की दिशा एक दोभाषिये (अनुवादक) ने बदल दी थी।

तात्पर्य यह है कि प्राचीन काल से लेकर आज तक दुनिया को पास लाने, भिन्न–भिन्न भाषाओं, संस्कृति को एक दूसरे से परिचित कराने, वैश्विक स्तर पर व्यापार आदि को संभव बनाने, आज के आधुनिक राष्ट्र–राज्यों के व्यापारिक, कूटनीतिक एवं विदेश नीति को संभव बनाने में अनुवाद का अभूतपूर्व योगदान रहा है, जिसकी जरूरत समय के साथ लगातार बढ़ रही है। उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि अनुवाद से भावनात्मक एकता, ज्ञान का विस्तार, दूसरी संस्कृतियों से परिचय और सम्बन्ध, सांस्कृतिक एकता, परम्पराओं और संस्कृतियों का संरक्षण, दूसरे राष्ट्रों एवं समुदायों के बारे में जानकारी, व्यापार आदि में विस्तार, शोध एवं अन्वेषण कार्य, दूसरी भाषा में लिखित सिद्धान्तों एवं साहित्य की प्रकृति का ज्ञान एवं अभिव्यक्ति में प्रसार आदि के उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है।

टिप्पणी

5.2.1 अनुवाद – अर्थ एवं स्वरूप

'अनुवाद' संस्कृत भाषा का एक यौगिक शब्द है। यह 'वाद' शब्द में 'अनु' उपसर्ग जोड़ने से निर्मित हुआ है। आगे बढ़ने से पहले 'वाद' शब्द की उत्पत्ति को भी समझ लेना चाहिए। संस्कृत के 'वद्' धातु का अर्थ 'बोलना' या 'कहना' होता है। इस 'वद्' धातु में 'घञ्' प्रत्यय जोड़ने पर इसका रूप बदल कर भाववाचक संज्ञा में 'वाद' हो जाता है। 'वद्' धातु का अर्थ 'बोलना या कहना' है तो इसमें 'घञ्' प्रत्यय जुड़ने के बाद 'वाद' बनता है, तो 'वाद' का अर्थ हुआ 'कहने की क्रिया' या 'कही हुई बात'। 'अनु' उपसर्ग यहां अनुवर्तिता के अर्थ में प्रयोग हुआ है। इस तरह 'अनुवाद' का अर्थ हुआ, 'प्राप्त कथन को पुनः कहना' या 'किसी के कहने के बाद कहना' या 'पुनः कथन'। अनुवाद के लिए छाया, टीका, उल्था, भाषान्तर जैसे शब्द भी प्रयोग किये जाते हैं। लगभग सभी भारतीय भाषाओं में अनुवाद होते रहे हैं। भारत की भाषाओं में अनुवाद के स्थान पर अलग–अलग शब्द प्रयोग किये जाते हैं, जैसे – संस्कृत, कन्नड़ और मराठी में 'भाषान्तर', कश्मीरी, सिंधी, उर्दू में 'तर्जुमा', मलयालम में 'विवर्तन' और 'तर्ज्जुमा', तमिल में 'मोशिये चर्ण्यु', तेलुगु में 'अनुवादम्' और हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत, असमिया, बांग्ला, कन्नड़, ओड़िया, गुजराती, पंजाबी, सिंधी में 'अनुवाद'।

अंग्रेजी में अनुवाद के लिए "Translation" शब्द का प्रयोग किया जाता है। अंग्रेजी का "Translation" शब्द लैटिन भाषा के "trans" एवं "lation" के मिलने से बना है। जिसका अर्थ है– 'पार ले जाना', अर्थात एक जगह से दूसरी जगह पर ले जाना। इसमें पहले को 'स्रोत–भाषा' (Source Language) और दूसरे को 'लक्ष्य–भाषा' (Target Language) कहते हैं। उदाहरण के लिए–

Source Language		Target Language
मैं भूल चुका था	**अनुवाद**	I have forgotten

अनुवाद के अर्थ और स्वरूप को लेकर देश–विदेश के कई विद्वानों ने अपने–अपने विचार प्रकट किये हैं। जिसमें से कुछ प्रमुख विचारों को यहां देखा जा सकता है–

- भोलानाथ तिवारी : 'किसी भाषा में प्राप्त सामग्री को दूसरी भाषा में भाषान्तर करना अनुवाद है, दूसरे शब्दों में– एक भाषा में व्यक्त विचारों को यथा सम्भव और सहज अभिव्यक्ति द्वारा दूसरी भाषा में व्यक्त करने का प्रयास ही अनुवाद है।'
- विनोद गोदरे : 'अनुवाद, स्रोत–भाषा में अभिव्यक्त विचार अथवा व्यक्त अथवा रचना अथवा सूचना साहित्य को यथासम्भव मूल भावना के समानान्तर बोध एवं सम्प्रेषण के धरातल पर लक्ष्य–भाषा में अभिव्यक्त करने की प्रक्रिया है।'
- देवेन्द्रनाथ शर्मा : 'विचारों को एक भाषा से दूसरी भाषा में रूपान्तरित करना अनुवाद है।'
- जॉन कनिंगटन : 'लेखक ने जो कुछ कहा है, अनुवादक को उसके अनुवाद का प्रयत्न तो करना ही है, जिस ढंग से कहा, उसके निर्वाह का भी प्रयत्न करना चाहिए।'
- कैटफोड : 'एक भाषा की पाठ्य सामग्री को दूसरी भाषा की समानार्थक पाठ्य सामग्री से प्रतिस्थापना ही अनुवाद है।'

टिप्पणी

- फॉरेस्टन : 'एक भाषा की पाठ्य सामग्री के तत्वों को दूसरी भाषा में स्थानान्तरित कर देना अनुवाद कहलाता है। यह ध्यातव्य है कि हम तत्व या कथ्य को संरचना (रूप) से हमेशा अलग नहीं कर सकते हैं।'

अनुवाद के सन्दर्भ में उपर्युक्त विचारों को देखने के बाद हम यह कह सकते हैं कि अनुवाद एक उद्देश्यपूर्ण सांस्कृतिक कर्म है। जिसमें 'मूल–भाषा' या 'स्रोत–भाषा' में निहित अर्थ, विचार और शैली को यथा सम्भव सहज और सरल रूप में लक्ष्य–भाषा की प्रकृति व शैली के अनुसार परिवर्तित किया जाता है।

5.2.2 अनुवाद के क्षेत्र

वर्तमान में वैश्विक स्तर पर अनुवाद की आवश्यकता बहुत बढ़ गयी है। इसलिए अनुवाद का क्षेत्र भी विस्तृत होता जा रहा है। आज लगभग प्रत्येक क्षेत्र में जानकारियों, सूचनाओं के आदान–प्रदान, शिक्षा और ज्ञान के प्रचार–प्रसार के लिए अनुवाद का प्रयोग हो रहा है। उनमें से कुछ क्षेत्र इस प्रकार हैं–

न्यायालय : अदालतों की भाषा प्रायः अंग्रेजी होती है। अतः उसको समझने के लिए अनुवाद का प्रयोग किया जाता है।

सरकारी कार्यालय : सरकारी कार्यालयों में अधिकतर अधिसूचना, आदेश आदि की भाषा अंग्रेजी होती है, उसे हिन्दी या अन्य किसी भारतीय भाषा में जारी करने के लिए अनुवाद का प्रयोग होता है।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी : वर्तमान समय में देश में और देश के बाहर विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में बहुत सारे शोध हो रहे हैं। उनको दुनिया भर के लोगों तक पहुंचाने के लिए अनुवाद का प्रयोग होता है।

शिक्षा : ज्ञान के सभी अनुशासनों में अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका है। अनुवाद के माध्यम से ही शिक्षा का प्रचार–प्रसार होता है।

जनसंचार : समाचार–पत्र, रेडियो, दूरदर्शन जनसंचार के लोकप्रिय माध्यम हैं। इन माध्यमों में भी अनुवाद का उपयोग होता है। आज आकाशवाणी एवं दूरदर्शन द्वारा भारत की लगभग 22 भाषाओं में समाचार प्रसारित किये जाते हैं। एक तरह की खबर को 22 भाषाओं में प्रसारित करने का कार्य अनुवाद के द्वारा ही सम्भव हो पाता है।

साहित्य : साहित्य की प्रगति और विस्तार के लिए अनुवाद का महत्व असंदिग्ध है। एक भाषा के साहित्य को दूसरी भाषा में प्रस्तुत करने के लिए अनुवाद का प्रयोग होता है। अनुवाद के द्वारा ही 'भारतीय साहित्य' या 'विश्व साहित्य' संकल्पना सम्भव हो पायी है।

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध : वैश्विक स्तर पर एक देश दूसरे देश से अपने आर्थिक, व्यावसायिक एवं कूटनीतिक सम्बन्धों को मजबूत करने के लिए दूतावासों की स्थापना एवं राजदूतों की नियुक्ति करते हैं। इन दूतावासों में सारे काम–काज अनुवाद के ही माध्यम से होते हैं। अनुवाद के द्वारा ही एक देश अपने विचारों एवं नीतियों को दूसरे देश के समक्ष उसकी भाषा में रखता है। इस तरह अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सहयोग में भी अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका है।

5.2.3 अनुवाद के स्वरूप

सन्दर्भ के आधार पर अनुवाद के स्वरूप को मुख्य रूप से दो भागों में बांटा जा सकता है–

टिप्पणी

1. भाषान्तरण सन्दर्भ (सीमित स्वरूप)
2. प्रतीकान्तरण सन्दर्भ (व्यापक स्वरूप)।

सीमित स्वरूप के अन्तर्गत एक भाषा से दूसरी भाषा के बीच 'अर्थ का अन्तरण' किया जाता है। इसके दो आयाम हैं– पाठधर्मी आयाम एवं प्रभावधर्मी आयाम।

पाठधर्मी आयाम के अनुसार होने वाले अनुवाद में स्रोत–भाषा का मूल पाठ ही मुख्य होता है। इसका प्रयोग तकनीकी एवं सूचना प्रधान तथ्यों के अनुवाद में किया जाता है। प्रभावधर्मी आयाम के अन्तर्गत होने वाले अनुवाद में स्रोत–भाषा के पाठ के उस प्रभाव को दिखाया जाता है, जो पाठकों पर पड़ता है। इस तरह का अनुवाद कविता, उपन्यास, कहानी जैसी विधाओं में किया जाता है।

अनुवाद के व्यापक स्वरूप को प्रतीकान्तरण सन्दर्भ कहते हैं। इसके बारे में छबिल कुमार मेहेर ने अपनी पुस्तक 'अनुवाद : प्रक्रिया एवं प्रयोग' में लिखा है कि "अनुवाद के व्यापक स्वरूप (प्रतीकान्तरण सन्दर्भ) में अनुवाद को दो भिन्न प्रतीक व्यवस्थाओं के मध्य होने वाला 'अर्थ' का अन्तरण माना जाता है। ये प्रतीकान्तरण तीन वर्गों में बांटे गए हैं :

1. अन्तःभाषिक अनुवाद (अन्वयान्तर)
2. अन्तरभाषिक अनुवाद (भाषान्तर)
3. अन्तरप्रतीकात्मक अनुवाद (प्रतीकान्तर)।"

यहां अन्तःभाषिक का अर्थ है एक ही भाषा के अन्तर्गत। जब एक ही भाषा के दो विधाओं के बीच अनुवाद किया जाता है, तो उसे अन्तःभाषिक अनुवाद कहते हैं। जैसे किसी भाषा में लिखी गयी कविता को उसी भाषा के गद्य की किसी विधा में किया जाए। अन्तःभाषिक अनुवाद के अन्तर्गत एक भाषा में उपलब्ध सामग्री का अनुवाद किसी अन्य भाषा में किया जा सकता है। अन्तरप्रतीकात्मक अनुवाद में किसी भाषा में उपलब्ध प्रतीक व्यवस्था से किसी अन्य भाषेतर प्रतीक व्यवस्था में अनुवाद किया जाता है। जैसे– बंगला के उपन्यासकार शरत्चन्द्र के उपन्यास 'देवदास' को इसी नाम की हिन्दी फिल्म में परिवर्तित किया जाना।

5.2.4 अनुवाद के प्रकार

अनुवाद बहुसंभावनाओं वाला कार्य है। इसके एक से अधिक पक्ष और आयाम होते हैं। इसीलिए अनुवाद के प्रकारों को लेकर विद्वानों ने भिन्न–भिन्न विचार प्रकट किए हैं। भिन्न–भिन्न आधारों पर अनुवाद के प्रकारों का उल्लेख किया जाता है–

विषयवस्तु के आधार पर : विषयवस्तु के आधार पर अनुवाद के दो प्रकार हैं–साहित्यिक अनुवाद और साहित्येतर अनुवाद। साहित्यिक अनुवाद के अंतर्गत साहित्य की विभिन्न विधाओं, जैसे– कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी तथा अन्य गद्य विधाओं की रचनाओं का अनुवाद होता है। साहित्येतर अनुवाद में साहित्य से भिन्न, जैसे–विज्ञान, तकनीकी,

वाणिज्य, मानविकी, समाजविज्ञान, जनसंचार, विधि एवं प्रशासनिक क्षेत्रों का अनुवाद होता है।

टिप्पणी

प्रकृति के आधार पर : प्रकृति के आधार पर अनुवाद के प्रकार इस प्रकार हैं– शब्दानुसार, छायानुवाद, भावानुवाद, सारानुवाद, टीकानुवाद, वार्तानुवाद।

अनुवाद के प्रकारों के निर्धारण के लिए भोलानाथ तिवारी ने चार आधार माने हैं–

गद्य–पद्य पर आधारित : इसके अंतर्गत गद्य का गद्य में और पद्य का पद्य में अनुवाद किया जाता है। कभी–कभी पद्य का गद्य में भी अनुवाद किया जाता है, जैसे– कालिदास के 'मेघदूतम्' का नागार्जुन ने गद्यानुवाद किया है।

साहित्य विधा पर आधारित : इसके अंतर्गत विभिन्न साहित्यिक विधाओं, कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी, निबन्ध आदि का दूसरी भाषाओं में अनुवाद किया जाता है।

विषय आधारित अनुवाद : इसमें विभिन्न विषयों के अनुवाद किये जाते हैं। इसके लिए उस विषय की प्रकृति का ध्यान रखा जाता है, जैसे– न्याय एवं विधि, वैज्ञानिक एवं तकनीकी, धार्मिक एवं पौराणिक, प्रशासनिक अनुवाद, मानविकी एवं समाजशास्त्र, जनसंचार आदि विषयों का अनुवाद करते समय सम्बन्धित विषय की शब्दावली का प्रयोग किया जाता है।

अन्य प्रकृति पर आधारित अनुवाद : इसके दो प्रमुख उपभेद हैं– मूलनिष्ठ और मूलमुक्त। मूलनिष्ठ अनुवाद में मूल कृति के कथ्य, शिल्प और विचारों को लगभग वैसे–वैसे रखने की कोशिश की जाती है, तो वहीं मूलमुक्त अनुवाद में अनुवादक को इस बात की स्वतंत्रता रहती है कि वह मूल कृति के भाव को पकड़ कर उससे भिन्न शैली में भिन्न ढंग से प्रस्तुत कर सकता है।

इन सभी विचारों में निहित भावों को आधार बनाते हुए छबिल कुमार मेहेर ने अपनी पुस्तक 'अनुवाद : प्रकृति एवं प्रयोग' में अनुवाद के आठ प्रकार बताए हैं, जो संक्षेप में इस प्रकार से हैं–

शब्दानुवाद : स्रोत–भाषा के शब्द एवं क्रम को उसी प्रकार लक्ष्य–भाषा में रूपान्तरित करना शब्दानुवाद कहलाता है।

भावानुवाद : इसमें मूल–भाषा में निहित भावों, विचारों एवं सन्देशों को लक्ष्य–भाषा में रूपान्तरित किया जाता है। भावानुवाद का प्रयोग मुख्य रूप से साहित्यिक कृतियों में किया जाता है।

छायानुवाद : इस तरह के अनुवाद में मूल पाठ की अर्थ–छाया को ग्रहण कर अनुवाद किया जाता है। छायानुवाद में शब्दों, भावों तथा संकल्पनाओं के प्रभाव को लक्ष्य–भाषा में बदला जाता है।

सारानुवाद : सारानुवाद में किसी विस्तार वाली सामग्री, लम्बे आख्यान आदि के भावों को संक्षेप में रूपान्तरित किया जाता है। इसमें पंक्ति दर पंक्ति अनुवाद न कर पूरे लक्ष्य–भाषा के सारांश को प्रस्तुत किया जाता है।

व्याख्यानुवाद : इसे भाष्यानुवाद भी कहा जा सकता है। इस तरह के अनुवाद के साथ मूल–पाठ के अनुवाद के साथ ही उसकी व्याख्या भी की जाती है।

टिप्पणी

आशु अनुवाद : आशु अनुवाद को वार्तानुवाद भी कहते हैं। अलग–अलग भाषाओं, भावों एवं विचारों का तात्कालिक अनुवाद ही आशु अनुवाद कहा जाता है। वर्तमान में इस तरह के अनुवाद का अधिक महत्व है।

आदर्श अनुवाद : इसे सटीक अनुवाद भी कहते हैं। इसमें स्रोत–भाषा की मूल–सामग्री का अनुवाद उसके आशय, अभिव्यक्ति एवं शिल्प को सुरक्षित रखते हुए सटीक ढंग से लक्ष्य–भाषा में किया जाता है। इसमें अनुवादक को अपनी ओर से कुछ नहीं जोड़ना होता है।

रूपान्तरण : एक भाषा में लिखी गई किसी साहित्यिक विधा का रूपान्तरण किसी अन्य साहित्यिक विधा में किया जाता है। वर्तमान में यह बहुत अधिक लोकप्रिय हो रहा है। कविता, कहानियों का नाट्य मंचन तथा किसी कहानी या उपन्यास का फिल्म–धारावाहिक में रूपान्तरण इसके उदाहरण हैं।

5.2.5 अनुवाद के गुण

अनुवाद एक जटिल प्रक्रिया है। क्योंकि एक भाषा के पाठ में निहित अर्थ एवं विचार को दूसरी भाषा के पाठ में प्रामाणिक रूप से व्यक्त करना होता है। चूंकि भाषाओं की प्रकृति, संरचना, संस्कृति आदि में भिन्नता होती है, इसलिए एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद के लिए अनुवादक को दोनों भाषाओं का ज्ञाता, विशेषज्ञ होना चाहिए। साथ ही उसे दोनों भाषाओं की प्रकृति, संरचना, व्याकरण, शब्द संपदा, संस्कृति से पूर्ण परिचित होना चाहिए। इसी तरह अच्छे अनुवाद से भी कुछ अपेक्षाएं होती हैं, उन्हीं को अनुवाद के गुण भी कहते हैं। एक अच्छे अनुवाद के निम्नलिखित गुण होते हैं–

- अनुवाद में स्पष्टता एवं बोधगम्यता होनी चाहिए।
- अनुवाद को मूल पाठ के भाव के समकक्ष होना चाहिए।
- अनुवाद में मूल कृति सा प्रवाह होना चाहिए।
- किया गया अनुवाद न लग कर मूल कृति सा ही लगना चाहिए।
- अनुवाद में स्रोत पाठ की शैली की रक्षा होनी चाहिए।
- अनुवाद में मूल–पाठ की ही तरह तारतम्यता होनी चाहिए।
- अनुवाद में इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि मूल–पाठ में जो बात जिस क्रम में कही गयी हो अनुवाद में भी उस क्रमबद्धता का पालन करना चाहिए।

5.2.6 अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद

अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करते समय सबसे पहले मूल पाठ के भाव को समझना चाहिए। तदुपरान्त कठिन शब्दावलियों की सूची तैयार कर सन्दर्भानुसार लक्ष्य भाषा में उसके पर्याय चुनना चाहिए। उल्लेखनीय बात यह है कि चुने गये पर्याय विषय के सन्दर्भानुसार हो, जिससे कि मूल पाठ के अर्थ–सन्दर्भ की रक्षा हो सके। अनुवाद में मूल–पाठ के विचार को

यथा संभव लक्ष्य–भाषा में प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाना चाहिए। अनुवाद की प्रकृति मूल–पाठ के विषय से संबंधित होती है। साहित्य, कार्यालय की भाषा और विधि से संबंधित विषयों के अनुवाद के लिए उन विषयों की ही शब्दावली का प्रयोग किया जाता है।

टिप्पणी

उदाहरण के लिए भिन्न–भिन्न प्रकृति के अनुवाद द्रष्टव्य हैं–

साहित्यानुवाद (पद्य)

No, all the things once left unuttered
Our duty bids must now be said,
Once falsehood is a loss to us
And only truth can be accepted;
Who zealously conceals the past
Will hardly get on the future.

(Alexander Tvardovsky from 'By Right of Memory' poem written in 1968 and published in1986)

हिन्दी अनुवाद

नहीं, वो सबकुछ जो रह गया अनकहा
फर्ज का तकाजा है हम आज सब कहें
हर झूठ से हम कितना कुछ खोते हैं
इसलिए सच, केवल सच हमें मान्य है
जो जबर्दस्ती अतीत पर पर्दा डालते हैं
उनके हाथ भविष्य एकदम सुरक्षित नहीं।

(अलेक्जेंडर वारडेस्की, 'स्मृति के दायरे से' 1968 में लिखी और 1986 में प्रकाशित कविता से उद्धृत)

साहित्यानुवाद (गद्य)

Only the real and the living can survive here-conventional morality withers beneath the burning contempt of the people. Civilisation-culture- decency: these polite myths lose all meaning. The beast rules untamed and unashamed and calls to the beast that is an everyman. It does not matter how deeply hidden the latter may be. You have buried him beneath mounds of inhibition and convention to hibernate. Rampant and alert he will come forth. Only if you are human through and through can you hope to survive the ordeal and such as come through are the chosen of the Lord.

हिन्दी अनुवाद

यहां खरा कंचन ही टिक सकता है, क्योंकि उसे जरूरत ही नहीं कि वह कहे कि मैं पीतल नहीं हूं। यहां कंचन की मांग नहीं है, पीतल से घबराहट नहीं है। इसमें भीतर पीतल रह

कर ऊपर कंचन दिखने वाला लोभ यहां क्षण भर नहीं टिकता है। बल्कि यहां पीतल का मूल्य है। इसीलिए सोने के धैर्य की यहां परीक्षा है। सच्चे कंचन की पक्की परख यहीं होगी। यह यहां की कसौटी है। मैं मानती हूं कि जो इस कसौटी पर खरा हो सकता है, वही खरा है। और वही प्रभु का प्यार पा सकता है।

(जैनेन्द्र के उपन्यास 'त्यागपत्र' का अज्ञेय द्वारा किये गये अनुवाद का एक अंश।)

टिप्पणी

कार्यालयी अनुवाद

'It is unfortunate that inspite of our clarification that the matter regarding applicability of group incentive scheme to the non-essential indirect classified staff is actively under consideration of government, the newly registered office staff association has served fourteen days strike on 02.08.2014 without following the provision of code of discipline.'

हिन्दी अनुवाद

'यह स्पष्ट किया जा चुका है कि अप्रत्यक्ष वर्गीकृत कर्मचारियों पर भी प्रोत्साहन योजना लागू करने के प्रकरण द्वारा सक्रियता से विचार किया जा रहा है। यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमारे इस स्पष्टीकरण के बावजूद हाल ही में पंजीकृत ऑफिस स्टॉफ एसोसियशन के 'अनुशासन संहिता' के प्रावधानों को अनदेखा करते हुए दिनांक 02.08.2014 को 14 दिन की हड़ताल का नोटिस दिया है।'

विधिक अनुवाद

Appeals - any person aggrieved by-

(a) an order of the registering authority rejecting his application for registration or requiring him to furnish any security or to comply with any term or condition (not being a prescribed term or condition) specified in the certificate issued to him or suspending or cancelling or refusing to renew the certificate issued to him; or

(b) an order of the competent authority rejecting his application for a permit or requiring him to comply with any terms or conditions (not being a prescribed term or condition) specified in the permit issued to him, or suspending or cancelling or refusing to extend the period of the validity of the permit issued to him; may prefer an appeal against such order to the central government within such period as may be prescribed.

हिन्दी अनुवाद

अपीलें – कोई ऐसा व्यक्ति जो

(अ) रजिस्ट्रीकरण के लिए उसके आवेदन को अस्वीकृत करने वाले या कोई प्रतिभूति देने के लिए उससे अपेक्षा करने वाले या उसको जारी किए गए प्रमाणपत्र में विनिर्दिष्ट किसी निबंधन या शर्त का (जो विहित निबंधन या शर्त नहीं है) अनुपालन करने की अपेक्षा करने वाले अथवा उसको जारी किए गए प्रमाणपत्र को निलंबित या रद्द करने वाले या उसका नवीकरण करने से इन्कार करने वाले रजिस्ट्रीकर्ता प्राधिकारी के किसी आदेश से; या

(ख) किसी अनुज्ञापत्र के लिए उसके आवेदन को अस्वीकृत करने वाले या उसको जारी किए गए अनुज्ञापत्र में विनिर्दिष्ट किन्हीं निबन्धनों या शर्तों का (जो विहित निबंधन या शर्तें नहीं हैं) अनुपालन करने की अपेक्षा करने वाले अथवा उसको जारी किए गए अनुज्ञापत्र को निलंबित या रद्द करने वाले या उसकी विधिमान्यता की अवधि का विस्तार करने से इन्कार करने वाले सक्षम अधिकारी के किसी आदेश से; व्यथित है, वह ऐसे आदेश के विरुद्ध अपील ऐसी अवधि के भीतर, जो विहित की जाए, केन्द्रीय सरकार को करेगा।

टिप्पणी

सामान्य अनुवाद

Navodaya Vidyalaya

The Government of India launched in 1985-86 a scheme to establish Navodaya Vidyalayas on an overage of one in each district to provide good quality modern education to the talented children predominantly from rural areas. The Admission to Navodaya Vidyalaya is at the level of class VI based on admission test conducted by NCERT. The medium of test is the mother tongue or regional language of the children. The Vidyalayas are fully residential and co-education to which admission to the children from urban areas is generally restricted to 25 per cent of the seats. Efforts are made to ensure that at least one-third of the students in each Vidyalaya are girls. Reservation of seats in favour of children belonging to SC and ST is provided in proportion of their population in the concern district provided that in no district such reservation is less than that of the national level. The Vidyalayas provide education in the stream of Humanitics, Commerce, Science and Vocational up to +2 level and are affiliated to CBSE. There are at present 389 sanctioned Vidyalayas in the country operating in 30 states/UTs.

हिन्दी अनुवाद

नवोदय विद्यालय

भारत सरकार ने 1985–86 में प्रत्येक जिले में औसतन एक नवोदय विद्यालय स्थापित करने का कार्यक्रम शुरू किया। इसका उद्देश्य मुख्य रूप से ग्रामीण क्षेत्रों के प्रतिभाशाली बच्चों को अच्छे स्तर की आधुनिक शिक्षा उपलब्ध कराना था। नवोदय विद्यालय में दाखिला राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद की प्रवेश परीक्षा के आधार पर छठी कक्षा में होता है। प्रवेश परीक्षा बच्चों की मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा में होगी। नवोदय विद्यालय पूरी तरह से आवासीय विद्यालय है और इसमें सह–शिक्षा की व्यवस्था है। आम तौर पर इसमें शहरी क्षेत्रों के विद्यार्थियों का दाखिला अधिक से अधिक 25 प्रतिशत तक सीमित होता है। प्रत्येक नवोदय विद्यालय में कम से कम एक तिहाई लड़कियों की भर्ती सुनिश्चित करने के प्रयास भी किए जाते हैं। इन विद्यालयों में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों को सम्बन्धित जिले में उनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण की व्यवस्था है। लेकिन आरक्षण राष्ट्रीय औसत से कम नहीं हो सकता। ये

विद्यालय कला, वाणिज्य, विज्ञान और व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में +2 स्तर तक शिक्षा प्रदान करते हैं और केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से सम्बद्ध हैं। इस समय देश के 30 राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों में 389 विद्यालय चल रहे हैं।

टिप्पणी

(अनुवाद के सभी उदाहरण छबिल कुमार मेहेर की पुस्तक 'अनुवाद : प्रक्रिया एवं प्रयोग', अनन्य प्रकाशन, दिल्ली से साभार)

5.3 पारिभाषिक शब्दावली : सामान्य परिचय

प्रयोजनमूलक हिन्दी के तीन प्रमुख तत्व हैं। पहला–पारिभाषिक शब्दावली, दूसरा–अनुवाद और तीसरा–भाषिक संरचना। भाषा–बोध और सम्प्रेषण की प्रक्रिया में इन तीनों तत्वों का विशेष महत्व है। किन्तु पारिभाषिक शब्दावली की उपयोगिता एक समान भाषा–व्यवस्था के लिए अपरिहार्य है। इसीलिए भारत में स्वतंत्रता के बाद से ही भाषा वैज्ञानिकों, लेखकों ने संस्थानिक स्तर पर पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण के लिए कोशिश करना आरम्भ कर दिया था। स्वतंत्रता के पूर्व भी इस विषय पर विचार हुए थे। पारिभाषिक शब्दावली की आवश्यकता के पीछे विभिन्न भाषाओं में होने वाले वैज्ञानिक आविष्कार, दार्शनिक अवधारणों और आधुनिक संकल्पनाओं आदि को अपनी भाषा में लाना था। जिसके लिए उपयुक्त शब्दावली की आवश्यकता महसूस की जा रही थी।

धीरे–धीरे यह धारणा स्थिर हो गई कि पारिभाषिक शब्दावली के बिना कोई भाषा गहन, सूक्ष्म और विशिष्ट वैज्ञानिक, दार्शनिक, सामाजिक व सांस्कृतिक चिंतन के लिए समर्थ नहीं हो सकती। इसलिए यदि किसी भी भाषा को अपने समय की वैचारिक और वैज्ञानिक प्रक्रिया को चिंतन के स्तर पर अभिव्यक्त करना है तो उसे अपने पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण करना होगा। यहां यह ध्यान रहे कि पारिभाषिक शब्दावली कोई स्थिर या ठहरी हुई प्रक्रिया न होकर सतत गतिशील, प्रवाहमान और विकसित होती हुई प्रक्रिया है। चूंकि ज्ञान और चिंतन की प्रक्रिया समय के साथ बदलती–बढ़ती रहती है, इसलिए पूर्ण अभिव्यक्ति की दृष्टि से भाषा की पारिभाषिक शब्दावली में विकास और वृद्धि होते रहना चाहिए। किसी भी भाषा में जब पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण बाधित हो जाता है, तब वह भाषा भी बहुत दिनों तक अपनी प्रासंगिकता को बनाए नहीं रख सकती।

अपनी प्रगति जांचिए

1. संदर्भ के आधार पर अनुवाद के स्वरूप को कितने भागों में बांटा जा सकता है?
2. आशु अनुवाद को और क्या कहा जाता है?
3. सही–गलत बताइए–
   (क) अनुवाद में स्पष्टता एवं बोधगम्यता होनी चाहिए।
   (ख) अनुवाद को मूल पाठ के भाव के समकक्ष नहीं होना चाहिए।

ऐतिहासिक दृष्टि से विचार किया जाए तो भारत में पारिभाषिक शब्दावली का इतिहास बहुत पुराना है। प्राचीन काल से ही भारत की पुरानी भाषाओं, संगीत, चिकित्सा, ज्योतिष, कृषि, मौसम शास्त्र, कर्मकांड, युद्धकला आदि विषयों के अपने विशिष्ट पारिभाषिक शब्द थे। हिन्दी साहित्य के इतिहास के विशिष्ट काल–खंड जैसे वीरगाथा काल, भक्तिकाल, रीतिकाल के साहित्य में भी पारिभाषिक शब्दों की एक पूरी व्यवस्था विद्यमान है।

हिन्दी भाषा में पारिभाषिक शब्दावली की शुरुआती स्थिति के बारे में भोलानाथ तिवारी ने लिखा है कि ''हिन्दी के द्विभाषिक पुराने कोशों (जैसे, 'खलिकबारी', 1675 की मिर्जा खां की 'लुग़ातए हिन्दी', औरंगजेब के समकालीन हांसवी की 'गुरायबुल लुग़ात', 1688 ई. की तजल्ली द्वारा संपादित 'अल्लाखुदाई' अथवा यूरोपीय विद्वानों द्वारा अठारहवीं सदी में बनाए गए बहुत से कोश, जिनमें 1704 ई. का तुरोनेसिस का, 1743 ई. का केटेलर का, तथा बाद

में फ़र्ग्युसन, किर्क पैट्रिक, हैरिस, गिलक्राइस्ट आदि के, मुख्य हैं) में पारिभाषिक शब्द काफ़ी हैं, किन्तु लगता है कि इनके अलग अस्तित्व के प्रति लोग विशेष सजग नहीं थे। हिन्दी ही क्या, सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं में पारिभाषिक शब्दों के प्रति सजगता 1800 ई. के आस–पास शुरू हुई। 1797 ई. में कलकत्ता से प्रकाशित 'मुस्लिम कानून और लगान के पारिभाषिक शब्दों का कोश' अब तक ज्ञात इस प्रकार का प्रथम कोश है। उसके बाद 1811 ई. में रोबक ने नौविज्ञान के पारिभाषिक शब्दों का तथा 1822 ई. में ब्राउन ने व्यावसायिक शब्दों का कोश प्रकाशित किया।''

टिप्पणी

इसके बाद भारतीय विद्वानों द्वारा बनाये गये कोशों में 1894 ई. में प्रकाशित 'श्रीधर भाषा कोश' तथा 1914 ई. में प्रकाशित 'हिन्दी शब्दार्थ पारिजात' का विशेष महत्व है। बाद के दिनों में श्याम सुन्दर दास, रामचन्द्र शुक्ल और रामचन्द्र वर्मा के प्रयासों से नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी से 1929 ई. में प्रकाशित 'हिन्दी शब्दसागर' जो आज भी इस दिशा में उल्लेखनीय माना जाता है। अद्यतन जानकारी यह है कि करूणापति त्रिपाठी के संयोजकत्व में 'हिन्दी शब्दसागर' का जो नया संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण प्रकाशित हुआ उसमें सम्मिलित शब्दों की संख्या लगभग दो लाख तक पहुंच गई है।

5.3.1 पारिभाषिक शब्दावली : अर्थ एवं परिभाषा

पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग ज्ञान के किसी भी क्षेत्र के लिए विशिष्ट किन्तु निश्चित अर्थ में किया जा सकता है। पारिभाषिक शब्द परिभाषित होते हैं। पारिभाषिक शब्दावली को समझने से पहले हमें शब्द के बारे में जान लेना चाहिए।

शब्द ध्वनियों के योग से बना सार्थक वर्ण–समुदाय होता है। या 'एक या एक से अधिक वर्णों से मिल कर बनी स्वतंत्र सार्थक ध्वनि को शब्द कहा जाता है।' प्रयोग विषय अथवा प्रयोग क्षेत्र के आधार पर शब्द के तीन रूप प्रचलित हैं–

1. सामान्य शब्द,
2. अर्द्धपारिभाषिक शब्द
3. पारिभाषिक शब्द।

उन शब्दों को सामान्य शब्द कहा जाता है जो सामान्य बोलचाल में प्रयोग किये जाते हैं। इनका सम्बन्ध हमारी रोजमर्रा की जिन्दगी से होता है। जैसे, गरम, ठण्डा, आना, जाना, लड़का, नदी, घर, पानी, कलम आदि। इन्हें अपारिभाषिक शब्द भी कहा जाता है। अर्द्धपारिभाषिक शब्द से अभिप्राय उन शब्दों से है जिनका प्रयोग सामान्य और पारिभाषिक दोनों अर्थों में होता है। स्थिति, विषय–वस्तु और सन्दर्भ के आधार पर इनका प्रयोग सामान्य और पारिभाषिक शब्द के अर्थ में होता है। जैसे– रस, क्रिया, माया, सृजन, विपदा आदि शब्दों का प्रयोग सामान्य और पारिभाषिक दोनों अर्थों में किया जाता है। इसी तरह उन शब्दों को पारिभाषिक शब्द कहा जाता है जिनका प्रयोग विज्ञान के विभिन्न अनुशासनों और शास्त्रों, दर्शन–चिंतन आदि में किया जाता है। पारिभाषिक शब्द को 'तकनीकी' शब्द और पारिभाषिक शब्दावली को 'टेक्निकल टर्मिनालॉजी' कहा जाता है। प्रख्यात भाषा वैज्ञानिक डॉ. रघुवीर ने 'कम्प्रेहेन्सिव डिक्शनरी ऑफ इंग्लिश हिन्दी' में इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि 'जिन शब्दों की सीमा बांध दी जाती है वे पारिभाषिक शब्द हो जाते हैं और जिनकी

सीमा नहीं बांधी जाती वे साधारण शब्द होते हैं।' सामान्य शब्दों में कहा जाए तो 'सम्बद्ध विज्ञान या शास्त्र के प्रसंग में जिसकी परिभाषा दी जा सके उसे पारिभाषिक शब्द कहा जाता है', जैसे, ग्रेविटेशन, प्रतिजैविक, परजीवी आदि।

टिप्पणी

पारिभाषिक शब्द को अंग्रेजी में 'टेक्निकल टर्म' (Technical Term) कहा जाता है। सामान्य अर्थ में विभिन्न शास्त्रों और वैज्ञानिक विषयों में एक सुनिश्चित अर्थ अभिव्यक्त करने वाले और उसी में संदर्भ परिभाषित किये जा सकने वाले शब्द 'पारिभाषिक शब्द' कहलाते हैं। दूसरे शब्दों में ज्ञान की किसी विशेष शाखा से सम्बन्ध रखनेवाली विशिष्ट शब्दावली 'पारिभाषिक शब्दावली' कहलाती है। शब्दों की इसी निश्चित अथवा विशिष्ट प्रयुक्ति को डॉ. रघुवीर 'एक निश्चित सीमा में बांध देना' स्वीकारते हैं। उनके अनुसार "पारिभाषिक शब्द उसको कहते हैं जिसकी परिभाषा की गई हो, पारिभाषिक शब्द का अर्थ है जिसकी सीमाएं बांध दी गई हों। जिन शब्दों की सीमा बांध दी जाती हैं वे पारिभाषिक शब्द हो जाते हैं और जिनकी सीमा नहीं बांधी जाती वे साधारण शब्द होते हैं।" डॉ. भोलानाथ तिवारी पारिभाषिक शब्द की परिभाषा देते हुए लिखते हैं– "पारिभाषिक शब्द ऐसे शब्दों को कहते हैं जो सामान्य व्यवहार की भाषा के शब्द न होकर ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों (जैसे रसायन, भौतिकी, वनस्पतिविज्ञान, प्राणिविज्ञान, समाजशास्त्र, दर्शन, अलंकारशास्त्र, गणित, मनोविज्ञान, तर्कशास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र आदि–इत्यादि) के होते हैं तथा विशिष्ट ज्ञान, विज्ञान या शास्त्र में जिनकी अर्थसीमा परिभाषित या निश्चित रहती है।" अर्थात् अर्थ और प्रयोग की दृष्टि से अनिवार्यतः पारिभाषिक होने के कारण ही ये शब्द पारिभाषिक शब्द स्वीकारे जाते हैं।

पारिभाषिक शब्दावली की महत्ता ज्ञान के क्षेत्र में बढ़ती ही जा रही है। वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास के साथ–साथ दैनिक जीवन में नई–नई वस्तुएं, विचार, भावनाएं तथा धारणाओं का तेजी से प्रयोग हो रहा है। जिसको पारम्परिक भाषा और उसकी शब्दावली में व्यक्त करना कठिन होता जाता है। इसलिए ज्ञान–विशेष के किसी भी क्षेत्र में हो रहे विकास और परिवर्तन के कारण नई शब्दावली का निर्माण आवश्यक हो जाता है।

प्रख्यात भाषाविद् भोलानाथ तिवारी विचार विनिमय में स्पष्ट और अपेक्षित अभिव्यक्ति के लिए पारिभाषिक शब्दों की महत्ता को असंदिग्ध मानते हुए कहते हैं कि 'वास्तव में सूक्ष्म बौद्धिक चिन्तन एवं तकनीकी ज्ञान के विकास के साथ तकनीकी भाषा का विस्तार होता है। जिस भाषा में जितने अधिक पारिभाषिक शब्दों का रचाव–जमाव होगा वह भाषा आज उतनी ही सम्पन्न, समृद्ध कहलाएगी तथा बौद्धिक चिन्तन तथा समकालीन जीवन जगत के लिए उतनी ही अधिक उपयुक्त कही जाएगी। किसी भी भाषा में समुचित पारिभाषिक शब्दावली की विद्यमानता उस भाषाभाषी वर्ग के बौद्धिक उत्कर्ष एवं सम्पन्नता की परिचायक होती है और उसका अभाव बौद्धिक दरिद्रता का। सचमुच समर्थ राष्ट्र की भाषा में पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण तथा विकास की प्रक्रिया निरन्तर जारी रहनी चाहिए।' अतः यह स्पष्ट है कि पारिभाषिक शब्दावली के बिना कोई भाषा स्वयं को आधुनिक प्रगति के अनुकूल तथा समृद्ध नहीं बना सकती।

5.3.2 पारिभाषिक शब्दावली की विशेषताएं

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर पारिभाषिक शब्दावली की विशेषताओं का निर्धारण कर सकते हैं, जो निम्नलिखित प्रकार से हैं–

टिप्पणी

- पारिभाषिक शब्द का अर्थ स्पष्ट और निश्चित होता है।
- एक विषय में उनका एक ही अर्थ होता है। एक विषय में एक धारणा या वस्तु के लिए एक ही पारिभाषिक शब्द होता है।
- पारिभाषिक शब्द छोटा होना चाहिए जिससे कि उसके प्रयोग में सुविधा हो।
- पारिभाषिक शब्द मूल या रूढ़ होना चाहिये, व्याख्यात्मक नहीं। जैसे 'अहिंसा' पारिभाषिक शब्द है, इसके स्थान पर 'हिंसा नहीं करना' नहीं हो सकता क्योंकि यह पारिभाषिक शब्द 'अहिंसा' की व्याख्या है।
- एक ही विषय से सम्बद्ध पारिभाषिक शब्दों के रूप की दृष्टि से सादृश्य हो तो संगत लगता है। जैसे विज्ञान के विषय में 'ऑक्सीडेशन', 'रिडक्शन', 'हायड्रोजिनेशन' आदि शब्दों के अपने विशिष्ट अर्थ तो हैं ही साथ ही इनके रूपों में एक सादृश्य भी है।
- इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पारिभाषिक शब्दावली की निम्नलिखित विशेषताएं हैं– सुनिश्चितता, स्पष्टता, विषय सम्बद्धता, एकार्थकता और एकरूपता।

5.3.3 पारिभाषिक शब्दों के प्रकार

प्रयोग की दृष्टि से पारिभाषिक शब्दों को दो वर्गों में बांटा जा सकता है :

1. अपूर्ण पारिभाषिक शब्द और
2. पूर्ण पारिभाषिक शब्द।

अपूर्ण पारिभाषिक शब्द ऐसे शब्द हैं जो विषय विशेष से सम्बद्ध होने पर तो विशेष अर्थ देते हैं, परन्तु उस विशेष विषय क्षेत्र से बाहर जब उनका प्रयोग किया जाता है तो वे अपने पारिभाषिक अर्थ को छोड़ कर सामान्य अर्थ प्रकट करने लगते हैं। जैसे 'माया', 'हंस' आदि शब्द। 'माया' शब्द का प्रयोग यदि आध्यात्मिक जगत में किया जाए तो उसका अर्थ होगा 'भ्रम, अर्थात जो नहीं है उसे दिखाना'। इसी शब्द को अध्यात्म से बाहर प्रयोग करने पर यह किसी बालिका का नाम हो जाएगा। इसी प्रकार 'हंस' शब्द है, संत–काव्य में 'हंस' शब्द का अर्थ आत्मा है, किन्तु इससे बाहर 'हंस' एक पक्षी का नाम है। पूर्ण पारिभाषिक शब्द ऐसे शब्द हैं जिनका पारिभाषिक शब्द के रूप में ही प्रयोग होता है, सामान्य रूप में नहीं, जैसे 'पूंजी', 'संज्ञा', 'क्रिया विशेषण', 'समाजवाद' आदि।

5.3.4 चुने हुए 150 पारिभाषिक शब्द

हिन्दी	अंग्रेजी
1. पृष्ठांकन	Endorsement
2. ज्ञापन	Memorandum
3. परिपत्र	Circular

टिप्पणी

4.	राजपत्र	Gazzette
5.	अधिसूचना	Notification
6.	अनुस्मारक	Reminder
7.	रुपांतरण	Transformation
8.	लिप्यंतरण	Transliteration
9.	स्थानांतरण	Transfer
10.	अधिकारी	Officer
11.	अधीनस्थ	Subordinate
12.	स्वाधीन	Independent
13.	आवेदन	Application
14.	पुनरावेदन	Appeal
15.	प्रतिवेदन	Reporting
16.	आवेदक	Applicant
17.	निर्देश	Guide
18.	अनुदेश	Instruction
19.	अध्यादेश	Ordinance
20.	अभिकर्ता	Agent
21.	ऋणकर्ता	Loanee
22.	उधारकर्ता	Borrower
23.	जमाकर्ता	Depositor
24.	अनुमोदनकर्ता	Approved by
25.	प्रस्तुतकर्ता	Presented by
26.	अधिकरण	Agency
27.	प्राधिकरण	Authority/Authorisation
28.	कथन	Statement
29.	प्राक्कथन	Foreword
30.	आकलन	Assessement
31.	लेखाकार	Accountant
32.	नकार	Refusal
33.	प्रक्रिया	Process
34.	ग्रहण	Taking

टिप्पणी

35.	अधिग्रहण	Acquisition
36.	तथ्य	Fact
37.	वस्तुतः	De facto
38.	तुलनात्मक	Comparative
39.	आतिथ्य	Hospitality
40.	नियत तिथि	Due Date
41.	तिथिवार	Datewise
42.	तदर्थ	Ad hoe
43.	दान	Donation
44.	उपदान	Subsidy
45.	अंशदान	Contribution
46.	अनुदान	Grant
47.	द्विभाषिक	Bilingual
48.	द्विपक्षीय	Bilateral/Bipartite
49.	करारनामा	Agreement
50.	हलफनामा	Affidavit
51.	वसीयतनामा	Will
52.	निवेश	Investment
53.	पूंजी निवेश	Capital investment
54.	नियम	Rule
55.	प्रपत्र	Form
56.	अधिकार पत्र	Authority letter
57.	मांग पत्र	Indent
58.	अनुज्ञा पत्र	Licence
59.	समायोजन	Adjustment
60.	सेवायोजन	Employment
61.	नियोजन	Planning
62.	परियोजना	Project
63.	वाद	Suit/Plaint
64.	प्रतिवाद	Respondent
65.	विवाद	Controversy

टिप्पणी

66. विधिक Legal
67. कार्यविधि Procedure
68. विधिवत Judicialy
69. वैधानिक Statutory
70. संशोधन Amendment/Modification
71. निरीक्षण Inspection
72. आरक्षण Reservation
73. सेवा–निवृत्ति Retirement
74. हस्तलिखित Manuscript
75. ज्ञान Knowledge

अंग्रेजी **हिन्दी**

76. Abandonment परित्याग
77. Ability योग्यता
78. Abnormal असामान्य
79. Abolition उन्मूलन
80. Abstract सार
81. Absurdity बेतुका
82. Academy अकादमी
83. Acceptance स्वीकृति
84. Accommodation आवास
85. Background पृष्ठभूमि
86. Bail जमानत
87. Banking बैंकिंग
88. Bace आधार
89. Basic मूल
90. Belief विश्वास
91. Cabinet मंत्रिमंडल
92. Candidate उम्मीदवार
93. Cantonment छावनी
94. Casual अनियत
95. Casual leave आकस्मिक छुट्टी

टिप्पणी

96. Censure निंदा
97. Citizen नागरिक
98. Dais मंच
99. Data आंकड़ा
100. Deal सौदा
101. Debt ऋण
102. Decision निर्णय
103. Decorum शिष्टता
104. Earned अर्जित
105. Economic आर्थिक
106. Editorial संपादकीय
107. Efficiency दक्षता
108. Election निर्वाचन
109. Embezzlement गबन
110. Enclosure अनुलग्नक
111. Epidemic महामारी
112. Excise आबकारी
113. Felicitate बधाई देना
114. Fellowship अध्येतावृत्ति
115. Finance वित्त
116. Forgery जालसाजी
117. Formality औपचारिक
118. Fundamental मूलभूत
119. Gazette राजपत्र
120. Gazettted officer राजपत्रित अधिकारी
121. Genuine प्रामाणिक
122. Governance शासन
123. Graduate स्नातक
124. Guarantee प्रत्याभूति
125. Guardian अभिभावक
126. Handbill इश्तहार

टिप्पणी

127. Handbook	पुस्तिका
128. Hand-over	सौंपना
129. Hearing	सुनवाई
130. Hereditary	आनुवंशिक
131. Honorary	मानद
132. Hostile	शत्रुतापूर्ण
133. Identity	पहचान
134. Illiteracy	निरक्षरता
135. Impact	प्रभाव
136. Immoral	अनैतिक
137. Import	आयात
138. Increment	वेतनवृद्धि
139. Infection	संक्रमण
140. Inquiry	पूछताछ
141. Kidnapping	अपहरण
142. Key-board	कुंजी–पटल
143. Keen	उत्साही
144. Knowingly	जानबूझकर
145. Mail	डाक
146. Margin	हाशिया
147. Nationalism	राष्ट्रीयता
148. National symbol	राष्ट्रीय प्रतीक
149. Occupation	व्यवसाय
150. Recovery	वसूली

अपनी प्रगति जांचिए

4. प्रयोग की दृष्टि से पारिभाषिक शब्दों को कितने वर्गों में बांटा जा सकता है?
5. प्रयोजनमूलक हिन्दी के कितने प्रमुख तत्व हैं?
6. सही–गलत बताइए–
   (क) एक या एक से अधिक वर्णों से मिलकर बनी स्वतंत्र सार्थक ध्वनि को शब्द कहा जाता है।
   (ख) प्रयोग क्षेत्र के आधार पर शब्द के चार रूप प्रचलित हैं।

5.4 सारांश

अनुवाद भाषा की एक रचनात्मक प्रक्रिया है। आज जिस तरह से सारी दुनिया एक दूसरे के समीप आ रही है उसमें अनुवाद का महत्व बढ़ता जा रहा है। एक दूसरे की संस्कृति, इतिहास, भाषा और साहित्य से परिचित होने के लिए अनुवाद की आवश्यकता पड़ती है। भूमंडलीकरण की प्रक्रिया आरम्भ होने के बाद तो दुनिया के कई सारे देश एक दूसरे के साथ बड़े पैमाने पर व्यापारिक सम्बन्ध बना रहे हैं, जिसके लिए एक दूसरे की भाषा,

टिप्पणी

सांस्कृतिक परम्पराओं आदि को जानने–समझने के लिए भी अनुवाद ही सबसे सशक्त माध्यम बन कर उभरा है।

अनुवाद एक उद्देश्यपूर्ण सांस्कृतिक कर्म है। जिसमें 'मूल–भाषा' या 'स्रोत–भाषा' में निहित अर्थ, विचार और शैली को यथा सम्भव सहज और सरल रूप में लक्ष्य–भाषा की प्रकृति व शैली के अनुसार परिवर्तित किया जाता है।

वर्तमान में वैश्विक स्तर पर अनुवाद की आवश्यकता बहुत बढ़ गयी है। इसलिए अनुवाद का क्षेत्र भी विस्तृत होता जा रहा है। आज लगभग प्रत्येक क्षेत्र में जानकारियों, सूचनाओं के आदान–प्रदान, शिक्षा और ज्ञान के प्रचार–प्रसार के लिए अनुवाद का प्रयोग हो रहा है।

वैश्विक स्तर पर एक देश दूसरे देश से अपने आर्थिक, व्यावसायिक एवं कूटनीतिक सम्बन्धों को मजबूत करने के लिए दूतावासों की स्थापना एवं राजदूतों की नियुक्ति करते हैं। इन दूतावासों में सारे काम–काज अनुवाद के ही माध्यम से होते हैं। अनुवाद के द्वारा ही एक देश अपने विचारों एवं नीतियों को दूसरे देश के समक्ष उसकी भाषा में रखता है। इस तरह अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और सहयोग में भी अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका है।

पाठधर्मी आयाम के अनुसार होने वाले अनुवाद में स्रोत–भाषा का मूल पाठ ही मुख्य होता है। इसका प्रयोग तकनीकी एवं सूचना प्रधान तथ्यों के अनुवाद में किया जाता है। प्रभावधर्मी आयाम के अन्तर्गत होने वाले अनुवाद में स्रोत–भाषा के पाठ के उस प्रभाव को दिखाया जाता है, जो पाठकों पर पड़ता है। इस तरह का अनुवाद कविता, उपन्यास, कहानी जैसी विधाओं में किया जाता है।

अनुवाद एक जटिल प्रक्रिया है। क्योंकि एक भाषा के पाठ में निहित अर्थ एवं विचार को दूसरी भाषा के पाठ में प्रामाणिक रूप से व्यक्त करना होता है। चूंकि भाषाओं की प्रकृति, संरचना, संस्कृति आदि में भिन्नता होती है, इसलिए एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद के लिए अनुवादक को दोनों भाषाओं का ज्ञाता, विशेषज्ञ होना चाहिए। साथ ही उसे दोनों भाषाओं की प्रकृति, संरचना, व्याकरण, शब्द संपदा, संस्कृति से पूर्ण परिचित होना चाहिए। इसी तरह अच्छे अनुवाद से भी कुछ अपेक्षाएं होती हैं, उन्हीं को अनुवाद के गुण भी कहते हैं।

अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करते समय सबसे पहले मूल पाठ के भाव को समझना चाहिए। तदुपरान्त कठिन शब्दावलियों की सूची तैयार कर सन्दर्भानुसार लक्ष्य भाषा में उसके पर्याय चुनना चाहिए। उल्लेखनीय बात यह है कि चुने गये पर्याय विषय के सन्दर्भानुसार हो, जिससे कि मूल पाठ के अर्थ–सन्दर्भ की रक्षा हो सके। अनुवाद में मूल–पाठ के विचार को यथा संभव लक्ष्य–भाषा में प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाना चाहिए। अनुवाद की प्रकृति मूल–पाठ के विषय से संबंधित होती है। साहित्य, कार्यालय की भाषा और विधि से संबंधित विषयों के अनुवाद के लिए उन विषयों की ही शब्दावली का प्रयोग किया जाता है।

प्रयोजनमूलक हिन्दी के तीन प्रमुख तत्व हैं। पहला–पारिभाषिक शब्दावली, दूसरा–अनुवाद और तीसरा–भाषिक संरचना। भाषा–बोध और सम्प्रेषण की प्रक्रिया में इन

टिप्पणी

तीनों तत्वों का विशेष महत्व है। किन्तु पारिभाषिक शब्दावली की उपयोगिता एक समान भाषा–व्यवस्था के लिए अपरिहार्य है। इसीलिए भारत में स्वतंत्रता के बाद से ही भाषा वैज्ञानिकों, लेखकों ने संस्थानिक स्तर पर पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण के लिए कोशिश करना आरम्भ कर दिया था। स्वतंत्रता के पूर्व भी इस विषय पर विचार हुए थे। पारिभाषिक शब्दावली की आवश्यकता के पीछे विभिन्न भाषाओं में होने वाले वैज्ञानिक आविष्कार, दार्शनिक अवधारणों और आधुनिक संकल्पनाओं आदि को अपनी भाषा में लाना था। जिसके लिए उपयुक्त शब्दावली की आवश्यकता महसूस की जा रही थी।

पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग ज्ञान के किसी भी क्षेत्र के लिए विशिष्ट किन्तु निश्चित अर्थ में किया जा सकता है। पारिभाषिक शब्द परिभाषित होते हैं। पारिभाषिक शब्दावली को समझने से पहले हमें शब्द के बारे में जान लेना चाहिए।

पारिभाषिक शब्द को अंग्रेजी में 'टेक्निकल टर्म' (Technical Term) कहा जाता है। सामान्य अर्थ में विभिन्न शास्त्रों और वैज्ञानिक विषयों में एक सुनिश्चित अर्थ अभिव्यक्त करने वाले और उसी में संदर्भ परिभाषित किये जा सकने वाले शब्द 'पारिभाषिक शब्द' कहलाते हैं। दूसरे शब्दों में ज्ञान की किसी विशेष शाखा से सम्बन्ध रखनेवाली विशिष्ट शब्दावली 'पारिभाषिक शब्दावली' कहलाती है।

पारिभाषिक शब्दावली की महत्ता ज्ञान के क्षेत्र में बढ़ती ही जा रही है। वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास के साथ–साथ दैनिक जीवन में नई–नई वस्तुएं, विचार, भावनाएं तथा धारणाओं का तेजी से प्रयोग हो रहा है। जिसको पारम्परिक भाषा और उसकी शब्दावली में व्यक्त करना कठिन होता जाता है। इसलिए ज्ञान–विशेष के किसी भी क्षेत्र में हो रहे विकास और परिवर्तन के कारण नई शब्दावली का निर्माण आवश्यक हो जाता है।

किसी भी भाषा में समुचित पारिभाषिक शब्दावली की विद्यमानता उस भाषाभाषी वर्ग के बौद्धिक उत्कर्ष एवं सम्पन्नता की परिचायक होती है और उसका अभाव बौद्धिक दरिद्रता का। सचमुच समर्थ राष्ट्र की भाषा में पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण तथा विकास की प्रक्रिया निरन्तर जारी रहनी चाहिए।' अतः यह स्पष्ट है कि पारिभाषिक शब्दावली के बिना कोई भाषा स्वयं को आधुनिक प्रगति के अनुकूल तथा समृद्ध नहीं बना सकती।

5.5 मुख्य शब्दावली

- **दायरा** : क्षेत्र, सीमा।
- **परिवर्तित** : बदला हुआ।
- **दोभाषिया** : अनुवादक।
- **आशय** : अर्थ।
- **समकक्ष** : समान।
- **निर्वाह** : गुजर–बसर।
- **ध्यातव्य** : ध्यान रखने योग्य
- **शोध** : खोज।

टिप्पणी

- **प्रतीक** : चिह्न।
- **सटीक** : टीका सहित।
- **लक्ष्य** : उद्देश्य।
- **खरा** : सच्चा।
- **परजीवी** : दूसरे पर आश्रित।

5.6 'अपनी प्रगति जांचिए' के उत्तर

1. दो भागों में– (क) भाषान्तरण संदर्भ (सीमित स्वरूप), (ख) प्रतीकान्तरण संदर्भ (व्यापक स्वरूप)
2. वार्तानुवाद
3. (क) सही, (ख) गलत
4. दो वर्गों में– अपूर्ण और पूर्ण पारिभाषिक शब्द
5. तीन– पारिभाषिक शब्दावली, अनुवाद एवं भाषिक संरचना
6. (क) सही, (ख) गलत

5.7 अभ्यास हेतु प्रश्न

लघु–उत्तरीय प्रश्न

1. अनुवाद की क्या परिभाषा है? स्पष्ट कीजिए।
2. अनुवाद की प्रक्रिया को समझाइए।
3. पारिभाषिक शब्दावली को परिभाषित कीजिए।
4. अनुवाद के गुणों का वर्णन कीजिए।
5. पारिभाषिक शब्दावली की विशेषताएं बताइए।

दीर्घ–उत्तरीय प्रश्न

1. अनुवाद के अर्थ एवं स्वरूप को स्पष्ट करते हुए अनुवाद की व्याख्या कीजिए।
2. अनुवाद के प्रकारों एवं क्षेत्रों का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।
3. अनुवाद एवं पारिभाषिक शब्दावली का तुलनात्मक विश्लेषण कीजिए।
4. पारिभाषिक शब्दावली का अर्थ स्पष्ट करते हुए पारिभाषिक शब्दावली की विशेषताएं बताइए।
5. पारिभाषिक शब्दों को प्रयोग की दृष्टि से किन वर्गों में बांटा जा सकता है? स्पष्ट कीजिए।

टिप्पणी

5.8 आप ये भी पढ़ सकते हैं

- डॉ. भोलानाथ तिवारी, *अनुवाद विज्ञान।*
- छबिल कुमार मेहेर, *अनुवाद : प्रक्रिया एवं प्रयोग।*
- विनोद गोदरे, *प्रयोजनमूलक हिन्दी,* पेपरबैक संस्करण।
- विनोद कुमार प्रसाद, *भाषा और प्रौद्योगिकी,* वाणी, नई दिल्ली।
- प्रेमचंद पातंजलि, *व्यावसायिक हिन्दी,* वाणी, नई दिल्ली।
- प्रेमचंद पातंजलि, *आधुनिक विज्ञापन,* नई दिल्ली।
- रविन्द्रनाथ श्रीवास्तव, *प्रयोजनमूलक हिन्दी,* केंद्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा।
- दंगल झाल्टे, *प्रयोजनामूलक हिन्दी, सिद्धांत और प्रयोग,* वाणी, नई दिल्ली।